भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली

सम्पादक

ओमप्रकाश सिंह

4

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल के प्रवर्तक के रूप में समादृत हैं। इनका जन्म इतिहास विख्यात सेठ अमीचन्द के घराने में हुआ था। भारत में अंगरेजों का साथ देने, पर लूट का माल न पाने के कारण अमीचन्द पागल होकर मरे थे। अमीचन्द के बेटे फतेहचन्द कलकत्ता से आकर काशी में बसे। इनके बेटे हर्षचन्द और हर्षचन्द के बेटे गोपालचन्द हुए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इन्हीं गोपालचन्द के बेटे थे।

इस अंगरेज भक्त परिवार में भारतेन्दु 'विष बेलि अमी फल लागि रही' की तरह थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन साहित्य की श्रीवृद्धि में झोंक दिया। आधुनिक साहित्य की समृद्धि में अद्वितीय योगदान के कारण ही इन्हें 'आधुनिक हिन्दी का जनक' कहा जाता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक तरफ तो अपने नाटकों, निबन्धों, लेखों, कविताओं, यात्रावृत्तान्तों, जीवनियों तथा इतिहास और पुरातत्त्व पर लिखी पुस्तक-पुस्तिकाओं के लिए प्रसिद्ध हैं तो दूसरी तरफ प्रारम्भिक हिन्दी पत्रकारिता के विकास में महत्त्वपूर्ण योग देने वाले पत्रकार-सम्पादक के रूप में स्मरणीय हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की सर्जनात्मक प्रतिभा से ही हिन्दी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता को नयी प्रेरणा तथा उचित दिशा-बोध प्राप्त हुआ।

भारतेन्दु साहित्य का अधिकांश भाग अब तक संकलित संगृहीत हो चुका है। यह जरूर है कि ये संकलन अब बाजार में मौजूद नहीं है। ब्रजरत्न दास द्वारा सम्पादित भारतेन्दु ग्रन्थावली अब आसानी से नहीं मिलती। पूरी ग्रन्थावली की योजना बनाकर शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' केवल पहला खंड ही सम्पादित कर सके थे। हेमन्त शर्मा द्वारा सम्पादित 'भारतेन्दु समग्र' बाजार में उपलब्ध है। भारतेन्दु की अनेक रचनाएं, टिप्पणियां, भूमिकाएं, पत्रों आदि का सम्पादन न होने के कारण अब यह सामग्री दुर्लभ हो गयी है। भारतेन्दु की पत्रिकाएं पुस्तकालयों में उपलब्ध नहीं हैं। अब स्थिति यह हो गयी है कि भारतेन्दु की अनेक रचनाएं प्राप्त होने वाली नहीं हैं। भारतेन्दु की सभी रचनाएं इस ग्रन्थावली में हैं, यह मेरा दावा नहीं है। हां, यह दावा जरूर है कि अब दो-एक रचनाएं और कुछ सम्पादकीय टिप्पणियां ही इस ग्रन्थावली से बाहर हैं।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की यह ग्रन्थावली छह खंडों में तैयार की गयी है। इसमें तमाम ऐसी रचनाएं और टिप्पणियां हैं, जो अब तक कहीं भी संकलित नहीं थीं। ग्रन्थावली में भारतेन्दु साहित्य को इस क्रम से रखा गया है कि अनेक आरोपों-प्रत्यारोपों का स्वतः जवाब मिल जाएगा।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली-4

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली-4

[प्रेमअर्पण, राजभक्ति तथा अन्य विषयों की कविताएं]

सम्पादक

ओमप्रकाश सिंह

प्रकाशन संस्थान

नयी दिल्ली-110002

प्रकाशक
प्रकाशन संस्थान
4715/21, दयानन्द मार्ग, दरियागंज
नयी दिल्ली-110 002

मूल्य : 4800.00 रुपये (छह खंड)
प्रथम संस्करण : सन् 2008
ISBN 81-7714-312-3
आवरण : जगमोहन सिंह रावत

शब्द-संयोजन : कम्प्यूटेक सिस्टम, दिल्ली-110032
मुद्रक : बी.के. ऑफसेट, दिल्ली-110032

इस खंड में

यह ग्रन्थावली का चौथा खंड है। तीसरे खंड में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की कुछ ऐसी कविताएं दी गई हैं जिनके केन्द्र में प्रेम है। हम जानते हैं कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने तरह-तरह की काफी कविताएं लिखी हैं। इन कविताओं का केन्द्रीय भाव भी अलग-अलग तरह का है। इसीलिए पिछले खंड का नाम 'प्रेमअर्पण की कविताएं' रखा गया है। इन कविताओं में व्यक्त प्रेम भी अलग-अलग तरह का है। कभी प्रेम का स्वरूप ईश्वरोन्मुखी और भक्तिभाव से पूर्ण है तो कभी लौकिक और शरीरी। कभी राधा-कृष्ण के माध्यम से कवि भक्ति में निमग्न होता है तो कभी उन्हें मानवीय प्रेम की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाता है। प्रेमअर्पण की ऐसी कविताएं पिछले खंड में सिमट नहीं पाईं। ऐसी कविताओं की संख्या ज्यादा तो है ही वे आकार में भी अन्य कविताओं से बड़ी हैं। आप देखेंगे कि इस खंड की शुरुआत भी ऐसी ही कविताओं से हुई है, इसीलिए इसका नाम 'प्रेमअर्पण, राजभक्ति तथा अन्य विषयों की कविताएं' रखा गया है।

राजभक्ति की भावना भारतेन्दु में कूट-कूटकर भरी हुई है। जहां कहीं भी मौका मिला है उसके इजहार में वे चूके नहीं हैं। यही कारण है कि भारतेन्दु की कविताओं में ऐसी कविताओं की संख्या अच्छी-खासी है। राजभक्ति सम्बन्धी उनकी समस्त कविताओं को यहां एक जगह कर दिया गया है। देशभक्ति से सम्बन्धित भारतेन्दु की कविताएं उनके नाटकों में आई हैं और वे वहां सुरक्षित हैं। उनकी स्वतन्त्र कविताओं में देशभक्ति के स्वर का संधान करने वाले अनुसंधित्सु को निराशा हाथ लगेगी। महारानी विक्टोरिया के परिवार में किसी को छींक भी आई है तो भारतेन्दु ने कविता लिखकर उसके स्वास्थ्य की कामना की है। यह बात अलग है कि छींक स्वाभाविक प्रक्रिया में आई है पर भारतेन्दु के लिए तो वह अवसर ही बनी है।

भारतेन्दु के समय में समस्यापूर्ति के रूप में खूब कविताएं लिखी गईं। किसी समस्यामूलक पंक्ति को कविता में बांधकर इस तरह प्रस्तुत कर देना कि सुनने वाला वाह-वाह कह उठे, ऐसी कविताओं का प्रधान उद्‌देश्य था। अनेक समस्यामूलक पंक्तियों को भारतेन्दु ने जिस कौशल के साथ क्षिप्रगति से कविता में बांधा था, आज

भी किस्से-कहानी के रूप में कहे-सुने जाते हैं। भारतेन्दु ने 'रसा' उपनाम से गजल विधा में न केवल जोर आजमाया था वरन सफलता भी प्राप्त की थी। इसी तरह उन्होंने संस्कृत, खड़ी बोली, हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी कविता की थीं। भारतेन्दु की ऐसी अनेक कविताएं संगृहीत हो चुकी हैं पर आप देखेंगे कि यहां उनकी कुछ ऐसी कविताएं भी दी गई हैं जो अब तक भारतेन्दु के संकलनों में नहीं मिलतीं। बसन्त, बर्सात तथा भारतीय भाषा की अन्य कविताएं ऐसी ही कविताएं हैं। यही स्थिति उनके कुछ पदों की भी है।

आप देखेंगे कि इस खंड की सभी कविताओं का मूल स्रोत और रचनाकाल यथास्थान दे दिया गया है। साथ ही साथ पाठ सम्बन्धी त्रुटियों (जो पहले से मौजूद थीं) को भी ठीक करने की हर संभव कोशिश की गई है। यद्यपि यह कार्य श्रमसाध्य था पर यह प्रयास किया गया है कि हर रचना को उसकी उपलब्ध प्राचीन प्रति से मिला दिया जाय। प्राचीन प्रतियों को ढूंढ़ने में कठिनाई तो जरूर हुई पर पाठ के शोधित हो जाने से खुशी भी मिली। इति ॥

–ओमप्रकाश सिंह

अनुक्रम

प्रेमअर्पण की कविताएं

राजभक्ति की कविताएं

अन्य कविताएं

भारतीय भाषा की अन्य कविताएं

प्रेमअर्पण की कविताएं

श्रीनाथ स्तुति

छप्पय

जय जय नन्दानन्द करन बृषभानु मान्यतर।
जयति यशोदा सुअन कीर्त्तिदा कीर्त्तिदानकर॥
जय श्री राधा प्राण नाथ प्रणतारति भंजन।
जय बृन्दाबन चन्द्र चन्द्रवदनी मनरंजन॥
जय गोपति गोपपति गोपीपति गोकुल शरण।
जय कष्ट हरण करुनाभरण जय श्री गोवर्द्धन धरण ॥1॥

जय जय बकी बिनाशन अघ बक बदन विदारण।
जय बृन्दाबन सोम व्योम तमतोम निवारण॥
जयति भक्त अवलम्ब प्रलम्ब प्रलम्ब बिनासन।
जय कालिय फन प्रति अति द्रुत गति नृत्य प्रकाशन॥
श्रीदाम सखा घनश्याम बपु वाम काम पूरन करण।
जय ब्रह्मधाम अभिराम रामानुज श्रीगिरिवर धरण ॥2॥

जयति वल्लभी बल्लभ बल्लभ बल्लभ बल्लभ।
जय पल्लवदुति अधर भल्ल बरजित कटाक्ष प्रभ॥
उर कृत मल्ली माल जयति ब्रज पल्ली भूषन।
ब्रजतरु बल्ली कुंज रचित हल्लीश मुदित मन॥
जय दुष्ट काल बनमाल गर भक्तपाल गजचाल चय।
कृत ताल नृत्य उत्ताल गति गोप पाल नन्दलाल जय॥3॥

जय धृतवरहापीढ़ कुवलयापीड़ पीड़कर।
चूर करन चानूर मुष्टिबल मुष्टि दर्पदर॥

जयति कंस विध्वंस करन बिधु वंस अंसधर।
परम हंस प्रिय अति प्रशंस अवतंस लसित वर॥
जय अनिर्वाच्य निर्वाणप्रद नित अर्वाच्यहु प्राच्यतर।
दुर्वारार्बुदकर्बुरदलन श्रुति निर्वादित ब्रह्म वर॥4॥

जयति पार्वती पूज्य पूज्य पतिपर्व दत्त सुख।
पांडवगुर्वीत्रातोर्वीपति सर्वरीश मुख॥
हतसुपर्व्व वृषपर्वादिकबर्बर दर्वी हुत।
जय अथर्वनुत गान्धर्वीयुत गन्धर्व स्तुत॥
दुर्वासाभाषित सर्वपति अर्ब खर्ब जन उद्धरण।
जय शक्रगर्वकृत खर्व पर्वत पूजित पर्वतधरण॥5॥

जय नर्तनप्रिय जय आनर्त्त नृपति तनया पति।
तृनावर्त्तहर कृपावर्त्त जय जयति आर्तगति॥
कार्तस्वर भूषण भूषित जय धार्तराष्ट्र दर।
स्मार्तवृन्द पूजित जय कार्त्तिक पूज्य पूज्य तर॥
जंय वर्हविराजित सीसवर गर्हदीनजन उद्धरण।
जय अर्ह अहर्निशिदुखदरण जय श्रीगोवर्द्धनधरण॥6॥

दोहा

यह खट् सुन्दर खटपदी सुमिरि पिया नन्दनन्द।
हरिपद पंकज खटपदी बिरची श्री 'हरीचन्द'॥

[रचनाकाल सन 1877 ई.]

भक्त सर्वस्व

अर्थात

श्रीचरणचिन्ह वर्णन

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः

(मेडिकल हाल के छापेखाने में 1870 में छपा)

प्रस्तावना

इस छोटे से ग्रन्थ में श्रीयुगल स्वरूप के श्रीचरण के अगाध चिन्हों के मति अनुसार कुछ भाव लिखे हैं। यद्यपि इसकी कविता काव्य के सब गुणों से (सत्य ही) हीन है, तथापि इसका मुझे शोच नहीं है, क्यौंकि यह ग्रन्थ मैंने अपनी कविता प्रगट करने और कवियों को प्रसन्न करने को नहीं लिखा है, केवल (अपनी) वाणी पवित्र करने और प्रेम रंग में रंगे हुए वैष्णवों के आनन्द के हेतु लिखा है।

इस में श्री भागवत के अनुसार बहुत से भाव लिखे हैं, इस कारण से भी भागवत जाननेवालों को इसका स्वाद विशेष मिलेगा।

अनुप्रासों की संकीर्णता से इस में पुनरुक्ति बहुत है, जिसको रसिक लोग (भगवन्नामांकित जान कर) क्षमा करैंगे। मैं आशा करता हूं कि जो रसिक भगवदीय जन इसको पाठ करैं, वह मेरे (इस) बाल चापल्य को क्षमा करैं और (जहां तक हो सके) इस पुस्तक को कुरसिकों से बचावैं और अनुग्रहपूर्वक सर्व्वदा मुझ से दीन को (अपना दास जान कर) स्मरण रक्खें।

श्रीहरिश्चन्द्र

भक्त सर्वस्व

अथ चरण चिन्ह वर्णंन

दोहा

जयति जयति श्री राधिका चरण जुगल करि नेम।
जाकी छटा प्रकास तें पावत पामर प्रेम ॥1॥
जयति जयति तैलंग कुल रत्नद्वीप द्विजराज।
श्री बल्लभ जग अघ हरन तारन पतित समाज ॥2॥
नमो नमो श्री हरि चरण शिव मन मन्दिर रूप।
वास हमारे उर करौ जानि पर्‍यौ भव कूप॥3॥
प्रगटित जसुमति सीप तें मधि ब्रज रतनागार।
जयति अलौकिक मुक्त मणि ब्रज तिय को शृंगार ॥4॥
दक्षिन दिसि चन्द्रावली श्री राधा दिसि वाम।
तिन के मधि नट रूप धर जै जै श्री घनश्याम ॥5॥
हरि मन कुमुद प्रमोद कर ब्रज प्रकासिनी वाम।
जयति कापिसा चन्द्रिका राधा जाको नाम ॥6॥
चन्द्रभानु नृप नन्दिनी चन्द्राननि सुकुवांरि।
कृष्णचन्द्र मनहारिनी जय चन्द्रावलि नारि ॥7॥
जै जै ब्रज जुवती सबै जिन सम जग नहिं कोइ।
मगन भईं हरि रूप मैं लोक लाज भय खोइ ॥8॥
जसुदा लालित ललनवर कीरति प्रान अधार।
श्याम गौर द्वै रूप धर जै जै नन्द कुमार ॥9॥
जै जै श्री वल्लभ विमल तैलंग कुल द्विजराज।
भुव प्रगटित आनन्दमय विष्णु स्वामि पथ काज ॥10॥
तम पाखंडहि हरत करि जन मन जलज विकास।
जयति अलौकिक रवि कोऊ श्रुति पथ करन प्रकास ॥11॥
मायावाद मतंग मद हरत गरजि हरि नाम।
जयति कोऊ सो केसरी बृन्दाबन बन धाम ॥12॥

गोपीनाथ अनाथ गति जग गुरु विट्ठलनाथ।
जयति जुगल वल्लभ तनुज गावत श्रुति गुन गाथ ॥13॥
श्री गिरिधर गोविन्द पुनि बालकृष्ण सुख धाम।
गोकुलपति रघुपति जयति जदुपति श्री घनश्याम ॥14॥
जै जै श्री शुकदेव जिन समुझि सकल श्रुति पन्थ।
हम से कलिमल ग्रसित हित कह्यौ भागवत ग्रन्थ ॥15॥
बन्दौं पितु पद जुग जलज हरन हृदय तम घोर।
सकल नेह भाजन बिमल मंगलकरन अथोर ॥16॥
कविजन उडुगन मोद कर पूरन परम अमन्द।
सुत हिय कुमुद अनन्द भर जयति अपूरब चन्द ॥17॥
जुगल चरन जग तम हरन भक्तन जीवन प्रान।
बरनत तिन के चिन्ह के भाव अनेक बिधान ॥18॥
बरनन श्री हरिराय किय तिनको आयस पाइ।
चरन चिन्ह हरिचन्द कछु कहत प्रेम सों गाइ ॥19॥
भक्तन को सर्वस्व लखि बरनन या थल कीन।
प्रेम सहित अवलोकिहैं जे जन रसिक प्रबीन ॥20॥
कहं हरि चरन अगाध अति कहं मोरी मति थोर।
तदपि कृपा बल लहि कहत छमिय ढिठाई मोर ॥21॥

छप्पय

स्वस्तिक स्यंदन संख सक्ति सिंहासन सुन्दर।
अंकुस ऊरध रेख अब्ज अठकोन अमलतर॥
बाजी बारन बेनु बारिचर बज्र बिमलवर।
कुन्त कुमुद कलधौत कुम्भ कोदंड कलाधर॥
असि गदा छत्र नवकोन जव तिल त्रिकोन तरु तीर गृह।
हरिचरन चिन्ह बत्तिस लखे अग्निकुंड अहि सैल सह ॥1॥

स्वस्तिक चिन्ह भाव वर्णन

दोहा

जे निज उर मैं पद धरत असुभ तिन्हैं कहुं नाहिं।
या हित स्वस्तिक चिन्ह प्रभु धारत निज पद माहिं ॥1॥

रथ को चिन्ह वर्णन

निज भक्तन के हेतु जिन सारथिपन हूं कीन।
प्रगटित दीन दयालुता रथ को चिन्ह नवीन ॥1॥
माया को रन जय करन बैठहु यापैं आइ।
यह दरसावन हेत रथ चिन्ह चरन दरसाइ॥2॥

शंख चिन्ह के भाव वर्णन

भक्तन की जय सर्वदा यह दरसावन हेतु।
शंख चिन्ह निज चरन मैं धारत भव जल सेतु ॥1॥
परम अभय पद पाइहौ याकी सरनन आइ।
मनहुं चरण यह कहत है शंख बजाइ सुनाइ ॥2॥
जग पावनि गंगा प्रगट याही सों इहि हेत।
चिन्ह सुजल के तत्व को धारत रमा निकेत ॥3॥

शक्ति चिन्ह भाव वर्णन

बिना मोल की दासिका शक्ति स्वतन्त्रता नाहिं।
शक्तिमान हरि, याहि तें शक्ति चिन्ह पद मांहि ॥1॥
भक्तन के दुख दलन की बिधि की लीक मिटाइ।
परम शक्ति यामें अहै सोई चिन्ह लखाइ ॥2॥

सिंहासन चिन्ह भाव वर्णन

श्री गोपीजन के सुमन यापैं करैं निवास।
या हित सिंहासन धरत हरि निज चरनन पास ॥1॥
जो आवै याकी शरण सो जग राजा होइ।
या हित सिंहासन सुभग चिन्ह रह्यो दुख खोइ ॥2॥

अंकुस चिन्ह भाव वर्णन

मन मतंग निज जनन के नेकु न इत उत जाहिं।
एहि हित अंकुस धरत हरि निजपद कमलन मांहि ॥1॥
याको सेवक चतुरतर गननायक सम होइ।
या हित अंकुस चिन्ह हरि चरन न सोहत सोइ ॥2॥

ऊरध रेखा चिन्ह भाव वर्णन

कबहुं न तिनकी अधोगति जे सेवत पद पद्म।
ऊरध रेखा चिन्ह पद येहि हित कीनो सद्म ॥1॥
ऊरधरेता जे भए ते या पद कों सेइ।
ऊरध रेखा चिन्ह यों प्रगट दिखाई देइ ॥2॥
यातें ऊरध और कछु ब्रह्म अंड मैं नाहिं।
ऊरध रेखा चिन्ह है या हित हरि-पद माहिं ॥3॥

कमल के चिन्ह को भाव वर्णन

सजल नयन अरु हृदय मैं यह पद रहिबे जोग।
या हित रेखा कमल की करत कृष्ण-पद भोग ॥1॥
श्री लक्ष्मी को वास है याही चरनन तीर।
या हित रेखा कमल की धारत पद बलबीर ॥2॥
बिधि सों जग, बिधि कमल सों, सो हरि सों प्रगटाइ।
राधावर पद कमल मैं या हित कमल लखाइ ॥3॥
फूलत सात्विक दिन लखे सकुचत लखि तम रात।
या हित श्री गोपाल पद जलज चिन्ह दरसात ॥4॥
श्री गोपीजन मन भ्रमर के ठहरन की ठौर।
या हित जल सुत चिन्ह श्री हरिपद जन सिरमौर ॥5॥
बढ़त प्रेम जल के बढ़े घटे नाहिं घटि जात।
यह दयालुता प्रगट करि पंकज चिन्ह लखात ॥6॥
काठ ज्ञान वैराग्य मैं बंध्यो बेधि उड़ि जात।
याहि न बेधत मन भ्रमर या हित कमल लखात ॥7॥

अष्टकोण के चिन्ह को भाव वर्णन

आठो दिसि भूलोक कौ राज न दुर्लभ ताहि।
अष्टकोन को चिन्ह यह कहत जु सेवै याहि ॥1॥
अनायास ही देत है अष्ट सिद्धि सुख धाम।
अष्टकोन को चिन्ह पद धारत येहि हित स्याम ॥2॥

घोड़ा के चिन्ह को भाव वर्णन

हयमेधादिक जग्य के हम ही हैं इक देव।
अश्व चिन्ह पद धरत हरि प्रगट करन यह भेव ॥1॥

याही सों अवतार सब हयग्रीवादिक देख।
अवतारी हरि के चरन याही तें हय रेख ॥2॥
बैरहु जे हरि सों करहिं पावहिं पद निर्वान।
या हित केशी दमन पद हय को चिन्ह महान ॥3॥

हाथी के चिन्ह को भाव वर्णन

जाहि उधारत आपु हरि राखत तेहि पद पास।
या हित गज को चिन्ह पद धारत रमा निवास ॥1॥
सब को पद गज चरन मैं* सो गज हरि पग मांहिं।
यह महत्व सूचन करत गज के चिन्ह देखाहिं ॥2॥
सब कवि कविता मैं कहत गजगति राधानाथ।
ताहि प्रगट जग मैं करन धर्यो चिन्ह गज साथ ॥3॥

वेणु के चिन्ह को भाव वर्णन

सुर नर मुनि नरनाह के वंस यहीं सों होत।
या हित बंसी चिन्ह हरि पद में प्रगट उदोत ॥1॥
गांठ नहीं जिनके हृदय ते या पद के जोग।
या हित बंसी चिन्ह पद जानहु सेवक लोग ॥2॥
जे जन हरि गुन गावहीं राखत तिनको पास।
या हित बंसी चिन्ह हरि पद मैं करत निवास ॥3॥
प्रेम भाव सों जे बिंधे छेद करेजे माहिं।
तेई या पद मैं बसैं आइ सकै कोउ नाहिं ॥4॥
मनहुं घोर तप करति है बंसी हरि पद पास।
गोपी सह त्रैलोक के जीतन की धरि आस ॥5॥
श्री गोपिन की सौति लखि पद तर दीनी डारि।
यातैं बंसी चिन्ह निज पद मैं धरत मुरारि ॥6॥
आईं केवल ब्रज बधू क्यों नहिं सब सुर नारि।
या हित कोपित होइ हरि दीनी पट तर डारि ॥7॥
मन चोर्‌यो बहु त्रियन को पुन श्रवनन मग पैठि।
ता प्राछित को तप करत मनु हरि पद सर बैठि ॥8॥
वेणु सरिस हू पातकी शरण गए रखि लेत।
वेणु धरन के कमल पद वेणु चिन्ह यहि हेत॥9॥

---

* सर्वे पदाः हस्तिपदे निमग्नाः।

मीन चिन्ह को भाव वर्णन

अति चंचल बहु ध्यान सों आवत हृदय मंझार।
या हित चिन्ह सुमीन को हरि पद मैं निरधार ॥1॥
जब लौं हिय में सजलता तब लौं याको वास।
सुष्क भए पुनि नहिं रहत झष यह करत प्रकास॥2॥
जाके देखत ही बढ़ै ब्रज तिय मन मैं काम।
रति पति ध्वज को चिन्ह पद यातें धारत स्याम ॥3॥
हरि मनमथ कौं जीति कै ध्वज राख्यौ पद लाइ।
यातें रेखा मीन की हरि पद मैं दरसाइ ॥4॥
महा प्रलय मैं मीन वनि जिमि मनु रक्षा कीन।
तिमि भवसागर को चरन या हित रेखा मीन ॥5॥

बज्र के चिन्ह को भाव वर्णन

चरण परस नित जे करत इन्द्र तुल्य ते होत।
बज्र चिन्ह हरि पद कमल येहि हित करत उदोत॥1॥
पर्वत से निज जनन के पापहिं काटन काज।
बज्र चिन्ह पद मैं धरत कृष्णचन्द्र महराज ॥2॥
बज्रनाभ यासों प्रगट जादव सेस लखाहिं।
थापन हित निज वंश भुवि बज्र चिन्ह पद माहिं ॥3॥

बरछी के चिन्ह को भाव वर्णन

मनु हरिहू अघ सों डरत मति कहुं आवै पास।
या हित बरछी धारि पग करत दूर सों नास ॥1॥

कुमुद के फूल के चिन्ह को भाव वर्णन

श्री राधा मुखचन्द्र लखि अति अनन्द श्रीगात।
कुमुद चिन्ह श्रीकृष्ण पद या हित प्रगट लखात ॥1॥
सीतल निसि लखि फूलई तेज दिवस लखि बन्द।
यह सुभाव प्रगटित करत कुमुद चरण नन्दनन्द॥2॥

सोने के पूर्ण कुम्भ के चिन्ह को भाव वर्णन

नीरस यामैं नहिं बसैं बसैं जे रस भरपूर।
पूर्णकुम्भ को चिन्ह मनु या हित धारत सूर ॥1॥

गोपीजन बिरहागि पुनि निज जन के त्रयताप।
मेटन के हित चरन मैं कुम्भ धरत हरि आप ॥2॥
सुरसरि श्री हरि चरन सों प्रगटी परम पवित्र।
या हित पूरन कुम्भ को धारत चिन्ह विचित्र ॥3॥
कबहुं अमंगल होत नहिं नित मंगल सुख साज।
निज भक्तन के हेत पद कुम्भ धरत ब्रजराज ॥4॥
श्री गोपीजन वाक्य के पूरन करिबे हेत।
सुकुच कुम्भ को चिन्ह पग धारत रमानिकेत* ॥5॥

धनुष के चिन्ह को भाव वर्णन

इहां स्तब्ध नहिं आवहीं आवहिं जे नइ जाहिं।
धनुष चिन्ह एहि हेतु है कृष्ण चरन के माहिं ॥1॥
जुरत प्रेम के घन जहां दृग बरसा बरसात।
मन सन्ध्या फूलत जहां तहं यह धनुष लखात॥2॥

चन्द्रमा के चिन्ह को भाव वर्णन

श्री शिव सों निज चरण सों प्रकट करन हित हेत।
चन्द्र-चिन्ह हरि पद बसत निज जन कों सुख देत ॥1॥
जे या चरनहिं सिर धरें ते नर रुद्र समान।
चन्द्र चिन्ह यहि हेतु निज पद राखत भगवान ॥2॥
निज जन पै बरखत सुधा हरत सकल त्रयताप।
चन्द्र चिन्ह येहि हेतु हरि धारत निज पद आप ॥3॥
भक्त जनन के मन सदा यामैं करत निवास।
यातें मन को देवता चन्द्र चिन्ह हरि पास॥4॥
बहु तारन को एक पति जिमि ससि तिमि ब्रजनाथ।
दक्षिनता प्रगटित करन चन्द्र चिन्ह पद साथ ॥5॥
जाकी छटा प्रकाश तें हरत हृदय तम घोर।
या हित ससि को चिन्ह पद धारत नन्दकिसोर॥6॥
निज भगिनी श्री देखि कै चन्द्र बस्यौं मनु आइ।
चन्द्र चिन्ह ब्रजचन्द्र पद यातें प्रगट लखाइ ॥7॥

तरवार के चिन्ह को भाव वर्णन

निज जन के अघ पसुन कों बधत सदा करि रोस।
एहि हित असि पग मैं धरत दूर दरत जन दोस॥1॥

---

* रमणनस्तनेष्वर्प्पयाधिहन।

गदा* के चिन्ह को भाव वर्णन

काम कलुख कुंजर कदन समरथ जो सब भांति।
गदा चिन्ह येहि हेतु हरि धरत चरन जुत क्रान्ति॥1॥
भक्त नाद मोहिं प्रिय अतिहि मन महं प्रगट करन्त।
गदा चिन्ह निज कमल पद धारत राधाकन्त ॥2॥

छत्र के चिन्ह को भाव वर्णन

भय दुख आतप सों तपे तिनको अति प्रिय एह।
छत्र चिन्ह येहि हेत पग धारत सांवल देह ॥1॥
ब्रज राख्यो सुर कोप तें भव जल तें निज दास।
छत्र चिन्ह पद मैं धरत या हित रमानिवास ॥2॥
याकी छाया में बसत महाराज सम होय।
छत्र चिन्ह श्रीकृष्ण पद यातें सोहत सोय ॥3॥

नवकोण चिन्ह को भाव वर्णन

नवो खंड पति होत हैं सेवत जे पद कंजु।
चिन्ह धरत नवकोन को या हित हरि पद मंजु ॥1॥
नवधा भक्ति प्रकार करि तब पावत येहि लोग।
या हित है नवकोन को चिन्ह चरन गत सोग ॥2॥
नव जोगेश्वर जगत तजि यामें करत निवास।
या हित चिन्ह सुकोन नव हरि पद करत प्रकास ॥3॥
नव ग्रह नहिं बाधा करत जो एहि सेवत नेक।
याही तें नवकोन को चिन्ह धरत सविवेक ॥4॥
अष्ट सखिन के संग श्री राधा करत निवास।
याही हित नवकोन को चिन्ह कृष्ण पद पास ॥5॥
यामैं नव रस रहत हैं यह अनन्द की खानि।
याही तें नवकोन को चिन्ह कृष्ण पद जानि ॥6॥
नव को नव गुन लगि गिनौ नवै अंक सब होत।
तातें रेखा कहत जग यामैं ओत न प्रोत ॥7॥

यव के चिन्ह को भाव वर्णन

जीवन जीवन के यहै अन्न एक तिमि येह।
या हित जब को चिन्ह पद धारत सांवल देह ॥1॥

---

* गदा का दूसरा अर्थ शब्द करनेवाली है।

तिल के चिन्ह को भाव वर्णन

याके शरण गए बिना पित्रन कौं गति नाहिं।
या हित तिल को चिन्ह हरि राखत निज पद मांहिं ॥1॥

त्रिकोण के चिन्ह को भाव वर्णन

स्वीया परकीया बहुरि गनिका तीनहु नारि।
सबके पति प्रगटित करत मनमथ मथन मुरारि ॥1॥
तीनहु गुन के भक्त कों यह उद्धरण समर्थ।
सम त्रिकोन को चिन्ह पद धारत याके अर्थ ॥2॥
ब्रह्मा हरि हर तीनि सुर याही ते प्रगटन्त।
या हित चिन्ह त्रिकोन को धारत राधाकन्त॥3॥
श्री भू लीला तीनहूं दासी याकी जान।
तातें चिन्ह त्रिकोन को पद धारत भगवान॥4॥
स्वर्ग भूमि पाताल मैं विक्रम ह्वै गए धाइ।
याहि जनावन हेत त्रय कोन चिन्ह दरसाइ ॥5॥
जो याकै शरनहि गए मिटे तीनहूं ताप।
या हित चिन्ह त्रिकोन को धरत हरत जो पाप ॥6॥
भक्ति ज्ञान वैराग हैं याके साधन तीन।
यातें चिन्ह त्रिकोन को कृष्ण चरन लखि लीन ॥7॥
त्रयी सांख्य आराधि कै पावत जोगी जौन।
सो पद है येहि हेत यह चिन्ह त्रिश्रुति को भौन ॥8॥
बृन्दाबन द्वारावती मधुपुर तजि नहिं जाहिं।
यातें चिन्ह त्रिकोन है कृष्ण चरन के मांहिं ॥9॥
का सुर का नर असुर का सब पैं दृष्टि समान।
एक भक्ति तें होत बस या हित रेखा जान ॥10॥
नित शिव जू वन्दन करत तिन नैननि की रेख।
या हित चिन्ह त्रिकोन को कृष्ण चरन मैं देख ॥11॥

वृक्ष के चिन्ह को भाव वर्णन

वृक्ष रूप सब जग अहै बीज रूप हरि आप।
यातें तरु को चिन्ह पग प्रगटत परम प्रताप ॥1॥
जे भव आतप सो तपे तिनहीं के सुख हेतु।
वृक्ष चिन्ह निज चरन मैं धारत खगपति केतु ॥2॥

जहं पग धरै निकुंजमय भूमि तहां की होय।
या हित तरु को चिन्ह पद पुरवत रस कों सोय ॥3॥
यहां कल्पतरु सों अधिक भक्त मनोरथ दान।
वृक्ष चिन्ह निज पद धरत यातें श्री भगवान॥4॥
श्री गोपीजन मन बिहंग इहां करैं विश्राम।
या हित तरु को चिन्ह पद धारत हैं घनश्याम॥5॥
केवल पर उपकार हित वृक्ष सरिस जग कौन।
तातें ताको चिन्ह पद धारत राधा रौन॥6॥
प्रेम नयन जल सों सिंचे सुद्ध चित्त के खेत।
बनमाली के चरन में वृक्ष चिन्ह येहि हेत॥7॥
पाहन मारेहु देत फल सोइ गुन यामैं जान।
वृक्ष चिन्ह श्रीकृष्ण पद पर उपकार प्रमान ॥8॥

बाण के चिन्ह को भाव वर्णन

सब कटाक्ष ब्रज जुबति के बसत एक ही ठौर।
सोई बान को चिन्ह है कारन नहिं कछु और ॥1॥

गृह के चिन्ह को भाव वर्णन

केवल जोगी पावहीं नहिं यामैं कछु नेम।
या हित गृह को चिन्ह जिहि गृही लहैं करि प्रेम॥1॥
मति डूबौ भव सिंधु मैं यामैं करौ निवास।
मानहु गृह को चिन्ह पद जनन बोलावत पास॥2॥
शिव जू के मन को मनहुं महल बनाए स्याम।
चिन्ह होय दरसत सोई हरि पद कंज ललाम॥3॥
गृही जानि मन बुद्धि को दम्पति निवसन हेत।
अपने पद कमलन दियो दयानिकेत निकेत॥4॥

अग्निकुंड के चिन्ह को भाव वर्णन

श्री वल्लभ हैं अनल वपु तहां सरन जे जात।
ते मम पद पावत सदा येहि हित कुंड लखात॥1॥
श्री गोपीजन को बिरह रह्यौ जौन श्री गात।
एक देस में सिमिट सोइ अग्निकुंड दरसात ॥2॥

मत तपि कै मम चरन मैं क्वथित धान सम होइ।
तब न और कछु जन चहै अग्निकुंड है सोइ ॥3॥
जग्य पुरुष तजि और को को सेवै मतिमन्द।
अग्निकुंड को चिन्ह येहि हित राख्यौ ब्रजचन्द॥4॥

सर्प चिन्ह को भाव वर्णन

निज पद चिन्हित तेहि कियो ताको निज पद राखि।
काली मर्दन चरन यह भक्त अनुग्रह साखि ॥1॥
नाग चिन्ह मत जानियो यह प्रभु पद के पास।
भक्तन के मन बांधिबे हित राखी अहि पास॥2॥
श्री राधा के बिरह मैं मति त्रि अनिल दुख देइ।
सर्प चिन्ह प्रभु सर्वदा राखत हैं पद सेइ॥3॥
याकी सरनन दीन जन सर्पहिं आवहु धाय।
सर्प चिन्ह एहि हेतु पद राखत श्री ब्रजराय॥4॥

सैल चिन्ह को भाव वर्णन

सत्य करन हरिदास वर श्री गिरिवर को नाम।
सैल चिन्ह निज चरन मैं राख्यो श्री घनस्याम ॥1॥
श्री राधा के बिरह में पग पग लगत पहार।
सैल चिन्ह निज चरन मैं राख्यौ यहै विचार॥2॥

श्रीगोपालतापिनी श्रुति के मत से चरण चिन्ह वर्णन

परम ब्रह्म के चरन मैं मुख्य चिन्ह ध्वज छत्र।
ऊरध अध अज लोक सों सोई द्वै पद अत्र ॥1॥
ध्वजा दण्ड सो मेरु है बन्यो स्वर्णमय सोय।
सूर्य्य चन्द्र की कान्ति जो ध्वज पताक सो होय ॥2॥
आत पत्र को चिन्ह जोइ ब्रह्मलोक सो जान।
येहि बिधि श्रुति निरनै करत चरन चिन्ह परमान ॥3॥
रथ बिनु अश्व लखात है मीन चिन्ह द्वै जान।
धनुष बिना परतंच को यह कोउ करत प्रमान ॥4॥

---

* सर्प का अर्थ शीघ्र है।

मिलि कै चिन्हन को भाव वर्णन

दो चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां हाथी के और अंकुश के चिन्ह को भाव वर्णन

काम करत सब आपु ही पुनि प्रेरकहू आप।
या हित अंकुश-हस्ति दोउ चिन्ह चरन गत पाप॥1॥

तिल और यव के चिन्ह को भाव वर्णन

देव काज अरु पितर दोउ याही सों सिधि होइ।
याके बिन कोउ गति नहीं येहि हित तिल यव दोइ ॥1॥
देव पितर दोउ रिनन सों मुक्त होत सो जीव।
जो या पद को सेवई सकल सुखन को सींव ॥2॥

कुमुद और कमल के चिन्ह को भाव वर्णन

राति दिवस दोउ सम अहै यह तौ स्वयं प्रकास।
या हित निसि दिन के दोऊ चिन्ह कृष्ण पद पास ॥1॥

तीनि चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां पर्वत, कमल और वृक्ष के चिन्ह को भाव वर्णन

श्री कालिन्दी कमल सों गिरि सों श्री गिरिराज।
श्री वृन्दाबन वृक्ष सों प्रगटत सह सुख साज ॥1॥
जहां जहां प्रभु पद धरत तहां तीन प्रगटन्त।
या हित तीनहु चिन्ह ए धारत राधाकन्त ॥2॥

त्रिकोन, नवकोन और अष्टकोन के चिन्ह को भाव वर्णन

तीन आठ नव मिलि सबै बीस अंक पद जान।
जीत्यौ बिस्वे बीस सोइ जो सेवत करि ध्यान ॥1॥

चारि चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां अमृत कुम्भ, धनु, वंशी और गृह के चिन्ह को भाव वर्णन

वैद्यक अमृत कुम्भ सों धनु सों धनु को वेद।
गान वेद वंशी प्रगट शिल्प वेद गृह भेद ॥1॥

रिग यजु साम अथर्व के ये चारहु उपवेद।
सो या पद सों प्रगट एहि हेतु चिन्ह गत खेद॥2॥

सर्प, कमल, अग्निकुंड और गदा के चिन्ह को भाव वर्णन

रामानुज मत सर्प सों शेष अचारज मानि।
निंबारक मत कमल सों रविहि पद्म प्रिय जानि॥1॥
विष्णुस्वामि मत कुंड सों श्रीवल्लभ वपु जान।
गदा चिन्ह सों माध्व मत आचारज हनुमान॥2॥
इन चारहु मत मैं रहे तिनहिं मिलें भगवन्त।
कुंड गदा अहि कमल येहि हित जानहु सब सन्त॥3॥

शक्ति, सर्प, बरछी, अंकुश को भाव वर्णन

सर्प चिन्ह श्री शम्भु को शक्ति सु गिरिजा भेस।
कुन्त कारतिक आपु है अंकुश अहै गणेस॥1॥
प्रिया पुत्र संग नित्य शिव चरन बसत हैं आप।
तिनके आयुध चिन्ह सब प्रगटित प्रबल प्रताप॥2॥

पांच चिन्हन को मिलि कै वर्णन

तहां गदा, सर्प, कमल, अंकुश शक्ति के चिन्ह को भाव वर्णन

गदा विष्णु को जानिए अहि शिव जू के साथ।
दिवसनाथ को कमल है अंकुश है गणनाथ॥1॥
शक्ति रूप तहं शक्ति है एई पांचौ देव।
चिन्ह रूप श्रीकृष्ण पद करत सदा शुभ सेव॥2॥
जिमि सब जल मिलि नदिन मैं अन्त समुद्र समात।
तिमि चाहौ जाकौ भजौ कृष्ण चरन सब जात॥3॥

छ चिन्हन को मिलि कै वर्णन

तहां छत्र, सिंहासन, रथ, घोड़ा, हाथी और धनुष के चिन्ह को भाव वर्णन

छत्र सिंहासन बाजि गज रथ धनु ए षट जान।
राज चिन्ह मैं मुख्य हैं करत राज पद दान॥1॥
जो या पद [illegible]
महाराज ति[illegible]

सात चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां वेणु, मत्स्य, चन्द्र, वृक्ष, कमल, कुमुद, गिरि के चिन्ह को भाव वर्णन

आवाहन हित वेणु झष काम बढ़ावन हेत।
चन्द्र बिरह बरधन करन तरु सुगन्धि रस देत॥1॥
कमल हृदय प्रफुलित करन कुमुद प्रेम दृष्टान्त।
गिरिवर सेवा करन हित धारत राधा कान्त॥2॥
राम बिलास सिंगार के ये उद्दीपन सात।
आलम्बन हरि संग ही राखत पद जलजात॥3॥

आठ चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां बज्र, अग्निकुंड, तिल, तलवार, मच्छ, गदा, अष्टकोण और सर्प को भाव वर्णन

बज्र इन्द्र बपु, अनल है अग्निकुंड बपु आप।
जम तिल बपु, तरवार बपु नैरित प्रगट प्रताप॥1॥
वरुन मच्छ बपु, गदा बपु वायु जानि पुनि लेहु।
अष्टकोन बपु धनद है, अहि इसान कहि देहु॥2॥
आयुध बाहन सिद्धि झष आदिक को सम्बन्ध।
इन चिन्हन सों देव सों जानहु करि मन संध॥3॥
सोइ आठो दिगपाल मनु सेवत हरि पद आइ।
अथवा दिगपति होइ जो रहै चरन सिरु नाइ॥4॥

पुनः

अंकुश, बरछी, शक्ति, पवि, गदा, धनुष, असि तीर।
आठ शस्त्र को चिन्ह यह धारत पद बलबीर॥1॥
आठहु दिसि सों जनन की मनु इच्छा के हेत।
निज पद में ये शस्त्र सब धारत रमा निकेत॥2॥

नव चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां बेनु, चन्द्र, पर्वत, रथ, अग्नि, बज्र, मीन, गज, स्वस्तिक चिन्ह को भाव वर्णन

बेनु चन्द्र गिरि रथ अनल बज्र मीन गज रेख।
आठौ रस प्रगटत सदा नवम स्वस्ति कह देख॥1॥

बेनु प्रगट शृंगार रस जो बिहार को मूल।
चरन कमल मैं चन्द्रमा यह अद्भुत गत सूल ॥2॥
कोमल पद कहं गिरि प्रगट यहै हास्य की बात।
रन उद्यम आगे रहै रथ रस बीर लखात॥3॥
निसिचर तूलहि दहन हित अग्निकुंड भय रूप।
रौद्र सर्प को चिन्ह है दुष्टन काल सरूप ॥4॥
गज करुणा रस रूप है जिन अति करी पुकार।
मीन चिन्ह बीभत्स है बंगाली व्यवहार॥5॥
नाटक के ये आठ रस आठ चिन्ह सों होत।
स्वस्तिक सो पुनि शान्त को रस नित करत उदोत॥6॥
कर पद मुख आनन्दमय प्रभु सब रस की खान।
ताते नव रस चिन्ह यह धारत पद भगवान॥7॥

दस चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां वेणु, शंख, गज, कमल, यव, रथ, गिरि, गदा, वृक्ष, मीन को भाव वर्णन

बेनु बढ़ावत श्रवन को, शंख सुकीर्तन जान।
गज सुमिरन को कमल पद, पूजन कमल बखान ॥1॥
भोग रूप यव अरचनहि, बन्दन गिरि गिरिराज।
गदा दास्य हनुमान को, सख्य सारथी साज ॥2॥
तरु तन मन अरपन सबै, प्रेम लक्षना मीन।
दस बिधि उद्दीपन करहिं भक्ति चिन्ह सत तीन ॥3॥

मत्स्य, अमृत कुम्भ, पर्वत, वज्र, छत्र, धनुष, बान, वेणु, अग्निकुंड और तरवार के चिन्ह को एक मैं वर्णन

प्रगट मत्स्य के चिन्ह सों विष्णु मत्स्य अवतार।
अमृत कुम्भ सों कच्छ है भयो जो मथती बार॥1॥
पर्व्वत सो बाराह से धरनि उधारन रूप।
बज्र चिन्ह नरसिंह के जे नख बज्र सरूप॥2॥
बामन जू हैं छत्र सों जो है बटु को अंग।
परशुराम धनु चिन्ह है गए जो धनु के संग॥3॥
बान चिन्ह सों प्रगट श्री रामचन्द्र महराज।
बेनु चिन्ह हलधर प्रगट व्यूह रूप सह साज॥4॥

अग्निकुंड सों बुध भए जिन मख निन्दा कीन।
कलकी असि सों जानियै म्लेच्छ हरन परवीन॥5॥
भीर परत जब भक्त पर तब अवतारहिं लेत।
अवतारी श्रीकृष्ण पद दसौ चिन्ह एहि हेत॥6॥

ग्यारह चिन्ह को मिलि कै वर्णन

तहां शक्ति, अग्निकुंड, हाथी, कुम्भ, धनुष, चन्द्र, जव, वृक्ष; त्रिकोण, पर्वत, सर्प को भाव वर्णन

श्री शिव जू हरि चरन में करत सर्व्वदा बास।
आयुध भूषन आदि सह ग्यारह रूप प्रकास॥1॥
शक्ति जानि गिरि नन्दिनी परम शक्ति जो आप।
अग्नि कुंड तीजो नयन अथवा धूनी थाप॥2॥
गज जानौ गज को चरम धरत जाहि भगवान।
कुम्भ गंग जल कों कहौ रहत सीस अस्थान॥3॥
धनुष पिनाकहि मानियै सब आयुध को ईस।
चन्द्र जानि चूड़ारतन जेहि धारत शिव सीस॥4॥
श्रीतनु नवधा भक्तिमय सोइ नवकोन लखाइ।
वृक्ष महावट वृक्ष है रहत जहां सुरराइ॥5॥
नेत्र रूप वा शूल को रूप त्रिकोनहि जान।
पर्व्वत सोइ कैलास है जहं बिहरत भगवान॥6॥
सर्प अभूखन अंग के कंकन मैं वा सेस।
एहि बिधि श्री शिव बसहिं नित चरन मांहिं सुभ बेस॥7॥
को इनकी सम करि सकै भक्तन के सिरताज।
आसुतोष जो रीझि कै देहिं भक्ति सह साज॥8॥
जिन निज प्रभु कों जा दिवस आत्म समर्पन कीन।
चन्दन भूषन बसन भष सेज आदि तजि दीन॥9॥
भस्म सर्प गज छाल विष परबत मांहिं निवास।
तबसों अंगीकृत कियो तज्यौ सबै सुखरास॥10॥

अन्य मत से चिन्हन को रंग वर्णन

स्वस्तिक पीवर वर्ण को, पाटल है अठ कोन।
स्वेत रंग को छत्र है, हरित कल्पतरु जौन॥1॥
स्वर्ण वर्ण को चक्र है, पाटल जव की माल।
ऊरध रेखा अरुण है, लोहित ध्वजा बिसाल॥2॥

बज्र बीजुरी रंग को, अंकुश है पुनि स्याम।
सायक त्रय चित्रित बरन, पद्म अरुण अठ धाम॥3॥
अस्व चित्र रंग को बन्यौ, मुकुट स्वर्ण के रंग।
सिंहासन चित्रित बरन सोभित सुभग सुढंग॥4॥
व्योम चंवर को चिन्ह है नील वर्ण अति स्वच्छ।
जव अंगुष्ठ के मूल मैं पाटल वर्ण प्रतच्छ॥5॥
रेखा पुरुषाकार है पाटल रंग प्रमान।
ये अष्टादश चिन्ह श्री हरि दहिने पद जान॥6॥
जे हरि के दक्षिन चरन ते राधा पद वाम।
कृष्ण वाम पद चिन्ह अब सुनहु बिचित्र ललाम॥7॥
स्वेत रंग को मत्स्य है, कलश चिन्ह है लाल।
अर्ध चन्द्र पुनि स्वेत है, अरुण त्रिकोण बिसाल॥8॥
स्याम बरन पुनि जम्बु फल, काही धनु की रेख।
गोखुर पाटल रंग को शंख श्वेत रंग देख॥9॥
गदा स्याम रंग जानिये, बिन्दु चिन्ह है पीत।
खंग अरुन षटकोन, जम दंड श्याम की रीत॥10॥
त्रिबली पाटल रंग की पूर्ण चन्द्र घृत रंग।
पीत रंग चौकोन है पृथ्वी चिन्ह सुढंग॥11॥
तलवा पाटल रंग के दोउ चरन के जान।
कृष्ण वाम पद चिन्ह सो राधा दक्षिन मान॥12॥
या बिधि चौंतिस चिन्ह हैं जुगल चरन जलजात।
छांडि सकल भव जाल को भजौ याहि हे तात॥13॥

श्री स्वामिनी जी के चरण चिन्ह के भाव वर्णन

छप्पय

छत्र चक्र ध्वज लता पुष्प कंकण अंबुज पुनि।
अंकुश ऊरध रेख अर्ध ससि यव बाएं गुनि॥
पाश गदा रथ यज्ञवेदि अरु कुंडल जानौ।
बहुरि मत्स्य गिरिराज शंख दहिने पद मानौ॥
श्रीकृष्ण प्राणप्रिय राधिका चरण चिन्ह उन्नीसवर।
'हरिचन्द' सीस राजत सदा कलिमल हर कल्याणकर॥1॥

छत्र के चिन्ह को भाव वर्णन

दोहा

सब गोपिन की स्वामिनी प्रगट करन यह अत्र।
गोप छत्रपति कामिनी धर्यौ कमल पद छत्र॥1॥
प्रीतम बिरहातप शमन हेत सकल सुखधाम।
छत्र चिन्ह निज कंज पद धरत राधिका बाम॥2॥
यदुपति ब्रजपति गोपपति त्रिभुवनपति भगवान।
तिनहूं की यह स्वामिनी छत्र चिन्ह यह जान॥3॥

चक्र के चिन्ह को भाव वर्णन

एक चक्र ब्रजभूमि मैं श्रीराधा को राज।
चक्र चिन्ह प्रगटित करन यह गुन चरन बिराज ॥1॥
मान समै हरि आप ही चरन पलोटत आय।
कृष्ण कमल कर चिन्ह सो राधा चरन लखाय॥2॥
दहन पाप निज जनन के हरन हृदय तम घोर।
तेज तत्व को चिन्ह पद मोहन चित को चोर॥3॥

ध्वज के चिन्ह को भाव वर्णन

परम बिजय सब नियत सों श्रीराधा पद जान।
यह दरसावन हेतु पद ध्वज को चिन्ह महान॥1॥

लता चिन्ह को भाव वर्णन

पिया मनोरथ की लता चरन बसी मनु आय।
लता चिन्ह है प्रगट सोइ राधा चरन दिखाय॥1॥
करि आश्रय श्रीकृष्ण को रहत सदा निरधार।
लता चिन्ह एहि हेत सो रहत न बिनु आधार ॥2॥
देवी वृन्दा विपिन की प्रगट करन यह बात।
लता चिन्ह श्रीराधिका धारत पद जलजात॥3॥
सकल महौषधि गनन की परम देवता आप।
सोइ भव रोग महौषधी चरन लता की छाप॥4॥
लता चिन्ह पद आपुके वृक्ष चिन्ह पद श्याम।
मनहुं रेख प्रगटित करत यह सम्बन्ध ललाम॥5॥

चरन धरत जा भूमि पर तहां कुंजमय होत।
लता चिन्ह श्री कमल पद या हित करत उदोत॥6॥
पाग चिन्ह मानहुं रह्यौ लपटि लता आकार।
मानिनि के पद पद्म में बुधजन लेहु बिचार॥7॥

पुष्प के चिन्ह को भाव वर्णन

कीरतिमय सौरभ सदा या सों प्रगटित होय।
या हित चिन्ह सुपुष्प को रह्यो चरन तल सोय ॥1॥
पाय पलोटत मान में चरन न होय कठोर।
कुसुम चिन्ह श्रीराधिका धारत यह मति मोर ॥2॥
सब फल याहीं सों प्रगट सेओ येहि चित लाय।
पुष्प चिन्ह श्री राधिका पद येहि हेत लखाय ॥3॥
कोमल पद लखि कै पिया कुसुम पांवड़े कीन।
सोइ श्रीराधा कमल पद कुसुमित चिन्ह नवीन ॥4॥

कंकण के चिन्ह को भाव वर्णन

पिय बिहार मैं मुखर लखि पद तर दीनो डारि।
कंकन को पद चिन्ह सोइ धारत पद सुकुमारि ॥1॥
पिय कर को निज चरन को प्रगट करन अति हेत।
मानिनि पद मैं वलय को चिन्ह दिखाई देत ॥2॥

कमल के चिन्ह को भाव वर्णन

कमलादिक देवी सदा सेवत पद दै चित्त।
कमल चिन्ह श्रीकमल पद धारत एहि हित नित्त ॥1॥
अति कोमल सुकुमार श्री चरन कमल हैं आप।
नेत्र कमल के दृष्टि की सोई मानौ छाप ॥2॥
कमल रूप वृन्दा बिपिन बसत चरन में सोइ।
अधिपतित्व सूचित करत कमल कमल पद होइ ॥3॥
नित्य चरन सेवन करत विष्णु जानि सुख सद्म।
पद्मादिक आयुधन के चिन्ह सोई पद पद्म ॥4॥
पद्मादिक सब निधिन को करत पद्म पद दान।
यातें पद्मा चरन मैं पद्म चिन्ह पहिचान ॥5॥

ऊर्ध रेखा के चिन्ह को भाव वर्णन

अति सूधो श्री चरन को यह मारग निरुपाधि।
ऊरध रेखा चरन मैं ताहि लेहु आराधि ॥1॥
शरन गए ते तरहिंगे यहै लीक कहि दीन।
ऊरध रेखा चिन्ह है सोई चरन नवीन ॥2॥

अंकुश के चिन्ह को भाव वर्णन

बहु नायक पिय मन सुगज मति औरन पै जाय।
या हित अंकुश चिन्ह श्री राधा पद दरसाय ॥1॥

अर्ध चन्द्र के चिन्ह को भाव वर्णन

पूरन दस ससि नखन सों मनहुं अनादर पाय।
सूखि चन्द्र आधो भयो सोई चिन्ह लखाय ॥1॥
जे अ भक्त कु रसिक कुटिल ते न सकहिं इत आय।
अर्ध चन्द्र को चिन्ह येहि हेत चरन दरसाय॥2॥
निष्कलंक जग बंद्य पुनि दिन दिन याकी वृद्धि।
अर्ध चन्द्र को चिन्ह है या हित करत समृद्धि ॥3॥
राहु ग्रसै पूरन ससिहि ग्रसै न येहि लखि वक्र।
अर्ध चन्द्र को चिन्ह पद देखत जेहि शिव सक्र ॥4॥

यव के चिन्ह को भाव वर्णन

परम प्रथित निज यश करन नर को जीवन प्रान।
राजस यव को चिन्ह पद राधा धरत सुजान ॥1॥
भोजन को मत सोच करू भजु पद तजु जंजाल।
जव को चिन्ह लखात पद हरन पाप को जाल ॥2॥

इति श्री वाम पद चिन्हम्

पाश के चिन्ह को भाव वर्णन

भव बन्धन तिनके कटैं जे आवैं करि आस।
यह आशय प्रगटित करत पास प्रिया पद पास ॥1॥
जे आवैं याकी सरन कबहुं न ते छुटि जांहिं।
पाश चिन्ह श्री राधिका येहि कारन पद मांहिं ॥2॥

पिय मन बन्धन हेत मनु पाश चिन्ह पद सोभ।
सेवत जाको शम्भु अज भक्ति दान के लोभ ॥3॥

गदा के चिन्ह को भाव वर्णन

जे आवत याकी शरन पितर सबै तरि जात।
गया गदाधर चिन्ह पद या हित गदा लखात ॥1॥

रथ के चिन्ह को भाव वर्णन

जामैं श्रम कछु होय नहिं चलत समय बन कुंज।
या हित रथ को चिन्ह पग सोभित सब सुख पुंज ॥1॥
यह जग सब रथ रूप है सारथि प्रेरक आप।
या हित रथ को चिन्ह है पग मैं प्रगट प्रताप ॥2॥

वेदी के चिन्ह को भाव वर्णन

अग्नि रूप ह्वै जगत को कियो पुष्टि रस दान।
या हित वेदी चिन्ह है प्यारी चरन महान ॥1॥
यग्य रूप श्रीकृष्ण हैं स्वधा रूप हैं आप।
यातें वेदी चिन्ह है चरन हरन सब पाप ॥2॥

कुंडल के चिन्ह को भाव वर्णन

प्यारी पग नूपुर मधुर धुनि सुनिबे के हेत।
मनहुं करन पिय के बसे चरन सरन सुख देत ॥1॥
सांख्य योग प्रतिपाद्य हैं ये दोउ पद जलजात।
या हित कुंडल चिन्ह श्री राधा चरन लखात ॥2॥

मत्स्य के चिन्ह को भाव वर्णन

जल बिनु मीन रहै नहीं तिमि पिय बिनु हम नाहिं।
यह प्रगटावन हेत हैं मीन चिन्ह पद मांहिं॥1॥

पर्व्वत के चिन्ह को भाव वर्णन

सब व्रज पूजत गिरिवरहि सो सेवत है पाय।
यह महात्म्य प्रगटित करन गिरिवर चिन्ह लखाय ॥1॥

शंख के चिन्ह को भाव वर्णन

कबहूं पिय को होइ नहिं बिरह ज्वाल की ताप।
नीर तत्व को चिन्ह पद या सों धारत आप ॥1॥

इति श्री दक्षिन पद चिन्हम्

भक्त, मंजूषा आदिक ग्रन्थ सों अन्य वर्णन

जब बेंड़ो अंगुष्ठ मध ऊपर मुख को छत्र।
दक्षिन दिसि को फरहरै ध्वज ऊपर मुख तत्र ॥1॥
पुनि पताक ताके तले कल्पलता के रेख।
जो ऊपर दिसि कों बढ़ी देत सकल फल लेख ॥2॥
ऊरध रेखा कमल पुनि चक्र आदि अति स्वच्छ।
दक्षिण श्री हरि के चरण इतने चिन्ह प्रतच्छ ॥3॥
श्री राधा के वाम पद अष्ट पत्र को पद्म।
पुनि कनिष्ठिका के तले चक्र चिन्ह को सद्म ॥4॥
अग्र शृंग अंकुश करौ ताही के ढिग ध्यान।
नीचे मुख को अर्ध ससि एड़ी मध्य प्रमान ॥5॥
ताके ढिग है वलय को चिन्ह परम सुख मूल।
दक्षिन पद के चिन्ह अब सुनहु हरन भव सूल ॥6॥
शंख रह्यौ अंगुष्ठ मैं ताको मुख अति हीन।
चार अंगुरियन के तले गिरिवर चिन्ह नवीन ॥7॥
ऊपर सिर सब अंग जुत रथ है ताके पास।
दक्षिन दिसि ताके गदा बाएं शक्ति विलास ॥8॥
एड़ी पैं ताके तले ऊपर मुख को मीन।
चरन चिन्ह तेहि भांति श्री राधा पद लखि लीन ॥9॥

अन्य मत सों श्री स्वामिनी जू के चरन चिन्ह

वाम चरन अंगुष्ठ तल जव को चिन्ह लखाइ।
अर्ध चरन लौ घूमि कै ऊरध रेखा जाइ ॥1॥
चरन मध्य ध्वज अब्ज है पुष्प लता पुनि सोह।
पुनि कनिष्ठिका के तले अंकुश नासन मोह ॥2॥
चक्र मूल में चिन्ह द्वै कंकन है अरु छत्र।
एड़ी में पुनि अर्ध ससि सुनो अबै अन्यत्र ॥3॥

एड़ी में सुभ सैल अरु स्यंदन ऊपर राज।
शक्ति गदा दोउ ओर दर अंगुठा मूल बिराज ॥4॥
कनिष्ठिका अंगुरी तले वेंदी सुन्दर जान।
कुंडल है ताके तले दक्षिन पद पहिचान ॥5॥

तुलसी शब्दार्थ प्रकाश के मत सों युगल स्वरूप के चिन्ह

छप्पय

ऊरध रेखा छत्र चक्र जव कमल ध्वजावर।
अंकुस कुलिस सुचारि सथीये चारि जम्बुघर॥
अष्टकोन दश एक लछन दहिने पग जानौ।
वाम पाद आकास शंखवर धनुष पिछानौ॥
गोपद त्रिकोन घट चारि ससि मीन आठ ए चिन्हवर।
श्रीराधा रमन उदार पद ध्यान सकल कल्यानकर ॥1॥
पुष्प लता जव वलय ध्वजा ऊरध रेखा वर।
छत्र चक्र बिधु कलस चारु अंकुश दहिने धर॥
कुंडल बेदी शंख गदा बरछी रथ मीना।
वाम चरन के चिन्ह सप्त ए कहत प्रवीना॥
ऐसे सत्रह चिन्ह जुत राधा पद बन्दत अमर।
सुमिरत अघहर अनघवर नन्द सुअन आनन्दकर ॥2॥

गर्ग संहिता के मत सों चरण चिन्ह वर्णन

दोहा

चक्रांकुश यव छत्र ध्वज स्वस्तिक बिन्दु नवीन।
अष्टकोन पवि कमल तिल शंख कुम्भ पुनि मीन ॥1॥
ऊरध रेख त्रिकोन धनु गोखुर आधो चन्द।
ए उनीस सुभ चिन्ह निज चरन धरत नन्द नन्द ॥2॥

अन्य मत सों श्रीमती जू के चरन चिन्ह वर्णन

केतु छत्र स्यन्दन कमल ऊरध रेखा चक्र।
अर्ध चन्द्र कुश बिन्दु गिरि शंख शक्ति अति वक्र ॥1॥
लानी लता लवंग की गदा बिन्दु द्वै जान।
सिंहासन पाठीन पुनि सोभित चरन बिमान ॥2॥
ए अष्टादश चिन्ह श्री राधा पद में जान।
जा कहं गावत रैन दिन अष्टादसौ पुरान ॥3॥

जग्य श्रुवा को चिन्ह है काहू के मत सोइ।
पुनि लक्ष्मी को चिन्हहू मानत हरि पद कोइ ॥4॥
श्रीराधा पद मोर को चिन्ह कहत कोउ सन्त।
द्वै फल की बरछी कोऊ मानत पद कुश अन्त ॥5॥

श्री मद्भागवत के अनेक टीकाकारन के मत सों

श्री चरण चिन्ह को वर्णन

लांबो प्रभु को श्री चरन चौदह अंगुल जान।
षट अंगुल बिस्तार मैं याको अहै प्रमान ॥1॥
दक्षिन पद के मध्य मैं ध्वजा चिन्ह सुभ जान।
अंगुरी नीचे पद्म है, पवि दक्षिन दिसि जान ॥2॥
अंकुश वाके अग्र है, जव अंगुष्ठ के मूल।
स्वस्तिक काहू ठौर है हरन भक्त जन सूल ॥3॥
तल सों जहं लौं मध्यमा सोभित ऊरध रेख।
ऊरध गति तेहि देत है जो वाको लखि लेख ॥4॥
आठ अंगुल तजि अग्र सों तर्जनि अंगुठा बीच।
अष्टकोन को चिन्ह लखि सुभ गति पावत नीच ॥5॥
वाम चरन मैं अग्र सों तजि कै अंगुल चार।
बिना प्रतंचा को धनुष सोभित अतिहि उदार ॥6॥
मध्य चरन त्रैकोन है अमृत कलश कहुं देख।
द्वै मंडल को बिन्दु नभ चिन्ह अग्र पैं लेख ॥7॥
अर्ध चन्द्र त्रैकोन के नीचे परत लखाय।
गो पद नीचे धनुष के तीरथ को समुदाय ॥8॥
एड़ी पै पाठीन है दोउ पद जम्बू रेख।
दक्षिन पद अंगुष्ठ मधि चक्र चिन्ह को लेख ॥9॥
छत्र चिन्ह ताकें तले शोभित अतिहि पुनीत।
बाम अंगूठा शंख है यह चिन्हन की रीत ॥10॥
जहं पूरन प्रागट्य तहं उन्निस परत लखाइ।
अंश कला मैं एक द्वै तीन कहूं दरसाइ ॥11॥
बाल बोधिनी तोषिना चक्र वर्त्तिनी जान।
वैष्णव जन आनन्दिनी तिनको यहै प्रमान ॥12॥
चरन चिन्ह निज ग्रन्थ मैं यही लिख्यो हरिराय।
विष्णु पुरान प्रमान पुनि पद्म वचन कों पाय ॥13॥

स्कन्ध मत्स्य के वाक्य सों याको अहै प्रमान।
हयग्रीव की संहिता वाहू मैं यह जान ॥14॥

श्री राधिका सहस्रनाम के मत सों चिन्ह को वर्णन

कमल गुलाब अटा सु रथ कुंडल कुंजर छत्र।
फूल माल अरु बीजुरी दंड मुकुट पुनि तत्र ॥1॥
पूरन ससि को चिन्ह है बहुरि ओढ़नी जान।
नारदीय के बचन को जानहु लिखित प्रमान ॥2॥

श्री महाप्रभु श्री आचार्य्यजी के चरण चिन्ह वर्णन

छप्पय

कमल पताका गदा बज्र तोरन अति सुन्दर।
कुसुमलता पुनि धनुष धरत दक्षिन पद मैं वर॥
ध्वज अंकुश झष चक्र अष्टदल अम्बुद मानौ।
अमृत कुम्भ यव चिन्ह वाम पद मैं पुनि जानौ॥
तैलंग वंश शोभित करन विष्णु स्वामि पथ प्रगट कर।
श्री श्री वल्लभ पद चिन्ह ये हृदय नित्य 'हरीचन्द' धर ॥1॥

श्री रामचन्द्रजी के चरण चिन्ह वर्णन

स्वस्तिक ऊरध रेख कोन अठ श्रीहल मूसल।
अहि वाणाम्बर वज्र सु रथ यव कंज अष्टदल॥
कल्पवृक्ष ध्यज चक्र मुकुट अंकुश सिंहासन।
छत्र चंवर यम दंड माल यव की नर को तन॥
चौबीस चिन्ह ये राम पद प्रथम सुलच्छन जानिए।
'हरिचन्द' सोई सिय बाम पद जानि ध्यान उर आनिए ॥1॥

सरयू गोपद महि जम्बू घट जय पताक दर।
गदा अर्ध ससि तिल त्रिकोन षटकोन जीव वर॥
शक्ति सुधा सर त्रिवलि मीन पूरन ससि बीना।
बंशी धनु पुनि हंस तून चन्द्रिका नवीना॥
श्री राम वाम पद चिन्ह सुभ ए चौबिस शिव उक्त सब।
सो जनकनन्दिनी दक्ष पद भजु सब तजु 'हरिचन्द' अब ॥2॥

रसिकन के हित ये कहे चरन चिन्ह सब गाय।
मति देखै यहि और कोउ करियो वही उपाय ॥1॥
चरन चिन्ह ब्रजराय के जो गावहि मन लाय।
सो निहचै भव सिन्धु को गोपद सम करि जाय ॥2॥
लोक वेद कुल धर्म बल सब प्रकार अति हीन।
पै पद बल ब्रजराज के परम ढिठाई कीन ॥3॥
यह माला पद चिन्ह की गुही अमोलक रत्न।
निज सुकंठ मैं धारियो अहो रसिक करि जत्न ॥4॥
भटक्यौ बहु बिधि जग बिपिन मिल्यो न कहुं विश्राम।
अब आनन्दित है रह्यौ पाइ चरन घनस्याम ॥5॥
दोऊ हाथ उठाइ कै कहत पुकारि पुकारि।
जो अपनो चाहौ भलौ तौ भजि लेहु मुरारि ॥6॥
सुत तिय गृह धन राज्य हू या मैं सुख कछु नांहिं।
परमानन्द प्रकास इक कृष्ण चरन के मांहिं ॥7॥
वेद भेद पायो नहीं भए पुरान पुरान।
स्मृतिहू की सब स्मृति गई पै न मिले भगवान ॥8॥
मोरौ मुख घर ओर सों तोरौ भव के जाल।
छोरौ सब साधन सुनौ भजो एक नन्दलाल ॥9॥
अहो नाथ ब्रजनाथ जू कित त्यागौ निज दास।
बेगहि दरसन दीजिए व्यर्थ जात सब सांस॥10॥
मरैं नैन जो नहिं लखैं मरैं श्रवन बिनु कान।
मरैं नासिका करहिं नहिं जे तुलसी रस घ्रान॥11॥
जीवन तुम बिनु व्यर्थ है प्यारे चतुर सुजान।
यासों तो मरिबो भलौ तपत ताप तें प्रान॥12॥
निज अंगीकृत जीवन को दसा देखि अति दीन।
क्यौं न द्रवत हरि बेगहीं करुना करन प्रवीन॥13॥
निठुराई मत कीजिए नाहीं तौ प्रन जाय।
दया समुद्र कृपायतन करुना सींव कहाय ॥14॥
तुमरे तुमरे सब कहें भे प्रसिद्ध जग मांहिं।
कहो सु तुम कहं छांड़ि कै कृपासिन्धु कहं जाहिं ॥15॥
जद्यपि हम सब भांति ही कुटिल कूर मतिमन्द।
तदपि उधारहु देखि कै अपनी दिसि नन्द नन्द ॥16॥
कहूं हंसै नहिं दीन लखि मोहिं जग के नन्दलाल।
दीन बन्धु के दास को देखहु ऐसो हाल ॥17॥

श्रीराधे वृषभानुजा तुम तौ दीन दयाल।
केहि हित निठुराई धरी देखि दीन को हाल ॥18॥
मान समै करि कै दया देहु बिलम्ब लगाय।
तौ हरि को मालुम परै आरत जन की हाय ॥19॥
जौं हमरे दोसन लखौ तौ नहिं कछु अवलम्ब।
अपुनी दीन दयालता केवल देखहु अम्ब ॥20॥
श्रीवल्लभ वल्लभ कहौ छोड़ि उपाय अनेक।
जानि आपनो राखिहैं दीनबन्धु की टेक ॥21॥
साधन छांड़ि अनेक विधि परि रहु द्वारे आय।
अपनो जानि निबाहिहैं करि कै कोउ उपाय ॥22॥
श्री जमुना जल पान करु बसु वृन्दाबन धाम।
मुख में महाप्रसाद रखु लै श्री वल्लभ नाम ॥23॥
तन पुलकित रोमांच करि नैनन नीर बहाव।
प्रेम मगन उन्मत्त ह्वै राधा राधा गाव ॥24॥
ब्रज रज मैं लोटत रहौ छोड़ि सकल जंजाल।
चरन राखि विश्वास दृढ़ भजु राधा गोपाल ॥25॥
सब दीनन की दीनता सब पापिन को पाप।
सिमिटि आइ मो में रह्यो यह मन समझहु आप ॥26॥
ताहू पै निस्तारियै अपनी ओर निहारि।
अंगीकृत रच्छहिं बड़े यह जिय धर्म बिचारि ॥27॥
प्राननाथ ब्रजनाथ जू आरति हर नन्द नन्द।
धाइ भुजा भरि राखिए डूबत भव 'हरिचन्द' ॥28॥
मरौ ज्ञान वेदान्त को जरौ कर्म को जाल।
दया दृष्टि हम पै करौ एक नन्द के लाल ॥29॥
साधुन को संग पाइ कै हरि जस गाइ बजाइ।
नृत्य करत हरि प्रेम मैं ऐसे जनम बिहाइ ॥30॥
अहो सहो नहिं जात अब बहुत भई नन्द नन्द।
करुना करि करुनायतन राखहु जन 'हरिचन्द'॥31॥

[मेडिकल हाल, बनारस से सन 1870 में प्रकाशित]

वैशाख माहात्म्य

सन 1872 ई.

वैशाख माहात्म्य

दोहा

भरति नेह नव नीर सों बरसत सुरस अथोर।
जयति अलौकिक घन कोऊ लखि नाचत मनमोर॥

नित्य उमाधव जेहि नवत माधव अनुज मुरारि।
श्यामाधव माधव भजौ माधव मास बिचारि॥1॥
रमत माधवी कुंज करि प्रेम माधवी पान।
माधव रितु संग माधवी लै माधव भगवान॥2॥
वैशाखा पति नहि भजहिं जे वैशाष मंझार।
ते वै शाषामृग अहैं वा वैशाष कुमार॥3॥
गुरु आयसु निज सीस धरि सुमिरि पिया नन्दनन्द।
माधव की कछु बिधि लिखत ग्रन्थन लखि हरिचन्द॥4॥
चैत्र कृष्ण एकादशी अथवा पूनो मान।
मेष संक्रमन सों करै वा अरम्भ अश्नान॥5॥
ब्राह्मण गन सों पूछि कै नियम शास्त्र को मान।
हरिहि नौमि संकल्प करि न्याय समेत बिधान॥6॥

मन्त्र

सकल मास वैशाष में मेष रासि रवि मान।
मधुसूदन प्रिय होहिं लखि सनियम माधव न्हान॥7॥
मधु रिपु के परसाद सों द्विज अनुग्रहहि जोय।
नित वैशाख नहान यह विघ्न रहित मम होय॥8॥
माधव मेषग भानु मैं हे मधु सत्रु मुरारि।
प्रात न्हान फल दीजिए नाथ पाप निरुवारि॥9॥

जा तीरथ में न्हाइए लीजै ताको नाम।
जहं न जानिए नाम तहं विश्नु तीर्थ सुखधाम ॥10॥
तुलसी श्यामा ऊजरी जो मधु रिपु कों देत।
सो नारायन होत है माधव मैं करि हेत ॥11॥
तुलसी दल वैशाष में अरपहिं तीनों काल।
जनम मरन सों मुक्त तेहिं करत नन्द के लाल ॥12॥
जो सींचत पीपर तरुहिं प्रात न्हाइ हरि मानि।
करत प्रदक्षिन भांति बहु सर्व्व देवमय जानि ॥13॥
तरपन करि सुर पित्र नर सचराचर तरु मूल।
मेटै अपने पित्र की नरक कुंड की सूल ॥14॥
जे सींचहिं जल भक्ति सों पीपर तरु जड़ माहिं।
तिन तार्‌यौ निज अयुत कुल यामैं संशै नाहिं ॥15॥
गऊ पीठ सुहराइ कै न्हाइ तरुहि जल देइ।
कृष्ण पूजि तजि दुर्गतिहिं देवन की गति लेइ ॥16॥
एक बेर भोजन करै कै तारा लखि खाइ।
कै बिन मांगो पाइकै दै निसि नींद बिहाइ ॥17॥
ब्रह्मचर्य्य घरनी शयन अशन हविश्य न आन।
श्रीगंगादिक मैं करै बिधि बिधान असनान ॥18॥
पुन्य मास वैशाष में हरि सों राखि सनेह।
मन भायो ताको मिलै यामें कछु न सन्देह ॥19॥
मधुसूदन पूजन करै तप व्रत सह दै दान।
पाप अनेकन जनम के दाहैं तूल समान ॥20॥
माधव थांपै पौंसरा करै चटाई दान।
छत्र ब्यजन जूता छरी अरु सूछम परिधान ॥21॥
चन्दन जल घट पुष्प ग्रह चित्र वस्तु अंगूर।
देवहिं दीजै प्रीति सों केला फल करपूर ॥22॥
माधव में जो पित्र हित करत अम्बु घट दान।
सतु ब्यजन मधु फल सहित प्रीति करत भगवान ॥23॥
माधव हित जे देत घट या माधव के माहिं।
भोजन के सह बिप्र कों ते बैकुंठहि जाहिं ॥24॥
होइ सकै नहिं मास भर जौ बिधिवत् असनान।
करै अन्त के तीन दिन तो फल होइ समान ॥25॥

[अथ अक्षय तृतीया]

रोहिनि माधव शुक्ल पख तीज सोम बुध होय।
अति पवित्र दुरलभ बहुरि पाप नसावत सोय ॥26॥
माघी पूनो भाद्रपद कृष्ण चतुर्दशि जान।
माधव तृतिया कारतिक नवमी युग परमान ॥27॥
इन चारहू युगादि में श्राद्ध करत जो कोय।
द्वै सहस्र संबत दिनन तृप्ति पित्र की होय ॥28॥
तिथि युगादि में न्हाइ कै करै दान जप ध्यान।
ताकों शुभ फल देत श्रीकृष्णचन्द भगवान ॥29॥
माधव शुक्ला तीज को श्री गंगाजल न्हाय।
सर्व्व पाप सों छूटिकै बिष्णु लोक सो जाय ॥30॥
जव ही को होमादि करि हरि को जव हि चढ़ाइ।
दान देइ जव द्विजन कों पुनि आपहु जव खाइ ॥31॥
दान करै जल कुम्भ को रस अन्नादिक साथ।
चना और गोधूम को सक्तु देइ द्विज हाथ ॥32॥
दधि ओदन आदिक सबै ग्रीषम रितु के भोग।
देइ तीज दिन विप्र कों नासै भव भय रोग ॥33॥
शिवहिं पूजिकै तीज दिन शिव हित दै घट दान।
शिवपुर सो नर पावई भाषत शिव भगवान ॥34॥

मन्त्र

ब्रह्म विष्णु शिव रूप यह दियो धर्म घट दान।
पिता पितामह आदि सब तृप्ति होहिं परमान ॥35॥
गन्ध उदक तिल फल सहित पित्रन जल घट देत।
अक्षय पावैं तृप्ति सब दान कियो एहि हेत ॥36॥
ब्रह्म विष्णु शिव रूप यह देत धर्म घट दान।
या सों मेरे काम सब पुरवौ श्री भगवान ॥37॥
वायु देवता को व्यजन नासन आतप ताप।
तासों याके दान सों प्रीति होहिं हरि आप ॥38॥
सक्तु प्रजापति देवता मख हित किय निरमान।
होहिं मनोरथ पूर्ण सब या सतुआ के दान ॥39॥

इति

चार युगादिक तिथिन मैं करि समुद्र असनान।
सो फल पावत मनुज जो करिकै पृथ्वी दान ॥40॥
इन चारिहू युगादि मैं कछु नहिं खैये रात।
रात खान सों दिवस को पुन्य नास ह्वै जात ॥41॥
माधव शुक्ला तीज को श्रीमाधव को जौन।
चन्दन चरचहिं पावहीं महा पुन्य नर तौन ॥42॥
करपूरादि सुगन्ध सो सुन्दर चन्दन बासि।
कृष्णहि देत जो पुन्य नर रहत पाप सो नासि ॥43॥
चन्दन तन धारन किए कृष्णहिं जो लखि लेत।
तीज दिवस सो मुक्त ह्वै पावन कृष्ण निकेत ॥44॥
शीतल जल नव घटन भरि माल बिजन बहु भांति।
देत हरिह सो पावई पुन्य फलन की पांति ॥45॥
पुष्पमाल बहु भांति अरु ग्रीषम के उपचार।
जल यन्त्रादि अनेक बिधि करै बुद्धि अनुसार ॥46॥
कृष्ण हेत जो कछु करै माधव तृतीया पाइ।
सो अखंड ह्वैकै रहै पुन्य न कबहुं नसाइ ॥47॥
परशुराम को जन्म दिन पुनि याही दिन जान।
तिनके हित हू कीजिए दान बरत असनान ॥48॥
छाता जूता आदि सब ग्रीषम सुख की वस्तु।
द्विजन देइ या तीज को कहि कृष्णार्पणमस्तु ॥49॥
सुकृत जौन यामें करै सो सब अक्षय होय।
तासों अक्षय तीज यह नाम कहैं सब कोय ॥50॥
चन्दन को बागो करै चन्दन ही की माल।
चन्दन ही के भौन में बैठावै नन्दलाल ॥51॥
फूलन को मन्दिर रचे फूलन सेज बनाय।
तामें थापै कृष्ण कों फूल माल पहिराय ॥52॥
रितु फल बहु सब भांति के दधि ओदन सुखधाम।
पना धरै सब वस्तु को कहै लेहु घनश्याम ॥53॥
दीपादिक की मुख्यता कातिक मैं जिमि जान।
तैसेइ माधव मास मैं सीत वस्तु को मान ॥54॥
चार वरन को दीजिए माधव मैं जल दान।
अन्त्यज पशु पक्षीन को नीर दान सुख खान ॥55॥

जे पशु पक्षिन देत है ग्रीषम मैं जलपान।
ते नर सुरपुर जात हैं सुन्दर बैठि बिमान ॥56॥
जे अति आतप सों तपे देहु तिन्हैं विश्राम।
छाया जल बहु भांति सों ह्वैहै पूरन काम ॥57॥
गरमी के हित जे करत बापी कूप तड़ाग।
तिनको पुन्य अखंड ते करत न सुरपुर त्याग ॥58॥
साधुन को अरु द्विजन गृह नदी तीर हरि धाम।
जे छावत छाया तिन्हैं मिलत श्याम अभिराम ॥59॥

अथ श्री गंगा सप्तमी

माधव सुदि सप्तमि कियो क्रुद्ध जन्हु जलपान।
छोड्यौ दक्षिणा कर्ण तें तातें पर्व्व महान ॥60॥
ताही सों जान्हवि भई ता दिन सों श्री गंग।
तिनको उत्सव कीजिए ता दिन धारि उमंग ॥61॥
तामें गंगा न्हाय कै पूजन कीजे चारु।
गंगा नाम सहस्र जपि लीजै पुन्य अपार ॥62॥

अथ वैशाख शुद्ध द्वादशी

सिंह राशि गत होहिं जौ मंगल गुरु इक ठौर।
मेष राशि गत दिवसपति शुक्लपक्ष जुत और ॥63॥
द्वादशि तिथि मैं होइ पुनि बितीपात संयोग।
हस्त होय नक्षत्र तौ होय महा यह जोग ॥64॥
प्रात स्नान यामैं करै सहित बिबेक बिधान।
गो सुबरन अवनी बसन देइ द्विजन कहं दान ॥65॥
देव होइ सुरपति बनै नरपतिहू जग माहिं।
जो मन इच्छित सो मिलै यामै संशय नाहिं ॥66॥

अथ नृसिंह चतुर्दशी

माधव शुक्ल चतुर्दशी स्वाती पुनि शनिवार।
वनिज करन सिध जोग मैं नरहरि लिय अवतार ॥67॥
जो सब जोग कहूं मिले तौ पूरन सौभाग।
बिना जोगहू ब्रत करै करि हरि सों अनुराग ॥68॥
सब लोगन को ब्रत उचित चौदस माधव मास।
पै वैष्णव जन तो कर निश्चय ब्रत उपवास ॥69॥

सांझ समै हरि को करै पंचामृत असनान।
शीतल भोग लगावई करि आनन्द बिधान ॥70॥
बा मृद गोमय आंवलनि करि मध्यान्ह स्नान।
पूछि द्विजन सों यह करे सुभ संकल्प विधान ॥71॥

मन्त्र

देव देव नरसिंह जू जानि जनम को जोग।
आजु करैं उपवास हम त्यागि सकल जग भोग ॥72॥

इति

यह पढ़ि नदी नहाइ के सांझ समै घर आइ।
लक्ष्मी सहित नृसिंह की सुबरन मूर्ति बनाइ ॥73॥
रात पूजि जागरन करि प्रात पूजि पुनि श्याम।
पीठक बिप्रहि दै करै यह बिनती सुखधाम ॥74॥

मन्त्र

नरहरि अच्युत जगतपति लक्ष्मीपति देवेस।
पूजौ पीठक दान सों मन कामना अशेस ॥75॥
जे मम कुल में होयगे होय गए जे साथ।
या भवसागर दुसह तें तिनहिं उधारौ नाथ ॥76॥
डूब्यौ पातक सिन्धु मैं महादुःख के बारि।
दुखित जानि मोहि राखिए नरहरि भुजा पसारि ॥77॥
श्री नरसिंह रमेश जू भक्तन को भय टारि।
क्षीर समुद्र निवास तुव चक्रपाणि दनुजारि ॥78॥
जय जय कृष्ण गुबिन्द हरि राम जनार्दन नाथ।
या ब्रत सों मोहिं दीजिए भक्ति मुक्ति दोउ साथ ॥79॥

इति

या बिधि सों ब्रत जे करैं कृष्ण जन्म दिन जानि।
ते चारहु फल पावहीं यह उर निश्चय मानि ॥80॥
जिमि निकसे प्रभु खम्भ ते राख्यौ जन प्रहलाद।
तिमि तिनकी रक्षा करत जे राखत ब्रत स्वाद ॥81॥

अथ पूर्णिमा

माधव कातिक माघ की पूनो परम पुनीत।
ता दिन गंगा न्हाइयै करि केशव सों प्रीति ॥82॥
एक मास जो नहि बनै श्रीगंगा असनान।
तो पूनो दिन न्हाइयै अरु करिए जल दान ॥83॥
ब्रत समाप्त या दिन करै देइ द्विजन को दान।
हाथ जोड़ि कै यह कहै लखि कै श्री भगवान ॥84॥

मन्त्र

हे मधुसूदन, कृष्ण हरि राधा जीवन प्रान।
तव प्रताप पूजन भयो माधव बिधिवत स्नान ॥85॥

इति

श्याम मृगा के चर्म पै श्याम तिलहि दै दान।
सुबरन सह कहि होहि प्रिय मधुसूदन भगवान ॥86॥
ब्राह्मण बहुत खवावई करि अनेक पकवान।
जौ बहु द्विज नहिं होइ तौ बारह सहित बिधान ॥87॥
एहि बिधि माधव में करै प्रेम सहित असनान।
ताकों सब कछु देहिं श्री मधुसूदन भगवान ॥88॥
लखि कै निरनय सिन्धु अरु भगवद् भक्ति विलास।
माधव की यह विधि लिखी 'हरीचन्द' हरिदास ॥89॥
एक दिवस मैं यह लिखी माधव बिधि अभिराम।
जेहि पढ़ि कै सुख पाइहैं कृष्णभक्त सुखधाम ॥90॥
लिजौ चूक सुधारि के कविमन सहित अनन्द।
हौं नहिं जानत रचन बिधि नहिं पिंगल नहिं छन्द ॥91॥
माधव विधि माधव सुमिरि उर अति धारि अनन्द।
परम प्रेमनिधि रसिकबर बिरच्यौ श्रीहरिचन्द ॥92॥
प्रान पियारे, प्रेमनिधि प्रेमिन जीवन प्रान।
तिनके पद अरपन कियो यह बैशाख बिधान ॥93॥

[रचनाकाल सन 1872 ई.]

अथ कार्तिक स्नान

सन 1872 ई.

अथ कार्तिक स्नान

नील हीर दुति अति मधुर सब ब्रज जन चित चोर।
जय जय बिरहातप समन राधा नन्दकिशोर ॥1॥
जुगल जलद केकी जुगल दोऊ चन्द चकोर।
उभय रसिक रस रास जय राधा नन्दकिशोर ॥2॥
जल तरंग बुधि प्रान पुनि दीप प्रकाश समान।
जुगल अभिन्नहु दोय बपु जय राधा भगवान ॥3॥
नलिन नयन अमृत बयन बेनु वाद्य रत धीर।
राधा मुख मधु पान रत जय जय जय बलबीर ॥4॥
बिनु हरि पद राधा भजन नाहिन और उपाय।
क्यौं मन तू भटकत बृथा जगत जाल फंसि धाय ॥5॥
मथिकै बेद पुरान बहु यहै लह्यौ इक सार।
राधा माधव चरन भजु तजु जप जोग हजार ॥6॥
भ्रमि मत तू वेदान्त बन बृथा अरे मन मोर।
चलु कलिंदजा कुंज तट लखु घनश्याम किशोर ॥7॥
शास्त्र एक गीता परम मन्त्र एक हरि नाम।
कर्म एक हरि पद भजन देव एक घनश्याम ॥8॥
विधि निषेध जग के जिते तिनको यह सिरमौर।
भजनो इक नन्दलाल पद तजनो साधन और ॥9॥
साधकगन सों तुम सदा छिपत फिरत ब्रजराय।
अति अंधियारो मम हृदय, तहां छिपत किन आय ॥10॥
बेद कहत जग बिरचि हरि ब्यापि रहत ता मांहिं।
मम हिय जग बाहर कहा जो इत व्यापत नाहिं ॥11॥
तुमहिं रिझावन हित सज्यो लख चौरासी रूप।
रीझि देहु गति खीझि कै बरजहु मोहिं ब्रज भूप ॥12॥
कोऊ जप संजम करौ करौ कोउ तप ध्यान।
मेरे साधन एक हरि सपनेहु रुचत न आन ॥13॥

नर्क स्वर्ग कै ब्रह्म पद कै चौरासी मांहिं।
जहां रहौ निज कर्म बस छुटै कृष्ण रति नाहिं ॥14॥
कृष्ण नाम मुख सों कढ़ौ सुनौ कृष्ण जस कान।
मन में कृष्ण सदा बसौं नयन लखौं हरि ध्यान ॥15॥
चोरि चीर दधि दूध मन दुरन चहत ब्रजराय।
मेरे हिय अंधियार मैं तौ न छिपत क्यौं आय ॥16॥
सुनत दूध दधि चीर मन हरत फिरत ब्रजराय।
तौ अघ मेरे किन हरत यह मोहिं देहु बताय ॥17॥
कृष्ण नाम मनि दीप जो हिय घर मैं न प्रकाश।
दीप बहुत बारे कहा हिय तम भयो न नाश ॥18॥
जय जय श्रुति पद बन्दिनी कीर्तिनन्दिनी बाल।
हरि मन परमानन्दिनी कन्दिनि भव भय जाल ॥19॥

सोरठा

जय जय परमानन्द कृपाकन्द गोविन्द हरि।
जय जय जसुदा नन्द नन्दानन्दन दुन्द हर ॥20॥

सवैया

पूजि कै कालिहि सत्रु हतौ कोऊ लक्ष्मी पूजि महा धन पाओ।
सेइ सरस्वति पंडित होउ गनेसहि पूजिकै बिघ्न नसाओ ॥
त्यों 'हरीचन्द जू' ध्याइ शिवै कोऊ चार पदारथ हाथही लाओ।
मेरे तो राधिका नायक ही गति लोक दोऊ रहौ कै नसि जाओ ॥1॥

सन्ध्या जु आपु रहौ घर नीकी नहान तुम्हैं है प्रणाम हमारी।
देवता पित्र छमौ मिलि मोहिं अराधना होइ सकै न तुम्हारी ॥
वेद पुरान सिधारौ तहां 'हरीचन्द' जहां तुम्हरी पतियारी।
मेरे तो साधन एक ही है जग नन्दलला वृषभानु दुलारी ॥2॥

भजन

जय वृषभानु नन्दिनी राधा।
शिव ब्रह्मादि जासु पद पंकज हरि बस हेतु अराधा ॥
करुनामयी प्रसन्न चन्दमुख हंसत हरति भव बाधा।
'हरीचन्द' ते क्यौं जग जीवत जिन नहिं इनहिं अराधा ॥1॥

जय जय हरि नन्द नन्द पूर्ण ब्रह्म दुख निकन्द,
परमानन्द जगतबन्द सेवक सुखदाई।
परम जस पवित्र गाथ दीनबन्धु दीनानाथ,
स्रवन दरस ध्यान सुखद गोबर्द्धन राई॥
गोप गोपिकादि पाल सतत असुर बंस काल,
सकल कला गुन निधान की रति जग छाई।
'हरीचन्द' प्राननाथ कीर्तिसुता लिए साथ,
पावनगुन अवलि बिमल श्रुतिगन नित गाई॥2॥

मेरी गति होउ सोई महरानी।
जासु भौंह की हिलनि बिलोकत निसु दिन सारंगपानी।
खेलन मैं कबहूं जौं आंचर उड़त बात बस जाको।
रिसि मुनि बन्दित हू हरि मानत परम धन्य करि ताको।
परम पुरुष जो जोग जग्य जप क्योंहू लख्यौ न जाई।
सो जा पद रज बस निसि बासर तुरतहि प्रगटत आई।
ग्राम बधूटी जा कटाच्छ बल उमा रमाहि लजावैं।
'हरीचन्द' ते महामूढ़ जे इनहिं न अनुछिन ध्यावैं॥3॥

जय जय श्री बृन्दाबन देवी।
अखिल विश्वनायक पुरुषोत्तम जा पद पंकज सेवी।
जो निज दृष्टि कोर सो जग के जीवहिं नितहिं जिआवै।
परमानन्द घनहु पै जो निज आनन्द कन बरसावै।
जगत अधार भूत परमातम जिय अधार सो ताकी।
'हरीचन्द' स्वामिनि अभिरामिनि तुल न जगत मैं जाकी॥4॥

बिपुल बृन्दा बिपिन चक्रवर्ती चतुर
रसिक चूड़ा रतन जयति राधा रमन।
गोप गोपी सुखद भक्त नयनानन्द
बिरहिजन कोटि सन्ताप सन्तत समन।
जयति गिरिराज घृत बास अंगुरि नखन
जयति कृत बेनु रव मत्त गज गति गमन॥
अघ बकी बक सकट पूतनादिक काल जयति।
'हरीचन्द' हित करन कालिय दमन॥5॥

जय जय गोबर्द्धन धर देव।
जय जय देव राजमद मर्दन करत सकल सुर सेव।
जय जय श्रुतिजस गावत निसि दिन पावत तऊ न भेव ।
जय जय 'हरीचन्द' रक्षण कृत दीन उधारन टेव ॥6॥

बाजी नैनन में लागी।
रसिकराज इत उत श्री राधा परम प्रेम रस पागी।
दोऊ हारे दोऊ जीते आपुस के अनुरागी।
'हरीचन्द' निज जन सुखदायक रहे केलि निसि जागी ॥7॥

हम मैं कौन बड़ो री प्यारी।
ठाढ़ी होउ बराबर नापैं बिहंसि कह्यो गिरिधारी।
सुनत उठी बृषभानु नन्दिनी खरी भई समुहाई।
पद अंगुरी बल उचकि पिया सों बढ़वन चहत ऊंचाई।
सुन्दर मुख आपुहि ढिग आवत लखि चूम्यो पिय प्यारे।
'हरीचन्द' लजि हंसि भुव निरखत पिया कह्यौ हम हारे ॥8॥

राग बिहाग (दीपावली)

करत मिलि दीप दान ब्रज बाला।
जमुना सों कर जोरि मनावत मिलै पिया नन्दलाला।
स्नान दान जप जोग ध्यान तप संजम नियम बिसाला।
इनके फल में 'हरीचन्द' गल लगै कृष्ण गुनवाला ॥9॥

अरी तू हठ नहिं छांड़त प्यारी।
दीप दान मैं मगन ह्वै रही भूलि गई गिरिधारी।
तेरे बिनु उत बिनहीं दीपक बिरह अगिनि संचारी।
'हरीचन्द' पीतम गर लगि के करु त्यौहार दिवारी ॥10॥

हमारे ब्रज के द्वै मनि दीप।
पुष्पराग श्रीराधा मरकत गोबिन्द गोप महीप॥
सदा प्रकाश करत ब्रज मंडल वृन्दाबन अवनीप।
'हरीचन्द' सुमिरत बियोग तम कहुं नहिं रहत समीप ॥11॥

राग बिहाग चौताला

अरी हौं बरजि रही बरज्यौ नहीं मानत,
सबै छोरि कृष्ण प्रेम दीप जोरि।
भरि अखंड दै सनेह एक लौ लगाइ वासों,
मन बाती राखु तामें नित्य बोरि॥
बिरह प्रगट करि जोति सों मिलाइ जोति,
करि पतंग नेम धरम लाज ओट डारि छोरि।
'हरीचन्द' कह्यो मानि देखिहै तू प्रीति पन्थ,
भाजैगो बियोग तम मुख मोरि॥12॥

राग बिहाग (दीपावली)

आजु गिरिराज के उच्चतर शिखर पर,
परम शोभित भई दिव्य दीपावली।
मनहुं नगराज निज नाम नग सत्य किय,
बिबिध मनि जटित तन धारि हारावली॥
औषधी गन मनहुं परम प्रज्वलित भई,
किधौं ब्रज बास हित बसी तारावली॥
दास 'हरीचन्द' मन मुदित छबि देखिकै,
करत जै जै वरषि देव कुसुमावली॥13॥

आजु तरनि तनया निकट परम परमा प्रगट,
ब्रज बधुन मिलि रची दीप माला।
जोति जाल जगमगत दृष्टि थिर नहिं लगत,
छूट छबि को परत अति बिसाला॥
खड़ीं नवल बनिता बनी चार दिसि,
छबि सनी हंसहिं गावहिं बिबिध ख्याला।
निरखि सखी 'हरीचन्द' अति चकित सी ह्वै,
कहत जयति राधे जयति नन्द लाला॥14॥

आजु ब्रजछबि की छूट परै।
इत नन्दलाल लाडिली उत इत दीपक ज्योति बरै॥
उत सहचरी ललित ललितादिक मुरछल चंवर ढरै।
इत जरतार तास बागो उत भूषण झलक भरै॥

इत नवखंड सीसमहला उत दुगनित बिम्ब परै।
इत बादलन लपेटी झालर झलाबोर झलरै ॥
उत सारी कोरन सों मुकुता मानिक हीर झरै।
जमुना जल प्रतिबिम्ब सुहायो जल छबि मिलि लहरै ॥
'हरीचन्द' मुख चन्द मिलो सब रवि ससि गरब हरै ॥15॥

आजु संकेतन दीपक बारे।
निकट जानि गोवर्द्धन घटियां अपने हाथ संवारे ॥
किए प्रकासित गहवर गिरि थल कुंज पुंज ब्रज सारे।
'हरीचन्द' अपनी प्यारी की बाट निहारत प्यारे ॥16॥

अरी तू हठि चलि प्यारी दीप मंडल तें क्यों शोभा हरि लेत।
तेरे मुख प्रकास दीपक गन मन्द दिखाई देत ॥
मन्द परे आभा सब मेटी झिलमिलि झीने सेत।
'हरीचन्द' तू दूरि बैठि कै कर त्यौहार सहेत ॥17॥

ईमन

कविन सो सांचेहि चूक परी।
दीप सिखा की उपमा जिन तुलि प्यारी हेत धरी ॥
वह दाहत यह अंग जुड़ावति वह चंचल थिर येह।
वह निज प्रेमिन परम दुखत यह सदा सुखद पिय देह ॥
वा में धूम स्वच्छ अति ही यह रैनि दिना इक रास।
वह परिछिन्न बात बस यह निज बस सर्वत्र प्रकास ॥
वह सनेह आधीन और यह है सनेह भरपूर।
'हरीचन्द' दीपक प्यारी की नहिं कोउ बिधि सम तूर ॥18॥

जमुना जल बढ़ी दीप छबि भारी।
प्रतिबिम्बित प्रतिबिम्ब लहरि प्रति तहं राजत पिय प्यारी ॥
तैसेही नभतर तारावलि तरल वायु गुन होई।
तैसेहि उठत गगन गुब्बारे छुटत दारुगति जोई ॥
अवनि नीर आकास प्रकासित दीपहि दीप लखाई।
मनु ब्रजमंडल ज्योति रूपता अपनी प्रगट दिखाई ॥
मुख प्रकास रंजित सबही थल सोभा नहिं कहि जाई।
'हरीचन्द' राधे मनमोहन रहे त्योहार मनाई ॥19॥

तुव बिनु पिय को घर अंधियारो।
जदपि चहूं दिसि प्रगटि श्वास मद बिरहानल संचारो॥
कछु न लखात ताहि अति व्याकुल दृग झर लावत भारो।
प्रिये प्रिये कहि प्रति कानन में ढूंढि रहत घर सारो॥
तू इत बैठी बदन बनाए उत वह बिकल बिचारो।
'हरीचन्द' उठि चलु री प्यारी लाउ गरें पिय प्यारो॥20॥

दीपन उलटी करी सहाय।
चली गई पिय पास प्रगट मग काहू न परी लखाय॥
अंधियारी मैं तो भय भारी मुख ससि नाहिं दुराय।
इत प्रकाश में मिल अलबेली एक भई चमकाय॥
जगमगे बसन कनक मनि भूषन एक भए सब आय।
'हरीचन्द' मिलि कै बियोग में दीनो तुरत नसाय॥21॥

दिपति, दिव्य दीपावली, आजु दीपति दिव्य दीपावली।
मनु तम नाश करन को प्रगटी कश्यप सुत बंसावली॥
मनु ब्रजमंडल कृष्ण चन्द्रमा तहं तारन की मंडली।
जीतन को मनु राहु सेन को अति सुबरन किरनावली॥
विगत भई सब रैनि कालिमा सोभा लागति है भली।
'हरीचन्द' मनु रतन रासि की उज्ज्वल ज्योति जुगावली॥22॥

नेकु चलु पिय पै बेगहि प्यारी।
देखु करी तेरे हित कैसी मोहन आजु तयारी॥
पड़े पांवड़े मग मखमल के दल गुलाब रुचिकारी।
छिरक्यो नीर गुलाब अतर मृगमद चन्दन घनसारी॥
परदे परे झालरैं झमकैं तने बितान सुतारी।
फरश गलीचन को अति राजत कोमल बहुरंग डारी॥
धरे साज ढिग अतर पान मधु फूल माल जल झारी।
लगी मिठाई रासि दुहूं दिसि दीपक धरे कतारी॥
बिछी पलंग पय फेनु मैनु सम पोस पर्यौ रुचिकारी।
पास साज पालन के सोहत कहुं सतरंज संवारी॥
ठौर ठौर आरसी लगाई दूनी द्युति करि डारी।
प्रति खूंटिन हारावलि माला फूल बसन लै धारी॥

प्रति आले सुगन्ध सों पूरे पान मिठाई डारी।
जहं तहं अदब किए सब सखियां ठाढ़ी साज संवारी ॥
मुरछल चंवर रुमाल अडानो पीकदान लै बारी।
चौकि चौंकि पिय उठत बिना तुव अगम संक बनवारी ॥
'हरीचन्द' प्रीतम गर लगि कै करु त्योहार दिवारी ॥23॥

रच्यो यह तेरेहि हित त्योहार।
दीप दिवारी युक्ति निकारी तव हित नन्दकुमार ॥
तुव महलन की सुरति करन हित हठरी रुचिर बनाई।
तुव मुख चन्द्रप्रकाश लखन हित दीपावली सुहाई ॥
हाट लगाई तुव आवन हित और न कछु सन्देह।
'हरीचन्द' बिहरै किन भुज भरि प्रीतम सों करि नेह ॥24॥

कार्तिक में सांझ के गाइबे को पद

सांचहि दीपसिखा सी प्यारी।
धूमकेश तन जगमगाति द्युति दीपति भई दिवारी ॥
स्वयं प्रकाश अकुंठ सुहाई बिनु असार छबि छाई।
सदा एक रस नित्य अधिक यह वासों चाल लखाई ॥
भरत सुगन्धन ब्रज कुंजन मग शीतल तन कर वारी।
प्रीतम तन को बिरह मिटावत 'हरीचन्द' दुख जारी ॥25॥

इति

[रचनाकाल सन 1872 ई. भारत जीवन प्रेस काशी से सन 1884 ई. में पुस्तिकाकार प्रकाशित]

श्री जीवनजी महाराज

सन 1872 ई.

श्री जीवनजी महाराज

हरि की प्यारी कौन? देह काके बल धावत?
कहा पदन मैं परि विशेषता बोध करावत?
कहा नवोढ़ा कहत? ठाकुरन को को स्वामी?
सुरगन को गुरु कौन? बसत केहि थल रिसि नामी?
हरि वंशी धुनि सुनि सकल ब्रजबनिता का कहि भजैं?
वह कौन अंक जो गुननहूं किए रूप निज नहि तजैं ॥1॥

अश्व पीठ कह धरत? कौन रवि के जिय भावत?
राजा के दरबार सभहि सुधि कौन दिआवत?
नवल नारि मैं कहा देखि जुव जन मन लोभा?
को परिपूरन ब्रह्म? कहा सरवर की शोभा?
घन विद्या मानादिक सुगुन भूषित को जग-गुरु रहौ?
इन सब प्रश्नन् को एक ही उत्तर श्री जीवन कहौ?

[यह कविता 2 सितम्बर 1872 ई. में सुधा में छपी थी। इस कविता के साथ भारतेन्दु ने सुधा सम्पादक के पास निम्नलिखित अंश लिख भेजा था--

"जिन श्री जीवनजी महाराज के अशेष गुण इस पत्र में लिखे गए हैं उनके नाम की मैंने एक अन्तर्लापिका बनाई है, कृपा करके प्रकाश कीजिएगा। इस अन्तर्लापिका में 16 प्रश्न के उत्तर 4 ही अक्षर से निकलते हैं।

अथ क्रम से उत्तर "1-श्री 2-जी 3 व 4-न 5 -श्री जी 6-जीव 7-वन 8-वजी 9-नव 10-जीन 11-वनजी 12-नजीव 13-नवश्री 14-श्रीजीव 15-जीवन 16-श्रीजीवन।"]

प्रातःस्मरण मंगल पाठः

सन् 1873 ई.

प्रातःस्मरण मंगल पाठः

मंगल राधा कृष्ण नाम गुन रूप सुहावन।
मंगल जुगल बिहार रसिक मन मोद बढ़ावन॥
मंगल गल भुज डारि बदन सों बदन मिलावनि।
मंगल चुम्बन लेनि बिहंसि हंसि कंठ लगावनि॥
आलिंगन परिरम्भन मिलनि मंगल कोक कलानि कढ़ि।
'हरिचन्द' महा मंगलमयी जुगल केलि रसरेलि बढ़ि॥1॥

मंगल प्रातहि उठे कछुक आलस रस पागे।
सिथिल बसन अरु केस नैन घूमत निसि जागे॥
भुज तोरनि जमुहानि लपटि कै अलस मिटावनि।
भूखन बसन सँवारि परस्पर नैन मिलावनि॥
कछु हंसनि सीकरनि लाज सों मुरि अंग पर गिरि परनि।
'हरीचन्द' महा मंगलमयी प्रात उठनि पग धरि धरनि॥2॥

मंगल सखी समाज जानि जागे उठि धाई।
जल झारी पिकदान वस्त्र दरपन लै आई॥
करि मुजरा बलिहार भईं लखि नैन रिसाई।
प्रगट सुरत के चिन्ह देखि कछु हंसी हंसाई॥
मुख धोइ पाग कसि आरसी देखत अलक संवारहीं।
'हरिचन्द' भोग मंगल धर्‌यौ आरोगत मन वारहीं॥3॥

मंगल भेरि मृदंग पनव दुन्दुभि सहनाई।
चंग मुचंग उपंग झांझ झालरी सुहाई॥
गोमुख आनक ढोल नफीरी मिलि कै साजै।
मंगलमयी मुरलिका बिच बिच अजुगुत बाजै॥

जै करति हाथ जोरे सबै मुरछल बिंजन ढारहीं।
'हरिचन्द' महा मंगलमयी मंगल आरति बारही ॥4॥

मंगल जुगल नहाइ बिबिध सिंगार बनावत।
मंगल आरसि देखि फूल माला पहिरावत ॥
मंगल गोपी गोपी बल्लभ भोग लगावत।
मंगल ग्वालिन आइ दूध मथि घैया प्यावत ॥
मंगल भोजन बहु बिधि करत उठि बीरी मुख मैं धरत।
मंगल उगार 'हरिचन्द' लै राज भोग आरति करत ॥5॥

मंगल बन के फल अनेक भीलिनि लै आई।
मंगल जुगल समेत फूल-माला पहिराई ॥
मंगल सन्ध्या भोग अरपि आरति मिलि करहीं।
मंगलमय सिंगार बहुरि निसि हलको धरहीं ॥
मंगल व्यारू पै पान करि बीरी खात जंभात हैं।
'हरीचन्द' सैन आरति करत सखि सब निरखि सिहात हैं ॥6॥

मंगल बृन्दा बिपिन कुंज मंगलमय सोहै।
मंगल गिरि गिरिराज वृक्ष मंगल मन मोहै ॥
मंगल बन सब ओर झरत झरना सब मंगल।
मंगल पच्छी बोल सुमंगल फूल पत्र फल ॥
मंगल अलि कुल गावत फिरत मंगल केकी नाचहीं ।
'हरिचन्द' महामंगल सदा नित बृन्दाबन मांचहीं ॥7॥

मंगल जमुना नीर कमल मंगलमय फूले।
मंगल सुन्दर घाट बंध भंवरे जहं भूले ॥
मंगलमय नन्द गांव महाबन मंगल भारी।
मंगल गोकुल सबै ओर उपबन सुखकारी ॥
मंगल बरसानो नित नवल मंगल रावलि सोहई।
'हरिचन्द' कुंड तीरथ सबै मंगलमय मन मोहई ॥8॥

मंगल श्री नन्दराय सुमंगल जसुदा माता।
मंगल रोहिनि मंगलमय बलदाऊ भ्राता ॥

मंगल श्री वृषभानु सुमंगल कीरति रानी।
मंगल गोपी ग्वाल गऊ हरि को सुखदानी॥
मंगल दधि दूध अनेक बिधि मंगल हरि गुन गावहीं।
'हरिचन्द' लकुट अरु मुकुट धरि मंगल धेनु बजावहीं॥9॥

मंगल वल्लभ नाम जगत उधस्यो जेहि गाए।
विष्णु स्वामि पथ परम महा मंगल दरसाए॥
मंगल विट्ठलनाथ प्रेम पथ प्रगटि दिखायो।
मंगल कृष्ण वियोग दुःख अनुभव प्रगटायो॥
मंगल दैवी जन दुखी लखि दान चलायो नाम को।
'हरिचन्द' महामंगल भयो दुःख मेट्यौ सब जाम को॥10॥

मंगल गोपीनाथ रूप पुरुषोत्तम धारी।
श्री गिरिधर गोविन्द राय भक्तन दुखहारी॥
बालकृष्ण श्री गोकुलेस रघुनाथ सुहाए।
श्री जदुपति घनस्याम सात बपु प्रगट दिखाए॥
मंगलमय बल्लभ बंस अटल प्रेम मारग रह्यौ।
'हरिचन्द' महा मंगलमयी बेद सार जिन मथि कह्यौ॥11॥

मंगलमय बल्लभी लोग भय सोग मिटाए।
मंगल माला कंठ तिलक अरु छाप लगाए॥
मंगलमय सत्संग कीरतन कथा सुहानी।
मंगल तिनकी मिलनि कहनि बोलनि सुखदानी॥
मंगल अनुराग सुनयन जल हसनि नचनि गावनि रमनि।
'हरिचन्द' जगत सिर पांव धरि मंगल लीला मैं गमनि॥12॥

मंगल गीता और भागवत सों मथि काढ़ी।
मंगल मूरति जुगल चरित विरुदावलि बाढ़ी॥
द्वादश द्वादस अर्ध पदी जो प्रातहि गावै।
मंगल बाढ़ै सदा अमंगल निकट न आवै॥
मंगल चन्द्रावलिनाथ की केलि कथा मंगल मई।
मंगल बानी 'हरिचन्द' सबही को मंगल भई॥13॥

सुमिरौं बल्लभ रूप महा मंगल फल पावन।
गौर गुप्त बपु प्रगट श्याम लोचन मन भावन॥
दृग बिसाल आजानु बाहु पद्मासन सोहै।
गल तुलसी की माल देखि सबका मन मोहै॥
सिर तिलक बाहु पर छाप बर केस बंध्यौ सिर राजई।
त्रय ताप जनन को दूर सों देखत ही दुरि भाजई॥14॥

जुगल केलि रस मत्त हंसत लखि ज्ञान खलन कहं।
दैविन पै अति करुन रौद्र मायाबादिन पहं॥
बादिन पैं उत्साह भयद असुरन कहं पग पग।
दीन जीव पैं घृणित अचम्भित देखि विमुख जग॥
अति शान्त भक्तवत्सल परम सख्य बिबुध जन सों करत।
जग हास्य सिखावत मुख मधुर आनन्दमय रस बपु धरत॥15॥

हृदय आरसी मांहि जुगल परतच्छ लखावत।
जग उधार मैं रसिक माल कर सोभा पावत॥
चरन कमल तल सकल बिमल तीरथ दरसावत।
मुख सों श्री भागवत गूढ़ आसय नित गावत॥
घेरे चहुं दिसि सब सन्तजन जे हरि रस भीजे रहत।
कर ज्ञान मुद्रिका धारिकै तिनसों कृष्ण कथा कहत॥16॥

कबहुं अचल स्वै रहत मौन कछु मुख नहिं भाखत।
कबहुं बाद झर लाइ खंडि माया मत नाखत॥
जुगल केलि करि याद हंसत कबहूं गुन गावत।
कम्पादिक परतछ संचारी भाव जनावत॥
तन रोम पांति उघटित सदा गद्गद हरि गुन मुख कहत।
लखि दीन दसा जग जीय की उमगि निरन्तर दृग बहत॥17॥

तीरथ पावन करन कबहुं भुव पावन डोलत।
श्री भागवत सुधा समुद्र मथि कबहूं बोलत॥
ग्रन्थ रचत एकाग्र चित्त करि बांचि सुनावत।
कबहुं बैठि एकान्त बिरह अनुभव प्रगटावत॥
सेवा करि पीतम की कबौं सिखवत बिधि सेवन प्रगट।
कबहूं सिच्छत जन आपुने बिबिध वाक्य रचना उघट॥18॥

मोर कुटी मंह बैठि खिलावत कबहुं लाल कहं।
खेलत धरि त्रैरूप बाल तन बनि मोहन तहं॥
हरे कुंज बन छए बितानन तनी लता सब।
झुके मोर चहुं ओर सुनन कों तहं किंकिन रब॥
तिन मध्य खिलौना कर लिए चुचकारत बालकन जब।
किलकाइ चलहिं आनन्द भरि निरखत नैन सिरात तब॥19॥

बन उपबन एकान्त कुंज प्रति तरु तरु के तर।
तीर तीर प्रति कूल कूल कुंडन पैं सर सर॥
गुफा दरी गिरि घाट सिखर गौवन की गोहर।
गोकुल ब्रज के गांव गांव ब्रज बासिन घर घर॥
हरि जहं जहं जो लीला करी तहं तहं सोइ अनुभव करत।
ब्रज बासिन गौवन ब्रज पसुन संग ताहि बिधि अनुसरत॥20॥

सेवा मैं हरि सों कबहूं रस भरि बतरावत।
कबहुं सुतन सों हरि सेवा की रीति बतावत॥
ब्रह्मवाद कों कबहुं बहुत बिधि थापन करहीं।
लोक सिखावन हेतु कबहुं सन्ध्या अनुसरहीं॥
विश्राम करत कबहूं जबै अमित होइ तब भक्त जन।
गुन गावत चरन पलोटहीं करहिं कोउ मुरछल बिजन॥21॥

राख्यौ श्रुति की मेड़ शास्त्र करि सत्य दिखायो।
द्विज कुल धन धन कियो भूमि को मान बढ़ायो॥
दैवी जन अबलम्ब दियो पंडित परितोषे।
वैष्णव मारग उदय कियो बिरही जन पोषे॥
ब्रज भूमि लता तरु गिरि नदी पसु पंछी सों नेह करि।
ब्रज वासी जन अरु गउन सों प्रेम निबाह्यौ रूप धरि॥22॥

केसादिक सों बाम श्याम दक्षिन छबि पावत।
शिव बिराग सों प्रगट देवरिषि से गुन गावत॥
ग्रन्थ रचन सों व्यास मुक्त सुक रूप प्रकासत।
वैष्णव पथ प्रगटाइ विष्णु स्वामी प्रभु भासत॥
मुख शास्त्र कहन बिरहागि कों प्रगटावन सों अगिन सम।
मनु सकल तत्व पिंडी बन्यौ सोभित श्री बल्लभ परम॥23॥

मनहुं देवगन तत्व काढ़ि यह रूप बनायो।
श्री भागवत सुधा समुद्र मथि कै प्रगटायो॥
पिंडभूत बैराग रूप निज प्रगट दिखावत।
ज्ञान मनहुं घन होइ सिमिटि कै सोभा पावत॥
यह मनहुं प्रेम की पूतरी इक रस सांचे में ढरी।
प्रेमीजन नयनन सुख महा प्रगटावत निज बपु धरी॥24॥

तिलंग बंस द्विजराज उदित पावन बसुधा तल।
भारद्वाज सुगोत्र यजुर शाखा तैतिरि वर॥
यज्ञनरायन कुलमनि लक्ष्मन भट्ट तनूभव।
इल्लमगारू गर्भरत्न सम श्री लक्ष्मी धव॥
श्री गोपिनाथ बिट्ठल पिता भाष्यादिक बहु ग्रन्थ कर।
श्री विष्णुस्वामि पथ उद्धरन जै जै बल्लभ रूप वर॥25॥

इमि श्री बल्लभ रूप प्रात जो सुमिरन करई।
लहै प्रेम रस दान जुगल पन मैं अनुसरई॥
द्वादस द्वादस अर्ध पदी प्रातहि उठि गावै।
दुबिध बासना छांड़ि केलि रस को फल पावै।
यह प्राननाथ की प्रथम ही सुमिरन सब मंगलमई।
बानी पुनीत 'हरिचन्द' की प्रेमिन को मंगल भई॥26॥

[सन 1873 ई. में प्रकाशित। पुस्तिका रूप में हरिप्रकाश यन्त्रालय, नैपाली खपरा, काशी से प्रकाशित। इस पुस्तिका में प्रकाशन काल का उल्लेख नहीं है।—संपा.]

दैन्य प्रलाप

सन 1873 ई.

दैन्य प्रलाप

जग में काको कीजै तोस।
जासों तनकहु बिरति कीजिए साई धारत रोस ॥
इन्द्रिय सब अपुनी दिसि खींचत चाहि चाहि निज भोग।
मन अलभ्य बस्तुनहू भोगत मानत तनिक न सोग ॥
कहति प्रतिष्ठा हमहिं बढ़ाओ चहति कामना काम।
ईर्षा कहति तुमहि इक जीअहु करि औरन बे काम ॥
जागत सपन काय वाचा सों मन सों भोगत धाय।
घिसि गईं इंद्री प्रान सिथिल भे तौहू नाहिं अघाय ॥
जौन मिलत कै तन बल नहिं तौ दूरहि सों ललचाय।
जिमि सतृष्ण ह्वै लखत मिठाइन स्वान लार टपकाय ॥
सब सों थकि कै करत स्वर्ग के अमृतादिक मैं चाह।
धिक धिक धिक 'हरिचन्द' सतत धिक यह जग काम अथाह ॥1॥

पूरबी

तन पौरुष सब थाका मन नहिं थाका हो माधो।
केस पके तन पक्यौ रोग सो मनुआ तबहु न पाका ॥
अर्जुन भीम सरिस चाहत यह करन विषय रन साका।
बीती रैन तबौ मतवारा घोर नींद में छाका ॥
हारि गयो पै झूठहि गाड़े अबहूं विजय पताका।
'हरीचन्द' तुम बिनु को रोकै ऐसे ठय को नाका ॥2॥

नर तन सब औगुन की खान।
सहज कुटिल गति जीवहु तामैं यामैं श्रुति परमान ॥
स्वारथ पन आग्रह मलीनता लोभ काम अरु क्रोध।
कामादिक सब नित्य धरम हैं तन मन के निरबोध ॥

तापैं सहधरमिन सों पूरयौ भो संसार सहाय।
अन्ध आसरे चल्यौ अन्ध के कहो कहा लौं जाय॥
करि करुना करुनानिधि केसव जो पै पकरो हाथ।
तौ सब बिधि 'हरिचन्द' बचै नतु डूबत होइ अनाथ ॥3॥

नर तन कहो सुद्धता कैसी।
कितनहु धोओ पोंछौ बाहर भीतर सब छिन पैसी॥
कारन जाको मूत रही मल ही मैं लिपटि अनैसी।
ताकों जल सों सुद्ध करत तिनकी ऐसी की तैसी॥
दैहिक करमन सों न बनै कछु ता गति सहज मलै सी।
'हरीचन्द' हरि नाम भजन बिनु सब वैसी की वैसी ॥4॥

बिरद सब कहां भुलाए नाथ।
पावन पतित दीन जन रच्छन जो गाई श्रति गाथ॥
जानहु सब कुछ अन्तरजामी धाइ गहौ अब हाथ।
'हरीचन्द' मेटहु निज जन की बिधिहु लिखी जौ माथ ॥5॥

तुमसों कहा छिपी करुनानिधि जानहु सब अन्तर गति।
सहज मलिन या देह जीव की सहजहि नीच गामिनी जो मति॥
तन मन सपनहुं सो लोभी की दीन बिपत गन में रति।
निरलज जितने होत पराजित तितनो ही लपटति अति॥
तापै जौ तुमहूं बिसराओ तजि निज सहज बिरद तति।
तौ 'हरिचन्द' बचै किमि बोलहु अहो दीन जन की पति ॥6॥

देखहु निज करनी की ओर।
लखहु न करनी जीवन की कछु एहो नन्दकिसोर॥
अपनाए की लाज करहु प्रभु लखहु न जन के दोस।
निज बाने को बिरद निबाहो तजहु हीन पर रोस॥
दीनानाथ दयाल जगतपति पतित उधारन नाथ।
सब बिधि हीन अधम 'हरिचन्दहि' देहु आपुनो हाथ ॥7॥

करहु उन बातन की प्रभु याद।
जो अरजुन सों भारत रन में कही थापि मरजाद॥
कैसहु होय दुराचारी पै सबै मोहिं अनन्य।
ताही कहं तुम साधु गुनहु या जग मैं सोई धन्य॥

शीघ्र धरम मति शान्ति पाइहैं जो राखत मम आस।
अरजुन मम परतिज्ञा जानहु नहिं मम भक्त बिनास॥
छांहि धरम सब लोक वेद के मम सरनहिं इक आउ।
सब पापन सों तोहिं छुड़ैहौं कछु न सोच जिय लाउ॥
कही विभीषन सरन समय मैं सोऊ सुमिरहु गाथ।
लछिमन हनूमान आदिक सब याके साखी नाथ॥
हम तुमरे हैं कहै एकहू बार सरन जो आइ।
ताहि जगत सों अभय करत हम सबहि भांति अपनाइ॥
यहू कह्यौ मम जनहिं बासना उपजै और न हीय।
जिमि कूटे चुरए धानन मैं उपजै नाहीं बीय॥
यहू कह्यौ तुम मो कहं प्यारे निह किंचन अरु दीन।
यहू कह्यौ तुम हमहिं जीव के प्रेरक अन्तर लीन॥
कह लौं कहौं सुनौ इतनी अब सत्यसन्ध महराज।
'हरीचन्द' की बार भुलाई क्यौं वे बातें आज॥8॥

तिनकों रोग सोग नहिं व्यापै जे हरि चरन उपासी।
सपनहु मलिन न होइ सदा जे कलप तरोवर बासी॥
हरि के प्रबल प्रताप सामुहें जगत दीनता नासी।
'हरीचन्द' निरभय बिहरहिं नित कृष्ण दास अरु दासी॥9॥

[भक्तिसूत्र बैजयन्ती के अन्त में यह कविता दी गई थी, जो सन 1873 ई. में प्रकाशित हुई थी।]

उरहना

प्राननाथ तुम बिनु को और मान राखै।
जिन सों वा मुख सों को प्यारी कहि भाखै॥
प्रति छन को नयो नयो अनुभव करवावै।
कौन जो खिझाइ कै रोवाइ कै हंसावै॥
संशय सागर महान डूबत लखि धाई।
कौन जो अवलंब देहि तुम बिनु ब्रजराई॥
सुत पितु भव मोह कौन मेटे चित लेई।
मूरख कहवाइ जगत पंडित गति देई॥
लोक वेद झगरन के जाल मैं बंधायो।
कौन तुम बिनु करि निज अनुभव सुरझायो॥
भव अथाह बहे जात लखि कै चित माहीं।
कौने करि मेंड़ धरी निज बिसाल बाहीं॥
झूठे जग कहत मर्‌यो चित सन्देह आयो।
'हरीचन्द' कौन प्रगटि सांचो कहवायो॥1॥

अघी को पीठ ही चहिए।
पाप बसत तुव पीठ मांहिं यह बेदन हू कहिए॥
बुद्ध होय निन्धो वेदहि तब सों मुख नहिं लहिए।
'हरीचन्द' प्रिय मुख न दिखाओ रूठे ही रहिए॥2॥

अहो मोहिं मोहन बहुत खिलायो।
अब लौं हाथ कियो नाहीं बध बातन ही विलमायो॥
जानि परी अपराध हमारो तोहिं सुमिरत ह्वै आयो।
ताही सों रूठि रूठि कै अब लौं प्रान न पीय नसायो॥
हमहूं जानत मो अघ आगे लघु सम सब दुःख आयो।
'हरीचन्द' पै बिरह तुम्हारो जात न तनिक सहायो॥3॥

अहो हरि निरदय चरित तुम्हारे।
तनिक न द्रवत हृदय कुलिसोपम लखि निज भक्त दुखारे ॥
दयानिधान कृपानिधि करुना सागर दीन पियारे।
यह सब नाम झूठही वेदन बकि बकि वृथा पुकारे ॥
गोपीनाथ कहाइ न लाजत निरलज खरे सुधारे।
'हरीचन्द' तुम्हरे कहवायें मरियत लाजन मारे ॥4॥

सुनौ हम चाकर दीनानाथ के।
कृपा निधान भक्त वत्सल के पोषित पालित हाथ के ॥
पिया न पूछत तऊ सुहागिनि बनि सेंदुर दै माथ के।
दीन दया लखि हंसौ न कोऊ सुनौ सबैरे साथ के ॥
वा घर के सेवक ऐसे ही जीवत स्वासा भत्थ के।
'हरीचन्द' निरलज स्वै गावत निरलज हरि गुन गाथ के ॥5॥

साहब रावरे ये आवैं।
जिन्हें देखि जय के करुना सों नैनन नीर बहावैं ॥
कोऊ हंसै बिपति पै कोऊ दसा बिलोकि लजावैं।
कोऊ घृणा करै कोऊ मूरख कहि कै हाथ बतावैं ॥
देखि लेहु इक बार इनहिं तुम नैना निरखि सिरावैं।
'हरीचन्द' आखिर तो तुमरे कोऊ भांति कहावैं ॥6॥

जोड़ को खोज लाल लरिये।
हम अबलन पैं बिना बात ही रोस नहीं करिये ॥
मधुसूदन हरि कंस निकन्दन रावण हरन मुरारि।
इन नावन की सुरति करो क्यों ठानत हमसों रारि ॥
निबलन कों बधि जस नहिं पैहो सांची कहत गुपाल।
'हरीचन्द' व्रज ही पैं इतने कहा खिसियाने लाल ॥7॥

पियारे बहु विधि नाच नचायो।
यह नहिं जानिपरी केहि सुख के बदले इतो दुखायो ॥
ब्रज बसि कै सब लाज गंवाई घर घर नाव चलायो।
हम कुलबधुन कलंकिन कुलटा डगरै डगर कहायो ॥
हम जानी बदनामी दै कै करिहै जनम सहायो।
ताको फल यों उलटो दीनो भलो निबाह निभायो ॥
'हरीचन्द' जेहि मीत कह्यौ सोइ निठुर बैरि बनि आयो ॥8॥

जुरे हैं झूठे ही सब लोग।
जैसे स्वामी परिकर तैसे तैसोही संयोग॥
वे तो दीनानाथ कहाए करि इत उत कछु काज।
एक एक की लाख लाख इन गाई तजि कै लाज॥
जुरे सिद्ध साधक ठगिया से बड़ो जाल फैलायो।
मूड्यौ जिन्है मिटायो तिनकों जग सो नाम धरायो॥
आजु नांहि तो कल था आसा ही में दीनहि राख्यौ।
हरीचन्द मन लै निरमोहिन स्वेत कृष्ण नहिं भाख्यौ ॥9॥

न जानी ऐसी हरि करिहैं।
हमरे ह्वै दूजन के ह्वैहैं दया न जिअ धरिहैं॥
होत सामुनो जिन हंसि चितवत भाव अनेक कियो।
तिन अब मिलतहि सकुचि इतै सों मुख हू फेरि लियो॥
मान्यौ तिन्है काम नहिं हम सों तासो निठुर भए।
हरीचन्द ब्रजनाथ नाम की लाजहि क्यौं मिटए ॥10॥

बीरता याही मैं अटकी।
हम अबलन पैं जोर दिखावत यहै बान टटकी॥
याही हित नित कसे रहत कटि कसनि पीत पटुकी।
'हरीचन्द' बलिहार सूरता पिय नागर नट की ॥11॥

लाल क्यौं चतुर सुजान कहावत।
करि अनीति निरलज से डोलत क्यौं नहिं बदन छिपावत॥
चतुराई सब धूर मिलाई तौहू गरब बढ़ावत।
'हरीचन्द' अबलन को बधि कै कैसे अकरि दिखावत ॥12॥

बेनी हमारे बांट परी।
धन धन भाग लाइहैं नैनन रहिहैं हृदय धरी॥
लखि मुख चूमि अधर भुज दै भुज करौ सबै मिलि राज।
हमरे तौ बेनी को दरसन सिद्ध करै सब काज॥
क्यौं कविगन नागिन की उपमा मेरी प्यारिहिं देत।
हमकों तो इक यहै जिआवत राखत हमसों हेत॥
क्यौं नहिं सुख मानैं थोड़े ही जो बिधि बिरच्यौ भाग।
राज देखि दूजेन को क्यौं हम करैं अकारथ लाग॥

बेनी हमरी हमरो जीवन बेनी ही के हाथ।
जब तुम मुख फेरत तब बेनी रहत हमारे साथ॥
भलहिं रूप सागर तुम्हरो सो खारो मेरे जान।
'हरीचन्द' मोहिं कल्प तरोवर कामद बेनी-न्हान॥13॥

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के 15 अक्टूबर, सन 1873 ई. के अंक में प्रकाशित]

देवी छद्मलीला

सन 1873 ई.

देवी छद्मलीला

श्री राधा अति सोचत मन में।
कौन भांति पाऊं नन्द नन्दन पिया अकेले बृन्दाबन में॥
वे बहु नायक रस के लोभी उनको चित्त अनेक तियन में।
घेरे रहति सौति निसि बासर छोड़त नाहिं एकहू छन में॥
हमरे तो इक मोहन प्यारे बसे नैन में तन में मन में।
'हरीचन्द' तिन बिन क्यों जीवैं दिन बीतत याही सोचन में॥1॥

तब ललिता इक बुद्धि उपाई।
सुन री सखी बात इक सोची सो मैं तुम सों कहत सुनाई॥
हम सब बनत ग्वाल अरु पंडित देवी आपु बनहु सुखदाई।
तिन सों जाय कहत हम अद्भुत बृन्दाबन देवी प्रगटाई॥
अति परतच्छ है वाकी ताकों देखन चलहु कन्हाई।
'हरीचन्द' यह छल करिकै हम लावन तिनकों तुरत लिवाई॥2॥

यहै बात राधा मन भाई।
आपु बनी बृन्दाबन देवी सखियन को तहं दियो पठाई॥
बैठी आसन करि मन्दिर मैं सखियन की द्वै भुजा बनाई।
बेनु शृंग पुनि लकुट कमल लै चार भुजा तहं प्रगट दिखाई॥
माथे कीट मोर पखवा को सारी लाल लसी सुखदाई।
रतनन के आभरन बने तन जिनपै दृष्टि नाहिं ठहराई॥
मौन साधि दोउ नैनन थिर करि मूरति बनी महा छवि छाई।
'हरीचन्द' देविन की देवी आज परम परमा प्रगटाई॥3॥

तब सखियन निज भेस बनायो।
कोउ बनि ग्वाल बनी कोउ पंडा पुरुषन ही को रूप सुहायो॥

बृन्दाबन में सब मिलि पहुँची जहं मन मोहन धेनु चरावत।
तिन सों जाइ कहन यों लागीं सुनहु लाल इक बात सुनावत॥
अचरज एक बड़ो भयो बन मैं बट तर इक देवी प्रगटानी।
अति परतच्छ कला है वाकी महिमा कछू न जात बखानी॥
इक आवत इक जात नगर तें भीर भई लाखन की भारी।
जो जोइ मांगत सो सोइ पावत सांच कहत करि सपथ तिहारी॥
तुम त्रिभुवन के नाथ कहावत तासों ताहि बिलोकहु जाई।
'हरीचन्द' सुनि अति अचरज सों तुरत चले उठि त्रिभुवन राई॥4॥

मन मोहन पूजन साज लिए दरसन कों देवी के आए।
तहां भीड़ देखि नर नारिन की मन में अति ही बिस्मै छाए॥
इक आवत हैं इक जात चले इक पूजत माला फूल लिए।
इक अस्तुति दोउ कर जोरि करै इक मुख सों जै जैकार किए॥
तिन मोहन सों यह बात कही तुमहूं पूजा को साज करौ।
मुंह मांगो फल बरदान मिलै जो तनिकहु उर मैं ध्यान धरौ॥
सुनिकै मनमोहन देवी के तब पूजन को सब सांज कियो।
'हरीचन्द' सुअवसर देखि तहां बरदान भक्ति को मांग लियो॥5॥

न्यौते काहू गांव जात ही जसुमति हू निकसी तहं आई।
भीड़ देखि पूछत सखियन सों यहां जुटीं क्यौं लोग लुगाई॥
काहु कह्यौ अजू या बट सों देवी एक नई प्रगटाई।
ताकी जाप करन सब आवैं नर नारी इत हरख बढ़ाई॥
सुनि अति अचरज सों जसुदा तब देवी के दरसन को धाई।
'हरीचन्द' मालिन सों लै कै फूल बतासा पूजत जाई॥6॥

हरिहु मातु ढिग आइ गए।
कहत सुनत चरचा देवी की सब मिलि भीतर भवन भए॥
दरसन करि देवी को पूज्यौ सब मिलि जै जैकार दए।
'हरीचन्द' जसुदा माता तब अस्तुति ठानी भगति लए॥7॥

चिरजीओ मेरो कुंवर कन्हैया।
इन नैनन हौं नित नित देखों राम कृष्ण दोउ भैया॥
अटल सोहाग लहो राधा मेरी दुलहिन ललित ललैया।
'हरीचन्द' देवी सों मांगत आंचर छोरि जसोदा मैया॥8॥

जब राधा को नाम लियो।
तब मूरत कछु मन मुसुकानी पै कछु भेद न प्रगट कियो ॥
पूजा को परसाद सखिन तब जसुदा मोहन दुहुंन दियो।
'हरीचन्द' घर गई जसोदा कहि जुग जुग मेरो लाल जियो ॥9॥

मोहन जिय सन्देह यह आयो।
जब राधा को नाम लियो तब बाम्हन को गन क्यौं मुसकायो ॥
मूरति हू कछु जिय मुसकानी या मैं है कछु भेद सही।
प्यारी स्वेद सुगन्धहु या परसादी माला बीच लही ॥
पूछि न सकत संकोचन सब सों अति आतुर चित लाल भए।
'हरीचन्द' बृजचन्द सांवरे मन में महा सन्देह लए ॥10॥

तब मोहन यह बुद्धि निकासी।
जौ यह राधा तौ नहिं छिपिहै अन्त प्रीति ह्वैहै परकासी ॥
यह जिय सोचि हाथ बीरा लै देवी के अधरान लगायो।
नख सों अधर छुयो ताही छिन देवी तन पुलकित ह्वै आयो ॥
सखियन कह्यौ छुओ मत देविहि पहिने बसनन तुम सुखदाई।
'हरीचन्द' हंसि मौन भए तब कह्यौ भेद की गति मैं पाई ॥11॥

हाथ जोरि हरि अस्तुति ठानी।
जय जय देवी बृन्दाबन की जै जै गोपिन की सुखदानी ॥
तुम तो देवी अहौ बोलती आजु मौन गति नई लखानी।
जो अपराध भयो कछु हमसों ता ताको छमिए महरानी ॥
रूप उपासी बिना मोल को दास हमैं लीजै जिय जानी।
'हरीचन्द' अब मान न करिए यह बिनती लीजै मन मानी ॥12॥

हे देवी अब बहुत भई।
यह बरदान दीजिए हमको कछु मत कीजै आजु नई ॥
अब कबहूं अपराध न करिहौं तुव चरनन की सपथ करौं।
छमा करौं हौं सरन तिहारी त्राहि त्राहि यह दीन खरौ ॥
सह्यौ न जात बिरह यह कहिकै नैनन में हरि नीर भरे।
'हरीचन्द' बेबस ह्वै कै श्री राधा जू के चरन परे ॥13॥

देखि चरन पैं पीतम प्यारो।
छुटि गयो मान कपट कछु जिय में रह्यो छद्म को नाहिं संभारो ॥
धाइ उठाइ लियो भुज भरिकै नैनन नीर भर्‌यो नहिं ढारो।
तन कम्पत गद्‌गद मुख बानी कह्यौ न कछु जो कहन बिचारो ॥
रहे लपटाइ गाढ़ भुज भरिकै छूटत नहिं तिय हिए पियारो।
'हरीचन्द' यह सोभा लखि कै अपनो तन मन सहजहि वारो ॥14॥

पूछत लाल बोलि किन प्यारी।
क्यौं इतनो पाखंड बनायो ठग्यौ बड़ो ठगिया बनवारी ॥
प्यारी कह्यौ तुम्हारेहि कारन प्यारे श्रम यह कीन्हो भारी।
तुम बहु नायक मिलत कहूं नहिं ताही सों यह बुद्धि निकारी ॥
प्रेम भरे दोउ मिलत परस्पर मुख चूमत हैं अलकन टारी।
'हरीचन्द' दोउ प्रीति बिबस लखि आपुन पौ कीनो बलिहारी ॥15॥

सखियनहू निज बेस उतारयौ।
धाई सबै चारहू दिसि सों कहत बधाई तन मन वारयौ ॥
कोउ लाई सज्जा कोउ बीरी कोउन चंवर मोरछल ढारयौ।
कोउन गांठि जोरि कै दोउ कों एक पास लैके बैठारयौ ॥
दूलह बन्यौ पियारो राधा दुलहिन कों सिंगार संवारयौ।
'हरीचन्द' मिलि केलि बधाई गावत अति जिय आनन्द धारयौ ॥16॥

चिरजीओ यह अविचल जोरी।
सदा राज राजौ बृन्दाबन नन्द नन्दन बृषभानु किशोरी ॥
देत असीस सबै बृज जुवती करत निछावरि मनि गन छोरी।
आरति बारत धीर न धारत रहत रूप लखि कै तृन तोरी ॥
कुंज महल पधराइ लाल कों हटीं सबै बृज बासिनि गोरी।
मिलि बिलसत दोऊ अति सुख सों 'हरीचन्द' छबि भाखै को री ॥17॥

यह रस बृज मैं रहौ सदाई।
जो रस आजु रह्यौ कुंजन मैं छदम केलि सुख पाई ॥
नित नित गाओ री सब सखियां मोहन केलि बधाई।
'हरीचन्द' निज बानी पावन करन सुजस यह गाई ॥18॥

[रचनाकाल सन 1873 ई., बनारस प्रिंटिंग प्रेस से प्रकाशित]

प्रातःस्मरण

अप्रैल 1877 ई. से पूर्व

प्रातःस्मरण स्तोत्र

सुमिरौं राधाकृष्ण सकल मंगलमय सुन्दर।
सुमिरौं रोहिनि नन्दन रेवतिपति कर हलधर॥
जसुदा, कीरति, भानु, नन्द, गोपी समुदाई।
बृन्दावन गोकुल गिरिवर ब्रज भूमि सुहाई॥
कालिन्दी कलि के कलुष सब हारिनि सुमिरौं प्रेम बल।
ब्रज गाय बच्छ तृन तरु लता पसु पंछी सुमिरौं सकल ॥1॥

श्री गोपीजन रमण

सुमिरौं श्री चन्द्रावली मोहन प्रान पियारी।
श्री ललिता रस सलिता परम जुगल हितकारी॥
रस शाखा हरिप्रिया विशाखा पूरन कामा।
परम सभागा चन्द्रभगा, रस धामा भामा॥
श्री चम्पकलतिका, इन्दुलेखा राधा सहचरि सहित।
श्री स्वामिनि की आठौ सखी नित सुमिरौं करि प्रेम हित ॥2॥

अष्ट सखा छप्पय

श्रीदामा सुखधाम कृष्ण को परम प्रान प्रिय।
वसुदामा शुभ नाम दाम मनिमय जाके हिय॥
सुबल ब्रबल परिहास रसिक मंगल मधु, मंगल।
लोक सुखद ब्रज लोक कृष्ण अनुरूप कृष्ण फल॥
अरजुन पालक गोवत्स बहु ऋषभ बृषभ जूथाधिपति।
हरिजू के आठ सखा सदा सुमिरत मंगल होत अति ॥3॥

द्वारिका की लीला स्मरण

धाम द्वारिका कनक भवन जादव नर नारी।
उद्धव; सात्यकि, नारद, गरुड़ सुदर्शनचारी॥

रुक्मिनि, सत्या, भद्रा, शैव्या, नाग्नजिती पुनि।
जांबवती, लक्ष्मणा, मित्रबिंदा, रोहिणि गुनि॥
इन आदि नारि सोलह सहस इनके सुत परिवार सह।
प्रद्युम्न पार्थ अनिरुद्ध जुत सुमिरौं दुःख नासन दुसह ॥4॥

अथ लीला स्मरण

देवकि के घर जनमि नन्द घर में चलि आए।
बकी तृनावृत अघ बक बछ बृष केसि नसाए ॥
बाल रूप कालीमर्दन सुरपति मद भंजन।
गोचारक रस रास रमन गोपी मन रंजन ॥
कंसादि नास कर सकल भुव भार उतारन रूप धरि।
सुमिरौ लीलामय नन्द सुत अटल नित्य ब्रज बास करि ॥5॥

अथ अवतार स्मरण

मत्स कच्छ बाराह प्रगट नरहरि बपु बावन।
परशुराम श्री राम लक्ष्मण भरत शत्रुहन॥
पुनि बलराम सुबुद्ध कल्कि हरि दस बपु धारी।
चौबिस रूप अनेक कोटि लीला बिस्तारी॥
अवतारी हरि श्रीकृष्ण बपु शुद्ध सच्चिदानन्दघन।
नित सुमिरत मंगल होत अति सुख पावत सब भक्तजन ॥6॥

अथ समुदाय स्मरण

गंगा गीता शंख चक्र कौमोदकि पद्मा।
नन्दक सारंग बान पास पद्मा मुख सद्मा ॥
वंशी माला श्रृंग वेत्र पीताम्बरादि कल।
पुण्यधाम हरि वासर वैष्णव धर्म्म विगत मल ॥
हरि प्रेम दास्य विश्वास दृढ़ तिलक छाप माला सुमिरि।
तुलसी हरि प्रिय समुदाय भजि नित सुमिरौं उठि प्रात हरि ॥7॥

अथ श्री भागवत स्मरण

निखिल निगम को सार दिव्य बहु गुण गण भूषित।
आदि अनादि पुरान सरस सब भांति अदूषित ॥
शुक मुख भाखित मुक्त कथा परमारथ सोधक।
ब्रह्म ज्ञानमय सत्यवती नन्दन मन बोधक ॥

दस लक्षन लक्षित पाप हर द्वादस शाखा सहित वर।
सुमिरौं अष्टादस सहस श्री ग्रन्थ भागवत मोह हर ॥8॥

अथ प्राचीन भक्त स्मरण

सुमिरौं शुक नारद शिव अज नर व्यास परातर।
बालमीक पृथु अम्बरीष प्रहलाद पुन्य कर॥
पुंडरीक भीष्मक शौनक पाण्डव गंगा सुत।
हनूमान सुग्रीव विभीषन अंगद कपि जुत॥
शांडिल्य गर्ग मैत्रेय जय विजय कुमुद कुमुदाक्ष भजि।
हरि भक्त सुमिरि मन प्रात उठि नित प्रथमहि गृह काज तजि ॥9॥

अथ गुरु परम्परा स्मरण

सुमिरौं श्री गोपीपति पद पंकज अरुनारे।
श्री शिव नारद व्यास बहुरि शुकदेव पियारे॥
विष्णु स्वामि पुनि गुरु अवली सत सप्त सुमिरि मन।
बिल्वमंगल पुनि सुमिरौं थापन निज मत धरि तन॥
श्री वल्लभ बिट्ठल भय हरन पुष्टि प्रकाशक जग विमल।
सुमिरौं नित प्रेम परम्परा गुरुजन की निज भक्ति बल ॥10॥

अथ गुरु स्मरण

श्री वल्लभ सुमिरौं अरु श्री गोपीनाथ पियारे।
श्री बिट्ठल पुरुषोत्तम जग हित नर बपु धारे॥
श्री गिरिधर गोविन्द राय पुनि बालकृष्ण कहु।
गोकुलपति रघुपति जदुपति घनश्याम भक्ति लहु॥
लक्ष्मी रुक्मिणि पद्मावती पद रज नित सिर धारिए।
श्री वल्लभ कुल को ध्यान मन कबहूं नाहिं बिसारिए ॥11॥

अथ वैष्णन स्मरण

श्री निम्बारक रामानुज पुनि मध्व जय ध्वज।
नित्यानन्द अद्वैत कृष्ण चैतन्य व्यास भज॥
हित हरिबंश गदाधर श्री हरिदास मनोहर।
सूरदास परमानन्द कुम्भन कृष्णदास वर॥
गोविन्द चतुर्भुजदास पुनि नन्ददास अरु छीत कल।
नित सुमिरि प्रात गन उठत ही हरि भक्तन के पद कमल ॥12॥

दोहा

द्वादस द्वादस अर्द्ध पद प्रात पढ़ै जो कोय।
हरि पद बल 'हरिचन्द' नित मंगल ताको होय ॥13॥

[यह स्तोत्र हरिप्रकाश यन्त्रालय काशी से छपा था पर उसमें प्रकाशन वर्ष नहीं दिया गया है। अप्रैल 1877 ई. की कविवचन सुधा में इस स्तोत्र के छपने की सूचना दी गई है। निश्चय ही यह रचना अप्रैल 1877 के पूर्व की है।]

दानलीला

पिअ प्यारे चतुर सुजान मोहन जान दै।
प्रेमिन के जीवन प्रान मोहन जान दै॥
प्यारो गिरिधटियां एकान्त मैं राखी हैं सब घेर।
ऐसी तुम्हैं न चाहिए हो छांड़ौं होत अबेर॥
कैसे छांड़ैं ग्वालिनी हो लागत मेरो दान।
ताहि दिये बिन जाति हौ तुम नागरि चतुर सुजान॥
जो चाहौ सौ लाडिले हंसि हंसि गोरस लेहु।
सखन संग भोजन करौ औ मोहिं जान तुम देहु॥
योरे ही निपटी भले दै गोरस को दान।
परम चतुर तुम नागरी लियो हम कों मूरख जान॥
तुमकों मूरख को कहै हो यह का कहत मुरारि।
सकल गुनन की खान हौ कहा जानैं ग्वारि गंवारि॥
जद्यपि सकल गुन खानि हैं हो नागर नाम कहात।
पै तुम भौंह मरोर सों मेरे भूलि सकल गुन जात॥
तुम तो कछु भूलौ नहीं हो स्वारथ ही के मीत।
भूलीं सब ब्रज गोपिका हो करि तुम सौं प्रेम प्रतीत॥
क्यौं भूलीं सब गोपिका हो करि कै हमसौं प्रीति।
यह हम कों समुझाइए क्यौं भाखत उलटी रीति॥
हम उलटी नहिं भाखहीं हो समुझौ तुम चित चाह।
हम दीनन के प्रेम की हो कहा तुम्हैं परवाह॥
ऐसी बात न बोलिए झूठे हीं दोस लगाय।
बंधे तुम्हारे प्रेम में हम सों कैसे छुटि जाय॥
प्रेम बंधे जौ लाडिले हो तौ यह कैसो हेत।
हम व्याकुल तुम बिन रहैं नहिं भूले हूं सुधि लेत॥

गुरु जन की नित त्रास सों हम मिलत तुमहिं नहिं धाइ ।
जिय सों बिलग न मानियो हम मधुकर तुम बन राइ ॥
जा दिन बंसी बजाइकै हो लीनी हमैं बुलाय।
ता दिन गुरुजन भीति हो कित दीनी सबै बहाय ॥
गुप्त प्रीति आछी लगै हो प्रगट भए रस जाय।
जामैं या व्रज को कोऊ नहि देइ कलंक लगाय ॥
प्रगट भई तिहुं लोक मैं हो गोपी मोहन प्रीति।
सब जग मैं कुलटा भई तापै तुम कौ नाहिं प्रतीति ॥
गुरु जन घर मैं खीझहीं हो देत अनेकन गारि।
बाहर के देखत कहैं यह चली कलंकिन नारि ॥
करन देहु जग को हंसी हो चुप ह्वै हैं थकि जाइ।
त्रिन सो सब जग छाँड़ि कै हो मिलैं निसान बजाइ ॥
प्यारे तुमरे ही लिए सब जग को बेवहार।
तुम विरुद्ध सब छांड़िए हो मात पिता परिवार ॥
पै कठिनाई है यहै अरु होत यहै जिय साल।
तुम तो कछु मानौ नहीं मेरे बे परवाही लाल ॥
सब सों तो पहिले करो हो हंसि हंसि कै तुम चाह।
पै लालन सीखे नहीं तुम प्रेमी प्रेम निबाह ॥
तुम्हैं कहा कोऊ की परी भलेइ देइ कोउ प्रान।
तापैं उलटो आइके हो मांगत हम सों दान ॥
लोक लाज कुल धर्म्म हू तन मन धन बुधि प्रान।
सब तो तुम कौं दे चुकीं अब मांगत काको दान ॥
बहुत भई पिय लाड़िले अब क्यौंहू सहि नहिं जाय।
जानि दासिका आपुनी गहि लीजै भुजा बढ़ाय ॥
परम दीनता सों भरे सुनि प्यारी कै बैन।
पुलकित अंग गद्गद भयो हो उमगि चलै दोउ नैन ॥
धाइ चूमि मुख भुजन सों भरि लीनी कंठ लगाय।
'हरीचन्द' पावन भयो यह अनुपम लीला गाय ॥

[फरवरी सन 1874 ई. की हरिश्चन्द्र मैगजीन में प्रकाशित]

तन्मय लीला

राधे स्याम प्रेम रस भीनी।
नहि मानत कछु गुरुजन की भय लोक लाज तजि दीनी ॥
मगन रहत हरि रूप ध्यान मैं जलपय की गति लीनी।
'हरीचन्द' वलि प्रेम सराइत तन की सुधि नहिं कीनी ॥1॥

राधे भई आपु घनस्याम।
आपुन को गोविन्द कहत है छांड़ि राधिका नाम ॥
वैसेइ झुकि झुकि कै कुंजन मैं कबहुंक वेनु बजावै।
कबहुं आपुनोइ नाम लेइकै राधा राधा गावै ॥
कबहुं मौन गहि रहत ध्यान करि मूंदि रहत दोउ नैन।
'हरीचन्द' मोहन बिन व्याकुल नेकु नहीं चित चैन ॥2॥

प्यारी आपुनो ध्यान बिसार्‌यौ।
श्रीराधे श्रीराधे कहि कै कुंजन जाइ पुकार्‌यौ ॥
कबहुं कहत बृषभानुनन्दिनी मान न इतनो कीजै।
प्रान पियारी सरन आपु के कह्यो मानि मेरो लीजै ॥
कबहुं कहत हे सुबल सिदामा तोक कृष्ण मिलि आवो।
पनघट चलि रोको व्रजनारिन दधि को दान चुकावो ॥
कबहुं कहत मेरो सुरंग खिलौना राधे लियो चुराई।
कबहुं कहत मैया यह मोकों छोटी दुलहिन भाई ॥
कबहुं कहत हम सात दिवस गोबरधन करपै धार्‍यौ।
अघ वकधेनुक सकट पूतना इनको हमहिं संहार्‍यौ ॥
कबहुं कहत प्यारी जमुना तट कुंजन करौ विहार।
'हरीचन्द' भइ स्याम रूप सो तन की दसा बिसार ॥3॥

सखी सब राधा के गृह आंई।
प्रेम मगन तिन ताकहं देखी जातें अति पछितांई ॥
दोऊ नैन मूंद कै बैठी नेकहु नाहिन बोलै।
राधे राधे कहि कै हारी तबहुं न घूंघट खोलै ॥
बीजन करि बहुभांति जगायो लै लै वाको नाम।
सुनत नहीं बानी कछु इनकी उर बैठे घनस्याम ॥
जब गोपाल को नाम लियो तब बोलि उठी अकुलाई।
'हरीचन्द' सखियन आगे लखि कछुक गई सकुचाई ॥4॥

सखिन सों पूछत कित है प्यारी।
ललिता तू मोहिं आनि मिलावै हौं तेरी बलिहारी ॥
दैहौं अपुनो पीत पिछौरा वंसी रतन जराई।
'हरीचन्द' इमि कहत राधिका ध्यान मांह फिर आई ॥5॥

दसा लखि चकित भई ब्रजनारी।
राधा को कह भयो सखी री अपनी दसा बिसारी ॥
राधा नाम लिये नहिं बोलत कृष्ण नाम तें बोलै।
वैसे ही सब भाव जनावति हंसि हंसि घूंघट खोलै ॥
धन धन प्रेम धन्य श्रीराधा धन श्री नन्द कुमार।
'हरीचन्द' हरि के मिलिबे को करो कछू उपचार ॥6॥

तहां तब आइ गये घनस्याम।
मोर मुकुट कटि पीत पिछौरा गरे गुंज की दाम ॥
दसा देखि प्यारी राधा की अति आनन्द जिय मान्यौ।
सखियनहूं सों प्रेम अवस्था को सब हाल बखान्यौ ॥
प्रेम मगन बोले नन्द नन्दन सुनि प्यारे मैं आई।
जो तुम राधा नाम टेरिकै वेनु बजाइ बोलाई ॥
सुनतहिं नैन खोलिकै देख्यो स्याम मनोहर ठाढ़े।
कछुक प्रेम कछु सकुच मानिकै प्रेम बारि दृग बाढ़े ॥
दौरि कंठ मोहन लपटाई बहुत बड़ाई कीनी।
कर्‌यौ बोध प्यारी राधा को हृदय लाइ पुनि लीनी ॥
कर सों कर दै चले कुंज दोउ सखियन अति सुख पायो।
रसना करन पवित्र आपुनी 'हरीचन्द' जस गायो ॥7॥

[जनवरी सन 1874 ई. की हरिश्चन्द्र मैगजीन में प्रकाशित]

रानी छद्म लीला

नौमि राधिका पद जुगल तिन पद को बल पाइ।
उलटि छद्‌म लीला कहत 'हरीचन्द' कछु गाइ॥

करे कान्ह जिमि छदम सुहाए।
श्री प्यारी के मन अति भाए॥
तिमि प्यारीहू जीअ बिचारयौ।
पियहि ठगो यह चित निरधारयौ॥

निरधारि जिय करि छदम लीला सखिन को आज्ञा दई।
बनि कछुक ठगिए आजु लालहि रीति यह कीजे नई॥
नव भेस रानी को मनोहर सबन संग मिलि कीजिए।
अति चतुर मोहन तिनहुं को चलि आजु धोखा दीजिए॥

यह जिय सोच बिचारि कै गई एक बन मांहि।
वृन्दा को आज्ञा दई सजौ सबै चित चाहि॥

वृन्दा तब तहं आज्ञा पाई।
सब सामग्री सजी सुहाई॥
नव खंडन के महल बनाए।
राज साज तहं सजे सुहाए॥

सजि राज के सब साज बिच मैं सुभग सिंहासन धरयौ।
धरि क्रीट बैठी मध्य राधा भेस रानी को करयौ॥
बहु छड़ी मुरछल चंवर सूरजमुखी पंखा छत्र लै।
भईं सखी ठाढ़ी अदब सों चहुं ओर सब मिलि नजर दै॥

परवानो जारी कियो बन देविन के नाम।
अवहिं पकरि कै सखन बिन हाजिर लाओ श्याम॥

सुनि चहुं दिसि सखियां धाईं ।
मिलि वृन्दाबन मैं आईं॥
तहं सखन संग हरि जाईं ।
रहे आपु चरावत गाईं॥

जहां आप चारत गाय हे तहं सखि सबै मिलि कै गई।
करि साम दाम सुदंड भेदहि बात यह बरनी नई॥
जदुवंस की रानी नई इक कुमुद बन में है रही।
जागीर मैं तिन कंस नृप सों कुमुद बन की महि लही॥

तिन हम को आज्ञा दई करि के टेढ़ी डीठ।
कौन श्याम ऊधम करै मेरे बन मैं ढीठ॥

बिन मेरो हुकुम बतायो।
उन क्यौं बन गाय चरायो॥
फल फूल विपिन के जेते।
उन तोरि लिए क्यौं तेते॥

उन तोरि बन के फूल फल सब घास गउवन को दई।
तेहि पकरि हाजिर करौ यह हम सबन कों आज्ञा भई॥
यह सुनि हुकुम बिन सखा गन चलि तहां उत्तर कीजिए।
जो हुकुम रानी देहिं ताकों अदब सों सुनि लीजिए॥

सुनि आज्ञा जिय संग धरि कुछ तौ भय हिय लीन।
कछु रानी को नाम सुनि लालच हू मन कीन॥

तब संग सखिन के आए।
मुजरा करि नाम सुनाए॥
पग परि बोलीं सब आली।
यह हाजिर है बन माली॥

भयो हाजिर द्वार पै करि कृपा मुजरा लीजिए।
जो हुकुम याके होइ लायक महारानी, दीजिए॥
लखि भूमि मैं नत प्रान प्रिय कों कछु दया जिय मैं लई।
कछु जानि आयो नारि के ढिग कोप निज मन मैं भई॥

उत मोहन श्री राधिका सी रानी को देखि।
कछु जिय मैं संकित भए भौंह तनैनी पेखि॥

तब बोले मोहन प्यारे।
कहिए केहि हेत हंकारे॥
हम तो कछु दोस न कीनो।
तो क्यों मोहिं दूसन दीनो॥

क्यौं दियो दूसन मोहिं सुनि कै राधिका बोलत भई।
कछु क्रोध मैं निज छदम को नहिं ध्यान करि जिय मैं लई॥
जो झूठ बोलै नितहिं तासों और अपराधी नही।
तेहि दंड देनो उचित राजहि नीति यह जग की कही॥
सुनि रूखे तिय के बचन भरे श्याम जुग नैन।
हाथ जोड़ि गद्गद गिरा बोले मोहन बैन॥

हम झूठ कही कब बानी।
मोहिं कहि दीजै महरानी॥
सुनि बचन राधिका बोली।
जिय गांठि आपनी खोली॥

जिय गांठि आपनी खोलि राधा बात प्रीतम सों कही।
तुम कहत हम श्री राधिका तजि और तिय देखै नही॥
तो आजु सुनि क्यौं नाम रानी को यहां आए कहौ।
हौ परम कपटी श्याम तुम अब दरस नहिं मेरौ लहौ॥

यह कहि कै मुख फेरि कै राधा रही रिसाय।
तब ब्याकुल ह्वै धाइ पिय परतिया के पाय॥

भरि नैन अरज यह कीनी।
कर जोरि विनय विधि लीनी ॥
नित को अपराधी वारी।
तजि चरन जाय कित प्यारी ॥

कित जांहि तजि कै चरन यह दृग वारि भरि मोहन कह्यौ।
सुनि दीन बोलन प्रान पति की धीर नहिं कोउ को रह्यौ ॥
हंसि मिली प्यारी मान तजि निज रूप लै संग श्याम के।
मिलि करी क्रीड़ा विविध विधि नव कुंज सुख रस धाम के ॥

एहि विधि पीतम सों मिली नव बन छद्म बनाइ।
'हरीचन्द' पावन भयो यह रस लीला गाइ ॥

[फरवरी सन 1874 ई. की हरिश्चन्द्र मैगजीन में प्रकाशित]

स्वरूप चिन्तन

सन 1874 ई.

स्वरूप चिन्तन

जय जय गिरवर धरन जयति श्री नवनीत प्रिय।
जयति द्वारिकाधीश जयति मथुरेश माल हिय॥
जय जय गोकुलनाथ मदनमोहन पिय प्यारे।
जय गोकुल चंद्रमा सु बिट्ठलनाथ दुलारे॥
श्री बालकृष्ण नटवर नवल श्री मुकुंद दुःख द्वंद हर।
स्वामिनि सह ललित तृभंग गोपाललाल जय जयतिवर ॥1॥

जय जय श्री गिरिराज धरन श्रीनाथ जयति जय।
वेद दमन जय नाग दमन जय शमन भक्त भय॥
जय श्री राधा प्राणनाथ श्री वल्लभ प्यारे।
श्री बिट्ठल के जीव जयति जसुदा के बारे॥
श्री वल्लभ कुल के परम निधि भक्तन के बहु दुःख दरन।
नित नव निकुंज लीला करन जय जय श्रीगिरिवरधरन ॥2॥

जय जय श्री नवनीत प्रिय जय जसुदानन्दन।
जय नन्दांगन रिंगन कर जुवती मन फन्दन॥
जय कृत मृगमद तिलक भाल जय युक्त माल गल।
मुख मंडित दधि लेप घुटुरुवन चलत चपल चल॥
जय बाल ब्रह्म गोपाल जन पालक केहरि करज हिय।
जदुनाथ नाथ गोकुल बसन जै जै श्री नवनीत प्रिय ॥3॥

जय जय मथुरानाथ जयति जय भव भय भंजन।
जय प्रनतारति हरन जयति जय जन मन रंजन॥
भुज बिसाल सुभ चार भक्त जन के रखवारे।
शंख चक्र असि गदा पद्म आयुध कर धारे॥

श्री गिरिधर प्रिय आनन्दनिधि जयति चतुर्विध जूथपति।
गावत श्रुति गुन गन गाथ जय मथुरानाथ अनाथ गति ॥4॥

जय श्री बिट्ठलनाथ साथ स्वामिनि सुठि सोहत।
कटि धारे दोउ हाथ रास श्रम भरि मन मोहत॥
नृत्य भाव करि बिबिध जयति जुवती मन फन्दन।
जसुदा लालित जयति नन्द नन्दन आनन्दन॥
श्री गोविन्द प्रभु पालन प्रनत दीन हीन जन उद्धरन।
जय असुर दरन भक्तन भरन श्री बिट्ठल असरन सरन ॥5॥

जयति द्वारिकाधीस सीस मनि मुकुट बिराजत।
जयति चार कर चक्रादिक आयुध छबि छाजत॥
तिय दृग द्वै कर मूंदि जुगल कर बेनु बजायो।
कंठ चरन उपमान कम्बु अम्बुज मन भायो॥
जय प्रिया कंकनाकार कर चक्र गदा बंसी अभय।
जय बालकृष्ण प्रिय प्रान श्री द्वारिकेस महाराज जय ॥6॥

जय श्री गोकुलनाथ जयति गिरिराज उधारण।
बिबि कर वंस प्रसंस कम्बु गिरि बिबि कर धारन॥
रास रसिक नटराज रसिक मंडल मनि मंडन।
हरन इंद्र मद मान भक्त भव भयभर खंडन॥
श्री राधापति चन्द्रावली रमन शमन गजपति गमन।
श्री वल्लभ प्रिय रसमय जयति गोकुलेस मनमथ दमन ॥7॥

जय गोकुल चंद्रमा परम कोमल अग सोहन।
रास जूथपति बेनु बाद रत तिय मन मोहन॥
मधि नायक बृन्दाबनेस राका ससि पूरन।
नटवर नर्त्तक करन मत्त मनमथ मद चूरन॥
श्री रघुपति पति अति ललित गति कति जुवती मति जति हरन।
रतिरंजन नति प्रिय जयति श्री गोकुल ससि सांवर बरन ॥8॥

जय जय मोहन मदन मदन मद क़दन ताप हर।
सब सुख सोभा सदन रदन छवि कुंद निन्द कर॥

मरजादा उल्लंघि पुष्टि पथ थापन चाहत।
होइ त्रिभंगी प्रिया बदन मधु रस अवगाहत॥
बर बंसी कर स्वामिनि सहित करन प्रेम रंग भक्ति लय।
श्री घनश्याम आनन्द भरन जय श्री मोहन मदन जय ॥9॥

जय श्री नटवर लाल ललित नटवर बपु राजत।
निरतत तजि मरजाद देखि रति पति जिय लाजत॥
परम रसिक रस रास रास मंडल की सोभा।
पग कर सिर की हिलनि देखि ब्रज तिय मन लोभा॥
श्री बृन्दाबन नभ चन्द्रमा जन चकोर आनन्द कर।
नित प्रेम सुधा बरखन करन जय नटवर त्रय ताप हर ॥10॥

जय जय जय श्री बालकृष्ण जसुदा के बारे।
बल देवानुज नन्दराय के प्रान पियारे॥
नन्दालय कृत जानु पानि रिंगन बाला कृत।
कर मोदक मन मोद करन व्रत जुवती जन हित॥
जदुपति प्यारे आनन्दनिधि सब गोकुल के प्रान प्रद।
झंगुली टोपी मसिबिन्दु सिर बालकृष्ण जय जन सुखद ॥11॥

श्री मुकुन्द भव दुन्द हरन जय कुन्द गौर छवि॥
श्याम मिलित मधि जुगल भाव सो किमि बरनै कवि॥
बाल भाव परतच्छ तरुन अतर छवि छाजै।
कर मोदक मिस प्रिया अधर मधु स्वाद बिराजै॥
जदुनाथ मनोरथ पूर्ण कर श्री वल्लभ चिकुरस्थ बर।
श्री गिरिधर लालित ललित जय श्रीमुकुन्द दुःख दुन्द हर ॥12॥

जय जय श्री गोपाल लाल श्री राधानायक।
कोटि काम मद मथन भक्तजन सदा सहायक॥
प्रिया प्रनय भट गौर बदन सुन्दर छबि छाजत।
प्यारी रिझवन हेत मुरलि कर लिए बजावत॥
दरसन दै मन करसन करत ब्रज़ जुवती जन मन हरन।
काशी में बृन्दाबन करन जय गोपाल असरन सरन ॥13॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड 2, संख्या 3, दिसम्बर सन 1874 ई. में प्रकाशित]

स्फुट समस्या

हित दीन सों जे करैं धन्य तेई यह बात हिए मैं बिचारिए जू।
सुनिए न कही कछु औरन की अपनी विरुदालि सम्हारिए जू॥
हरिचन्द जू आपकी होय चुकी एहि कों जिय मैं निरधारिए जू।
हम दीन औ हीन जो हैं तो कहा अपुनी दिसि आपु निहारिए जू॥1॥

विधि मैं विध सों जब व्याह रच्यो नव कुंजन मंगल चांवर भे।
वृषभानु किसोरी भई दुलही दिन दूलह सुन्दर सांवर भे॥
'हरिचन्द' महान अनन्द बढ़्यौ दोउ मोद भरे जब भांवर भे।
तिन सों जग मैं कछु नाहि बनी जो न ऐसी बनी पै निछावर भे॥2॥

आंचर खोले लट छिटकाए तन की सुधि नहिं ल्यावति हौ।
धूलधूसरित अंग संक कछु गुरु जन का नहिं पावति हौ॥
'हरिचन्द' इत सों उत व्याकुल कबहुं हंसत कहुं गावति हौ।
कहा भयो है पागल सी क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥3॥

पहिले तो विन ही समझे तुम नाहक रोस बढ़ावति हौ।
फिर अपुनी करनी पैं आपुहि रोइ रोइ बिलखावति हौ॥
मान समै 'हरिचन्द' झिझकि पिय सब काहें पछतावति हौ।
तब तो मुख उनसों फेर्‌यो अब कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥4॥

बार बार क्यौं जानि बूझि तुम याही गलियन आवति हौ।
रोकि रोकि मग भई बावरी इतसों उत क्यौं धावति हौ॥
त्यों हरिचन्द भली रुजगारिन नाहक तक्र गिरावति हौ।
दही दही सब करौ अरे क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥5॥

कुंज भवन नहीं गहबर बन यह हां क्यौं सेज सजावति हौ।
मोहन देखि जानि आए क्यौं आदर को उठि धावति हौ॥
देखि तमालन दौरि दौरि क्यौं अपने कंठ लगावति हौ।
पात खरक सुनि कै प्यारी क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥6॥

जो तुम जोगिन बनि पी के हित अंग भभूत रमावति हौ।
सेली डारि गले नैनन में छकि कै रंग जमावति हौ॥
त्यौं 'हरिचन्द' जोगिया लैके कांधे बीन बजावति हौ।
तो फिर अलख अलख बोलौ क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥7॥

ती को भेख छांड़ि कै जो तुम मोहन बनिकै आवति हौ।
मोर मुकुट सिर पीत पिछौरी तैसोइ भाव दिखावति हौ॥
तौ 'हरिचन्द' कसर इतनी क्यौं बंसी और बजावति हौ।
राधे राधे रट लाओ क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥8॥

मूड़ चढ़ीं ब्रज चार चवाइन इनपैं क्यौं हंसवावति हौ।
धीर धरौ बलि गई प्रेम क्यौं अपुनो प्रगट लखावति हौ॥
'हरीचन्द' या बड़े गोप के बंसहिं क्यौं लजवावति हौ।
सखिन सामुने व्याकुल ह्वै क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥9॥

कौन कहत हरि नाहिं कुंज में सुनो झूठ बजावति हौ।
कौन गयो मधुबन यह हरि कों नाहक दोस लगावति हौ॥
बनि 'हरिचन्द' बियोगिनि सी सब बादहिं बिरह बढ़ावति हौ।
जित देखो तित प्राननाथ क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥10॥

श्री बन नित्य बिहार थली इत जोगिन बनि क्यौं आवति हौ।
बिन बान ही प्रेम आपुनो माला फेरि दिखावति हौ॥
नाम लेइ 'हरिचन्द' निठुर को नाहक प्रीति लजावति हौ।
राधे राधे कहौ सबै क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥11॥

पिय के कुंज नाहिं कोउ दूजी काहें रोस बढ़ावति हौ।
बिना बात निरदोसी पिय पैं भौहैं खींचि चढ़ावति हौ॥
कहा दिखैहो का तुम चोरी पकरी जो ऐंड़ावति हौ।
अपुनो ही प्रतिबिम्ब देखि क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ॥12॥

होइ स्वामिनी दूतीपन कों कैसे चित्त चलावति हौ।
हाथ न ऐहै ताहि गहत क्यौं घर के द्वार मुंदावति हौ ॥
प्रेम पगी 'हरीचन्द' बादहीं रचि रचि सेज बिछावति हौ।
अपुनो ही प्रतिबिम्ब देखि क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥13॥

चूरी खनकनि मैं बंसी कों नाहक धोखा लावति हौ।
बिना बात इन मोरन पै जिय मुकुट संक उपजावति हौ ॥
जाहु जाहु 'हरिचन्द' वृथा क्यौं जल मैं आगि लगावति हौ।
सुनिहैं लोग सबै घर के क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥14॥

बिना बात ही अटा चढ़ी क्यौं आंचर खोले धावति हौ।
सेजि साजि अनुराग उमगि क्यौं रचि रचि माल बनावति हौ।
पावस रितु नहिं जानति हौ 'हरिचन्द' वृथा भ्रम पावति हौ।
पिया नहीं ये घन उनये क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥15॥

नारी कबहुं पुरुष के अजगुत भाव दिखावति हौ।
कबहुं लाज करि बदन ढंकत हौ कबहूं बेनु बजावति हौ ॥
भई एक सौं द्वै सजनी 'हरिचन्दहि' अलख लखावति हौ।
राधे राधे कबौं कबौं तुम कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥16॥

श्याम सलोनी मूरति अंग अंग अद्भुत छवि उपजावति हौ।
नारी होय अनारी सी क्यौं बरसाने में आवति हौ ॥
जानि गई 'हरिचन्द' सबै जब तब क्यौं बात छिपावति हौ।
राधे राधे कहो अहो क्यौं कान्ह कान्ह गोहरावति हौ ॥17॥

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के मई सन 1874 ई. के अंक में प्रकाशित]

प्रबोधिनी

सन 1874 ई.

प्रबोधिनी

जागो मंगल रूप सकल ब्रज जन रखवारे।
जागो नन्दानन्द करन जसुदा के बारे॥
जागो बलदेवानुज रोहिनि मात दुलारे।
जागो श्री राधा के प्रानन तें प्यारे॥
जागो कीरति लोचन सुखद भानु मान वर्द्धित करन।
जागो गोपी गो गोप प्रिय भक्त सुखद असरन सरन ॥1॥

होन चहत अब प्रात चक्रवाकिनि सुख पायो।
उड़े बिहग तजि बास चिरैयन रोर मचायो॥
नव मुकुलित उत्पल पराग लै सीत सुहायो।
मन्थर गति अति पावन करत पंडुर बन धायो॥
कलिका उपबन बिकसन लगीं भंवर चले संचार करि।
पूरब पच्छिम दोउ दिसि अरुन तरुन कृत तेज धरि ॥2॥

दीप जोति भइ मन्द पहरुगन लगे जंभावन।
भई संजोगिन दुखी कुमुद मुद मुंदे सुहावन॥
कुम्हिलाने कच कुसुम बियोगिनि लगि सचुपावन।
भई मरगजी सेज लगे सब भैरव गावन॥
तन अभरन गन सीरे भए काजर दृग बिकसित सजत।
अधरन रस लाली साथ मुख पान स्वाद तजनो चहत ॥3॥

मथत दही ब्रज नारि दुहत गौअन ब्रज बासी।
उठि उठि कै निज काज चलत सब घोष निवासी॥
द्विज गन लावत ध्यान करत सन्ध्यादि उपासी।
बनत नारि खंडिता क्रोध पिय पेखि प्रकासी॥

गौ रम्भन धुनि सुनि बच्छगन आकुल माता ढिग चलत।
पशु बृन्द सबै बन को गवन करन चले सब उच्छलत ॥4॥

नारद तुंबरु षट बिभास ललितादि अलापत।
चारहु मुख सों वेद पढ़त बिधि तुव जस थापत ॥
इन्द्रादिक सुर नमत जुहारत थर थर कांपत।
व्यासादिक रिषि हाथ जोरि तुव अस्तुति जापत ॥
जय विजय गरुड़ कपि आदि गन खरे खरे मुजरा करत।
शिव डमरू लै गुन गाइ तुव प्रेम मगन आनन्द भरत ॥5॥

दुर्गादिक सब खरीं कोर नैनन की जोहत।
गंगादिक आचंवन हेत घट लाई सोहत ॥
तीरथ सब तुव चरन परस हित ठाढ़े मोहत।
तुलसी लीने कुसुम अनेकन माला पोहत ॥
ससि सूर पवन घन इन्दिरा निज निज सेवा में लगत।
रितुकाल यथा उपचार मैं खरेभरे भय सगवगत ॥6॥

बन्दीजन सब द्वार खरे मधुरे गुन गावत।
चंग मृदंग सितार बीन मिलि मन्द बजावत ॥
द्विज गन प नन्दराय अनेक असीस पढ़ावत।
निज निज सेवा मैं सब सेवक उठि उठि धावत ॥
पिकदान वस्त्र दरपन चंवर जलझारी उबटन मलय।
सोंधो सुगन्ध तंबोल लै खरे दास दासी निचय ॥7॥

मथे सद्य नवनीत लिये रोटी घृत बोरी।
तनिक सलोने साक दूध की भरी कटोरी ॥
खरी जसोदा मात जात बलि बलि तृन तोरी।
तुव मुख निरखन हेत ललक उर किए करोरी ॥
रोहिनि आदिक सब पास ही खरी बिलोकत बदन तुव।
उठि मंगलमय दरसाय मुख मंगलमय सब करहुं भुव ॥8॥

करत काज नहिं नन्द बिना तुव मुख अवरेखे।
दाऊ बन नहिं जात वदन सुन्दर बिनु देखे ॥

ग्वालिन दधि नहिं बेंचि सकल लालन बिनु पेखे।
गोप न चारत गाय लखे बिनु सुन्दर भेखे॥
भइ भीर द्वार भारी खरे सब मुख निरखन आस करि।
बलिहार जागिए देर भइ बन गोचारन चेत धरि ॥9॥

करत रोर तम चोर भोर चकवाक बिगोए।
आलस तजि कै उठौ सुरत सुख सिन्धु भिगोए॥
दरसन हित सब अली खरी आरती संजोए।
जुगल जागिए बेर भई पिय प्यारी सोए॥
मुख चंद हमैं दरसाइ कै हरौ बिरह को दुःख विकट।
बलिहार उठो दोऊ अबै बीती निसि दिन भो प्रगट ॥10॥

ललिता लीने बीन मधुर सुर सों कछु गावत।
बैठि बिसाखा कोमल करन मृदंग बजावत॥
चित्रा रचिरचि बहु कुसुमन की माल बनावत।
श्यामा भामा अभरन सारी पाग सजावत॥
पिकदान चन्द्रभागा लिए चम्पक लतिका जल गहत।
दरपन लै कर में इन्द्रलोक लेखा बलि बलि जागौ कहत ॥11॥

कबरी सबरी गूंथि फेर सों मांग भराओ।
कसिकै रस सों पाग पेंच सिरपेंच बंधाओ॥
अंजन मुख सों सीस महावर बिंदु छुड़ाओ।
जुग कपोल सों पीक पोंछि कै छाप मिटाओ॥
उर हार चीन्ह परि पीठ पर कंकन उपस्यो देत छवि।
जागौ दुराउ तेहि बात अब जामें कछु बरनै न कवि ॥12॥

आलस पूरे नैन अरुन अब हमहिं दिखावहु।
सुरत याद दै प्रिया दृगन भरि लाज लजावहु॥
चुटकी दै बलिहार बोलि कछु अलस जंभावहु।
केलि कहानी बिबिध भाखि कछु हंसहु हंसावहु॥
भरि प्रेम परस्पर तन चितै आलस मेटहु लागि हिय।
अंगरानि मुरनि लपटानि लखि सखिगन सर्व सिराहिं जिय ॥13॥

जागौ जागौ नाथ कौन तिय रति रस भोए।
सिगरी निसि कहुं जागि इतै आवत ही सोए॥

क्यौं न सामुहे नैन करत क्यौं लाज समोए।
आधे आधे बैन कहत रस रंग भिगोए॥
बलिहार और के भाग सुख हमैं प्रात दरसन मिलन।
ताहू पै सोवत लाल बलि जागौ कंज चहत खिलन ॥14॥

जुगल कपोलन पीक छाप अति सोभा पावत।
खंडित अधरन पै अंजन जावक सरसावत॥
सिर नूपुर घुंघरू अंक छबि दुगुन बढ़ावत।
अंग अंग प्रति अभरन गन चिन्हित दरसावत॥
कंकन पायल सों पीठ खचि गाल तरौनन सों चुभित।
कंचुकी छाप सह माल बहु बिनु गुन कोमल हिय खुभित ॥15॥

रहे नील पट ओढ़ि चूरिकन जहं लपटाए।
सेंदुर बिंदुली पीक चित्र तहं विविध बनाए॥
बिथुरी अलकन मैं बेसर क्यौं सरस फंसाए।
खसित पाग मैं गलित कुसुम मिलि पेंच बंधाए॥
बलिहार आरसी जल लिए दासी बिनय बचन कहत।
जागो पीतम अब निसि बिगत गर लागो मनमथ दहत ॥16॥

डूबत भारत नाथ बेगि जागो अब जागो।
आलस दव एहि दहन हेतु चहुं दिसि सों लागो॥
महा मूढ़ता वायु बढ़ावत तेहि अनुरागो।
कृपादृष्टि की बृष्टि बुझावहु आलस त्यागो॥
अपुनो अपुनायो जानिकै करहु कृपा गिरिवर धरन।
जागो बलि बेगहि नाथ अब देहु दीन हिन्दुन सरन ॥17॥

प्रथम मान धन बुधि कोशल बल देइ बढ़ायो।
क्रम सों विषय बिदूषित जन करि तिनहिं घटायो॥
आलस में पुनि फांसि परस्पर बैन चढ़ायो।
ताही के मिस जवन काल सम को पग आयो॥
तिनके कर की करबाल बल बाल बृद्ध सब नासि कै।
अब सोवहु होय अचेत तुम दीनन के गल फांसि कै ॥18॥

कहं गए विक्रम भोज राम बलि कर्ण युधिष्ठिर।
चंद्रगुप्त चाणक्य कहां नासे करिकै थिर॥

कहं क्षत्री सब मरे जरे सब गए कितै गिर।
कहां राज को तौन साज जेहि जानत है चिर॥
कहं दुर्ग सैन धन बल गयो धूरहि धूर दिखात जग।
जागो अब तो खल बल दलन रक्षहु अपुनो आर्य मग ॥19॥

जहां बिसेसर सोमनाथ माधव के मन्दिर।
तहं महजिद बनि गईं होत अब अल्ला अकबर॥
जहं झूसी उज्जैन अवध कन्नौज रहे बर।
तहं अब रोवत सिवा चहुं दिसि लखियत खंडहर॥
जहं धन विद्या बरसत रही सदा अबै वाही ठहर।
बरसत सब ही बिधि बेबसी अब तौ जागौ चक्रधर ॥20॥

गयो राज धन तेज रोष बल ज्ञान नसाई।
बुद्धि बीरता श्री उछाह सूरता बिलाई॥
आलस कायरपनो निरुद्यमता अब छाई।
रही मूढ़ता बैर परस्पर कलह लराई॥
सब बिधि नासी भारत प्रजा कहुं न रह्यौ अबलम्ब अब।
जागो जागो करुनायतन फेर जागिहौ नाथ कब॥21॥

सीखत कोउ न कला, उदर भरि जीवत केवल।
पसु समान सब अन्न खात पीअत गंगा जल॥
धन बिदेस चलि जात तऊ जिय होत न चंचल।
जड़ समान ह्वै रहत अकिल हत रचि न सकत कल॥
जीवत बिदेस की वस्तु लै ता बिनु कछु नहिं करि सकत।
जागो जागो अब सांवरे सब कोउ रुख तुमरो तकत ॥22॥

पृथ्वीराज जयचन्द कलह करि जवन बुलायो।
तिमिरलंग चंगेज आदि बहु नरन कटायो॥
अलादीन औरंगजेब मिलि धरम नसायो।
विषय वासना दुसह मुहम्मदसह फैलायो॥
तब लौं सोए बहुत नाथ तुम जागे नहि कोऊ जतन।
अब तौ जागौ बलि बेर भइ हे मेरे भारत रतन ॥23॥

जागो हौं बलि गई बिलम्ब न तनिक लगावहु।
चक्र सुदरसन हाथ धारि रिपु मारि गिरावहु॥

थापहु थिर करि राज छत्र सिर अटल फिरावहु।
मूरखता दीनता कृपा करि वेग नसावहु॥
गुन विद्या धन बल मान बहु सबै प्रजा मिलि कै लहैं।
जय राज राज महराज की आनन्द सो सब ही कहैं॥24॥

सब देसन की कला सिमिटि कै इतही आवै।
कर राजा नहिं लेइ प्रजन पैं हेत बढ़ावै॥
गाय दूध बहु देहिं तिनहिं कोऊ न नसावै।
द्विज गन आस्तिक होइ मेघ सुभ जल बरसावै॥
तजि छुद्र बासना नर सबै निज उछाह उन्नति करहिं।
कहि कृष्ण राधिका नाथ जय हमहूं जिय आनन्द भरहिं॥25॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड 1, संख्या 11, अगस्त सन 1874 ई. में प्रकाशित]

श्रीपंचमी

सन 1875 ई.

श्रीपंचमी

श्रीपंचमी प्रथम बिहार दिन मदन महोत्सव भारी।
भरन चलीं सब मिलि पीतम कों घर घर तें ब्रज नारी॥
नव सत साज़ सिंगार सजे कंचुकि सुदृढ़ संवारी।
लहकति तन दुति नवजोबन तें तापै तनसुख सारी॥
गावत गीत उमगि ऊंचे सुर मनहुं मदन मतवारी।
गलिन गलिन प्रति पायल झमकति दमकति तन दुति न्यारी॥
मदन दुहाई फेरति डोलै विरद बसन्त पुकारी।
सजे सैन सी उमड़ी आवहिं जीतन कों गिरधारी॥
ललिता, चन्द्रभगा, चन्द्रावलि, ससिरेखा सुकुमारी।
स्यामा, भामा, बाम, बिसाखा, चम्पक लतिका प्यारी॥
सब मधि राधा सुछबि अगाधा श्रीवृषभानु दुलारी।
कर मैं लै चम्पक तबला सी सोहत प्रान पियारी॥
अम्बर उड़त अबीर अरगजा चलत रंग पिचकारी।
डफ बाजत गाजत मनु भेरी जीति जगत गति सारी॥
पहुंचीं नन्द भवन सब मिलि कै नव नव जोबनवारी।
निरख्यौ मुख ससि प्रान पिया को दीनो तन मन वारी॥
कियो खेल आरम्भ प्रथमहीं पिय सों भानु कुमारी।
केसर छिरकि चन्द मुख माड़्यौ आम मौर सिर धारी॥
तिय के भरत खेल माच्यौ मधि नर नारिन के भारी।
उड़्यौ रंग केसर चहुं दिसि तें भइ अबीर अंधियारी॥
निलज भरत अंकम आपुस मैं देत उचारी गारी।
हो हो करि धावत गावत मिलि देत परस्पर तारी॥
जसुमति फगुआ देत सबनि कों भूषन बसन संवारी।
सो सुख सोभा निरखि होत तहं 'हरीचन्द' बलिहारी॥

[कविवचन सुधा फरवरी 1875 के अंक में प्रकाशित]

अथ श्री सर्वोत्तम स्तोत्र (भाषा)

सन 1877 ई. से पूर्व प्रकाशित

अथ श्री सर्वोत्तम स्तोत्र (भाषा)

जयति आनन्द रूप परमानन्द कृष्णमुख
कृपानिधि दैवि उद्धारकारी।
स्मृति मात्र सकल आरतिहरन गूढ़
गुन भागवत अर्थ लीनो बिचारी ॥1॥
एक साकार परब्रह्म स्थापन करन
चारहू वेद के पारगामी।
हरन मायावाद बहुवाद नास करि
भक्ति पथ कमल को दिवस स्वामी ॥2॥
शूद्र ललना लोक उद्धरन सामर्थ
गोपिकाधीश कृत अंगिकारी।
बल्लभी कृत मनुज अंगिकृत जनन
पै धरन मर्य्याद बहु करुनधारी ॥3॥
जगत व्यापक दान करत सब वस्तु को
चरित जाके सकल अति उदारा।
आसुरी जनन मोहन करन हेत यह
ब्याज सों प्रकृति इव रूप धारा ॥4॥
अगिनि अवतार वल्लभ नाम शुभ रूप
सदा सज्जनन हित करत जानी।
लोक शिक्षा करन कृष्ण की भक्ति करि
निखिल जग इष्ट के आपु दानी ॥5॥
सर्व लक्षननि संपन्न श्रीकृष्ण को
ज्ञान प्रभु देत गुरु रूप धारी।
सदा सानद तुन्दिल पद्मदल सरिस
नयन जुग जगत संतापहारी ॥6॥

कृपा करि दृष्टि की वृष्टि बर्धित किए
दासिका दास पति परम प्यारे।
रोष दृग करन मुरछित भक्ति द्वेषिगन
भक्तजन चरन सेवित दुलारे ॥7॥
भक्तजन सुख सेव्य अति दुराराध्य
दुरलभ कुंज पद उग्र तेजधारी।
वाक्य रस करन पूरन सकल जनन
मन भागवत पय सिन्धु मथनकारी ॥8॥
सार ताको जानि रास बनितान के
भाव सों सकल पूरित सुभेसा।
होत सनमुख देत प्रेम श्रीकृष्ण को
अविमुक्ति देत लखि बहत देसा ॥9॥
रास लीलैक तात्पर्य्य मय रूप मुनि
देत करि कृपा बहु कथा ताकी।
त्यागि सब एक अनुभव करहु बिरह को
यहै उपदेस बानी सु जाकी ॥10॥
भक्ति आचार उपदेस नित करत पुनि
कर्म मारग प्रवर्तन सु कीनो।
सदा यागादि मैं भक्ति मारग एक
करहु साधनहि उपदेस दीनो ॥11॥
पूर्ण आनन्द मय सदा पूरन काम
वाक्य प्रति निखिल जग बिबुध भूपा।
कृष्ण के सहस शुभ नाम निज मुख कहे
भक्ति पर एक जाको सरूपा ॥12॥
भक्ति आचार उपदेस हित शास्त्र के
वाक्य नाना निरूपन सु कीने।
भक्त जन सदा घेरे रहत जिनन निज
प्रेम हित प्रान प्रन त्यागि दीने ॥13॥
निज दास अर्थ साधन अनेकन किए
जदपि प्रभु आप सब शक्तिकारी।
एक भुव लोक प्रचलित करन
भक्तिपथ कियो निज वंश पितु रूप धारी॥14॥
निज विमल वंस में परम माहात्म्य प्रभु
धर्‍यो सब जगत सन्देहहारी।

पतिब्रता पति परलौकिकैहिक दान
करन अधिकार जन को बिचारी ॥15॥
गूढ़ मति हृदय निज अन्य अनभक्त कों
सकल आशय आपु कहत प्यारे।
जग उपासन आदि मारगादीन मैं
मुग्ध जन मोह के हरनवारे ॥16॥
सकल मारगन सों भक्ति मारग बीच
अति विलक्षण सु अनुभवहि मानै।
पृथक कहि शरण को मार्ग उपदेस करि
कृष्ण के हृदय की बात जानै ॥17॥
प्रति क्षण गुप्त लीला नव निकुंज को
भरि रही चित्त मैं सदा जाके।
सोइ कथा स्मरण करि चित्त आक्षिप्तवत
भूलि गइ सकल सुधि आये ताके ॥18॥
ब्रज जिय ब्रजवास अतिहि प्रिय पुष्टि
लीला करन सदा एकान्त चारी।
भक्तजन सकल इच्छा सुपूरन करन
अतिहि अज्ञात लीला बिहारी ॥19॥
अतिहि मोहन निरासक्त जग भक्त
मात्रासक्त पतित पावन कहाई।
जस गान करत जे भक्त तिनके
हृदय कमल मैं वास जाको सदाई ॥20॥
स्वच्छ पीयूष लहरी सदृस निज जसनि
तुच्छ करि अन्य रस दिये बहाई।
पर रूप कृष्ण लीला अमृत रस
अखिल जन सींचि प्रेम मैं दिए भिंजाई ॥21॥
सदा उत्साह गिरिराज के वास में
सोई लीला प्रेम पूर गाता।
यज्ञ हवि हरत पुनि यज्ञ आपुहि करत
अति बिसद चारहू फल के दाता ॥22॥
सुभ प्रतिज्ञा सत्य जगत उद्धार की
प्रकृति सों दूर बहु नीति ज्ञाता।
कीर्ति वर्द्धन करी सूत्र को भाष्य करि
कृष्ण इक तत्व के ज्ञान दाता ॥23॥

तूल मायावाद दहन हित अग्नि वपु
ब्रह्म को वाद जग प्रगट कीनो।
निखिल प्राकृत रहित गुनन भूषित सदा
मन्द मुसुकानि मन चोरि लीनो ॥24॥
तीनहूं लोक भूषन भूमि भाग्य वर
सहज सुन्दर रूप वेद सारं।
सदा सब भक्त प्रार्थित चरन कमल
रज धन रूप नौमि लक्ष्मण कुमारं ॥25॥
एक सत आठ ए नाम अभिराम नित
प्रेम सों जे जगत मांहि गावैं।
परम दुरलभ कृष्ण अधर अमृत पान
स्वाद करि सुलभ ते सदा पावैं ॥26॥
नाम आनन्दनिधि वल्लभाधीश को
बिट्ठलेश्वर प्रकट करि दिखायो।
छोड़ि साधन सकल एक यह गाइकै
परम सन्तोष 'हरीचन्द' पायो ॥27॥

इति श्री मद्विट्ठलनाथ चरण पंकज पराग लेपनापसारित निखिल कल्मष हरिश्चन्द्रकृत भाषान्तरित कीर्तनस्वरूप

श्री सर्वोत्तम स्तोत्र समाप्तिमगमत्॥

[यह रचना पुस्तिकाकार छपी थी पर उसमें प्रकाशन तिथि नहीं दी गई है। कविवचन सुधा के सन 1877 के एक अंक में इसके प्रकाशन की सूचना दी गई है।]

निवेदन पंचक

सन 1876 ई.

निवेदन पंचक

श्याम घन अब तौ जीवन देहु।
दुसह दुखद दावानल ग्रीषम सों बचाइ जग लेहु ॥
तृनावर्त नित धूर उड़ावत बरसौ कह ना मेहु।
'हरीचन्द' जिय तपन मिटाओ निज जन पैं करि नेहु ॥1॥

श्याम घन निज छबि देहु दिखाय।
नवल सरस तन सांवल चपल पीताम्बर चमकाय ॥
मुक्तमाल बगजाल मनोहर दृगन देहु बरसाय।
स्रवन सुखद गरजनि बंसी धुनि अब तौ देहु सुनाय ॥
ताप पाप सब जग को नासौ नेह मेह बरसाय।
'हरीचन्द' पिय द्रवहु दया करि करुनानिधि ब्रजराय ॥2॥

श्याम घन अब तौ बरसहु पानी।
दुखित सबै नर नारी खग मृग कहत दीन सम बानी ॥
तपत प्रचंड सूर निरदय ह्वै दूबहु हाय झुरानी।
'हरीचन्द' जग दुखित देखि कै द्रवहु आपुनो जानी ॥3॥

कितै बरसाने वारी राधा।
हरहु न जल बरसाइ जगत की, पाप ताप मय बाधा ॥
कठिन निदाघ लता वीरुध तृन पसु पंछी तन दाधा।
चातक से सब नभ दिसि हेरत जीवन बरसन साधा ॥
तुम करुनानिधि जन हितकारिनि दया समुद्र अगाधा।
'हरीचन्द' याही तें सब तजि तुव पद पदुम अराधा ॥4॥

जगत की करनी पै मति जैये।
करिकै दया दयानिधि माधो अब तौ जल बरसैये ॥
देखि दुखी जग जीव श्याम घन करि करुना अब ऐये।
'हरीचन्द' निज बिरद याद करि सब को जीव बचैये ॥5॥

[कविवचन सुधा में सन 1876 ई. में प्रकाशित। कहा जाता है कि वर्षा न होने पर भारतेन्दु ने यह पंचक लिखा था। जिस दिन यह पंचक प्रकाशित हुआ उसी दिन सायंकाल को वर्षा हुई। कविवचन सुधा के अगले अंक में यह सूचना दी गई है।]

उत्तरार्द्ध भक्तमाल

सन 1876-77 ई.

उत्तरार्द्ध भक्तमाल

दोहा

राधा वल्लभ वल्लभी वल्लभ वल्लभताइ।
चार नाम बपु एक पद बन्दत सीस नवाइ ॥1॥
ह्वै प्रतच्छ बसि गृह निकट दियो प्रेम को दान।
जय जय जय हरि मधुर बपु गुरु रस रीति निधान ॥2॥
जय के विषय छुड़ाइ सब युद्ध प्रेम दिखराइ।
बसे दूर ह्वै सहज पुनि, जै जै जादवराइ ॥3॥
धन जन हरि निहचिन्त करि, फिर डार्‌यौ भव जाल।
सोचि जुगति कछु मोहिं जिन जै जै सो नन्दलाल ॥4॥
कछु गीता मैं भाखि कै शुक ह्वै करुना धारि।
कही भागवत मैं प्रगट कै प्रेम रीति निरुवारि ॥5॥
पुनि वल्लभ ह्वै सो कही कबहूं कही जु नाहिं।
शुद्ध प्रेम रस रीति सब निज ग्रन्थन के माहिं ॥6॥
बंश रूप करि कै द्विबिध थापी पुनि जग सोय।
अब लौं जाके लेस सों पामर प्रेमी होय॥7॥
व्यास कृष्ण चैतन्य हरि दास सु हित हरिवंस।
विविध गुप्त रस पुनि कहे धरि वपु परम प्रसंस ॥8॥
भांति भांति अनुभव सरस जिन दिखरायो आप।
अधमहुं को सो नित जयति समन समन पुर दाप ॥9॥
अतिहि अघी अति हीन निज अपराधी लखि दीन।
जदपि छमाके जोग नहिं तऊ दया अति कीन ॥10॥
छत्रानी सों यों कह्यौ या कहं जानहु सन्त।
अहो कृपाल कृपालुता तुमरी को नहिं अन्त ॥11॥
ज्वर तापित हिय में प्रगट जुगल हंसत आसीन।
स्वर्ण सिंहासन पर लिए कर जुग कंज नवीन॥12॥

अगिनि बरत चारहुं दिसा पै मधि सीतल नीर।
ताहि उजारत चरन सों देत दास कहं धीर ॥13॥
बहु नट वपु ह्वै आपुही कसरत करत अनेक।
कबहूं पौढ़े महल मैं तानि झीन पट एक ॥14॥
कबहूं सेत पाखान की कोच जुगल छबि धाम।
बैठे बाग बहार मैं गल भुज दिए ललाम॥15॥
सांझ समय आरति करत सब मिलि गोपी ग्वाल।
कबहुं अकेले ही मिलत पिय नन्दलाल दयाल॥16॥
कबहुं गौर दुति बाल बपु रजत अभूषन अंग।
पंच नदी पौसाक तन धरे किए सोइ ढंग॥17॥
कबहुं जुगल आवत चले सांझ समय बरसात।
कै बसन्त जहं हरित धर चारहु ओर दिखात॥18॥
देखि दीन भुव मैं लुठत फूल छरी सिर मारि।
हंसत परसपर रस भरे जिय अति दया बिचारि ॥19॥
कबहुंक प्रगट कबहूं सुपन कबहुं अचेतन माहिं।
निज जय दृढ़ता हेत जो बारम्बार दिखाहिं॥20॥
होत बिमुख रोकत तुरत करत बिबिध उपदेस।
जै जै जै हरि राधिका बितरन नेह बिसेस॥21॥
मायावाद मतंग मद हरत गरजि हरि नाम।
जयति कोऊ सो केसरी बृन्दाबन बन धाम॥22॥
तुम पाखंडहि हरत करि जन मन जलज बिकास।
जयति अलौकिक रवि कोऊ, श्रुति पथ करन प्रकास॥23॥

अथ परम्परा

तन्नमामि निज परम गुरु कृष्ण कमल दल नैन।
जाको मत श्री राधिका नाम जपत दिन रैन॥24॥
श्री गोपीजन जुगल पद बन्दत करि पुनि नेम।
जिन जग मैं प्रगटित कियो परम गुप्त रस प्रेम॥25॥
श्री शिव पद निज जानि गुरु बन्दत प्रेम प्रमान।
परम गुप्त निज प्रगट किय भक्ति पन्थ अभिधान॥26॥
बन्दौ श्री नारद चरन भव पारद अभिराम।
परम बिसारद कृष्ण गुन गान सदा गतकाम॥27॥
पुनि बन्दत श्री व्यास पद वेद भाग जिन कीन।
कृष्ण तत्त्व को ज्ञान सब सूत्र बिरचि कहि दीन ॥28॥

बन्दत श्री शुकदेव जिन सोध प्रेम को पन्थ।
हमसे कलि मल ग्रसित हित कह्यो भागवत ग्रन्थ॥29॥
विष्णुस्वामि पद जुगल पुनि प्रनवत बारम्बार।
जिन प्रगटायो प्रेम पथ बहत जानि संसार॥30॥
गोपिनाथ अरम्भि जै देवादिक मध थामि।
बिल्वमंगल लौं सप्त सत गुरु अवली प्रनमामि॥31॥
नमो बिल्वमंगल चरन भक्ति बीज उत्कर्ष।
सूक्ष्म रूप सों तरु रहे जो अनेक सत वर्ष॥32॥
यह मारग डूबत निरखि जिन प्रगटायो रूप।
नमो नमो गुरुवर चरन श्री वल्लभ द्विजभूप॥33॥
जुगल सुअन तिनके तनय जिनहिं आठ निरधारि।
भक्ति रूप दसधा प्रगट बन्दत तिनहिं बिचारि॥34॥
एक भक्ति के दान हित थापित परम प्रसंस।
भयो अहै अरु होइगो जै श्री वल्लभ वंस॥35॥
प्रगट न प्रेम प्रभाव नित नासन सोग कुरोग।
जै जै जग आरति हरन विदित वल्लभी लोग॥36॥
जै प्रेमी जन कोउ पथ हरि पद नित अनुरक्त।
बन्दत तिनके चरन हम करहु कृपा सब भक्त॥37॥

अथ उपक्रम

नाभा जी महराज ने भक्तमाल रस जाल।
आलबाल हरि प्रेम की बिरची होइ दयाल॥38॥
ता पाछें अब लौं भए जे हरि पद रत सन्त।
तिनके जस बरनन करत सोइ हरि कहं अति कन्त॥39॥
कबहूं कबहूं प्रसंग बस फिर सों प्रेमी नाम।
ऐहैं या नव ग्रन्थ मैं पूरब कथित ललाम॥40॥
भक्तमाल जो ग्रन्थ है नाभा रचित विचित्र।
ताही को एहि जानियो उत्तर भाग पवित्र॥41॥
भक्तमाल उत्तर अरध याही सों सुभ नाम।
गुथी प्रेम की डोर मैं सन्त रतन अभिराम॥42॥
नवमाला हरि गल दई नाभाजी रचि जौन।
दुगुन आजु करि कृष्ण कों पहिरावत हौं तौन॥43॥
लिखे कृष्ण हिय मैं सदा जदपि नवल कोउ नांहि।
नाम धाम हरि भक्त के आदि समय हू मांहि॥44॥

तदपि सदा निज प्रेम पथ दीपक प्रगटन काज।
समय समय पठवत अवनि निज भक्तन ब्रजराज ॥45॥
ताही सों जब आवहीं भुव तब जानहिं लोग।
भक्त नाम गुन आदि सब नासन भव भय रोग ॥46॥
तिनहीं भक्त दयाल की परम दया बल पाइ।
तिनको चरित पवित्र यह कहत अहौं कछु गाइ ॥47॥

स्ववंश वर्णन

वैश्य अग्रकुल मैं प्रगट बालकृष्ण कुल पाल।
ता सुत गिरिधर चरन रत वर गिरधारीलाल ॥48॥
अमीचन्द तिनके तनय फतेचन्द ता नन्द।
हरखचन्द जिनके भए निज कुल सागर चन्द ॥49॥
श्री गिरिधर गुरु सेइ कै घर सेवा पधराइ।
तारे निज कुल जीव सब हरि पद भक्ति दृढ़ाइ ॥50॥
तिनके सुत गोपाल ससि प्रगटित गिरिधरदास।
कठिन करम गति मेटि जिन कीनी भक्ति प्रकास ॥51॥
मेटि देव देवी सकल छोड़ि कठिन कुल रीति।
थाप्यौ गृह मैं प्रेम जिन प्रगटि कृष्ण पद प्रीति ॥52॥
पारबती की कूख सों तिनसों प्रगट अमन्द।
गोकुलचन्द्राग्रज भयो भक्त दास हरिचन्द ॥53॥
तिन श्री बल्लभ बर कृपा बिरची माल बनाइ।
रही जौन हरिकंठ मैं निज नव ह्वै लपटाइ ॥54॥
लहिहैं भक्त अनन्द अति, ह्वैहै पतित पवित्र।
पढ़ि पढ़ि कै हरि भक्त को चित्र विचित्र चरित्र ॥55॥

श्री विष्णु स्वामि संसार मैं प्रगट राजसेवा करी।
श्री शुक सों लहि ज्ञान आन्ध्र भुव पावन कीनी ॥
नृप प्रधानता जगत जाल गुनि कै तजि दीनी।
हठ करि हरि कों अपुने कर नित भोग लगायो ॥
भक्ति प्रचारन द्विविध वंश भुव मांहि चलायो।
जग मैं अनेक सत बरस बसि नाम दान भुव उद्धरी ॥
श्री विष्णु स्वामि संसार मैं प्रगट राजसेवा करी॥56॥

श्री निम्बादित्य सरूप धरि आपु तुंग विद्या भई।
द्राविड़ि भुव मैं अरुण गेह द्विज ह्वै प्रगटाए॥
तम पखंड दलमलन सुदर्सन बपु कहवाए।
सकल वेद को सार कह्यौ दस ही छन्दन महं॥
शुक मुख सों भागवत सुनी नृप देवरात जहं।
बनि अरक बृच्छ चढ़ि दरस दै अतिथि संक सब हरि लई।
श्री निम्बादित्य सरूप धरि आपु तुंग विद्या भई॥57॥

मायावादी घननाद मद रामानुज मर्दन कियो।
अगनित तम पाखंड प्रगट ह्वै धूरि मिलायो ॥
बीर बनक सों सुदृढ़ भक्ति को पन्थ चलायो।
वादी गनन प्रतच्छ सेस बनि दरसन दीनो ॥
गुरु को चार मनोरथ पन करि पूरन कीनो।
जा सरन जाइ निरदन्द ह्वै जीव नरक भय तजि जियो ॥
मायावादी घननाद मद रामानुज मर्दन कियो ॥58॥

दृढ़ भेद भगति जग मैं करन मध्व अचारज भुव प्रगट।
प्रथम शास्त्र पढ़ि सकल अरम्भन खंडन ठान्यौ।
द्वैतवाद प्रगटाइ दास भावहि दृढ़ मान्यौ॥
थापि देव गोपाल धरनि निज विजय प्रचार्‌यौ।
मतिमंडित पंडितगन बल खंडित करि डार्‌यौ॥
दै संख चक्र की छाप भुज दई मुक्ति सारूप्य झट।
दृढ़ भेद भगति जग मैं करन मध्व अचारज भुव प्रगट ॥59॥

श्रीविष्णु स्वामि पथ उद्धरन जै जै वल्लभ राजवर।
तिलंग वंस द्विजराज उदित पावन बसुधा तल।
भारद्वाज सुगोत्र यजुर साखा तैत्तिर कल ॥
यज्ञनरायन कुलमनि लक्ष्मनभट्ट तनूभव।
इल्लमगारू गर्भ रत्नसम श्रीलक्ष्मी धव ॥
श्री गोपनाथ विट्ठल पिता भाष्यादिक बहु ग्रन्थकर।
श्रीविष्णु स्वामि पथ उद्धरन जै जै वल्लभ राजवर ॥60॥

निज प्रेम पन्थ सिद्धान्त हरि बिट्ठल बपु धरि कै कह्यौ।
श्री श्री वल्लभ सुअन विप्रकुल तिलक जगत वर।
माया मत तम तोम विमर्दन ग्रीष्म दिवाकर॥
जन चकोर हित चन्द भक्ति पथ भुव प्रगटावन।
अन्तरंग सखि भाव स्वामिनी दास्य दृढ़ावन॥
दैवी जन मिलि अवलम्ब हित इक जा पद दृढ़ करि गह्यौ।
निज प्रेम पन्थ सिद्धान्त हरि बिट्ठल बपु धरि कै कह्यौ॥61॥

निज फलित प्रफुल्नित जगत मैं जय वल्लभ कुल कलपतर।
गुरुवर गोपानाथ प्रगट पुरुषोत्तम प्यारे।
श्री गिरिधर गोविन्द राय रुक्मिनी दुलारे॥
बालकृष्ण श्री वल्लभ माला विजय प्रकासन।
श्री रघुपति जदुनाथ स्याम-घन भव भय नासन॥
मुरलीधर दामोदर सुकल्यानराय आदिक कुंवर।
निज फलित प्रफुल्लित जगत मैं जय वल्लभ कुल कलपतर॥62॥

जग कठिन सृंखला सिथिल कर प्रगटि प्रेम चैतन्य को।
गोपीजन सम हरि हित सब सों मुख मोर्‌यौ।
लोक लाज, भवजाल सकल तिनुका सो तोर्‌यौ॥
वेदसार हरिनाम दान करि प्रगट चलायो।
अनुदिन हरि रस निरतत जुग दृग नीर बहायौ॥
नित मत्त कृष्ण मधुपान करि सपनेहु ध्यान न अन्य को।
जग कठिन सृंखला सिथिल कर प्रगटि प्रेम चैतन्य को॥63॥

ये मध्व सम्प्रदा के परम प्रेमी पंडित जग विदित।
बिजय ध्वज अति निपुन बहुत बादी जिन जीते॥
माधवेन्द्र नरसिंह भारती हरि पद प्रीते।
ईश्वपुरी प्रकाशभट्ट रघुनाथ अचारच॥
त्रिपुर गङ्ग श्रीजीव प्रबोधानन्द सु आरज।
अद्वैत सुनित्यानन्द प्रभु प्रेम सूर ससि से उदित।
ये मध्व सम्पदा के परम प्रेमी पंडित जगविदित॥64॥

जान्यौ वृन्दाबन रूप हरिदास ब्यास हरिवंस मिलि।
निंबारक मत बिदित प्रेम को सारहिं जान्यौ।
जुगल केलि रस रीति भलें करि इन पहिचान्यौ॥
सखी भाव अति चाव महल के नित अधिकारी।
पियहू सों बढ़ि हेत करत जिन पैं निज प्यारी॥
जग दान चलायो भक्ति को ब्रज सरवर जल जलज खिलि।
जान्यौ वृन्दाबन रूप हरिदास ब्यास हरिवंस मिलि॥65॥

ये वृन्दाबन के सन्त सब जुगल भाव के रंग रंगे।
मौनीदास गुविन्ददास निम्बार्कसरन जू।
ललितमोहनी चतुरमोहनी आसकरन जू॥
सखी चरन राधाप्रसाद गोवर्द्धन देवा।
कम्बल ललित गरीबदास भीमा सखि सेवा॥
श्री वल्लभदास अनन्य लघु बिट्ठल मोहन रस पगे।
ये वृन्दाबन के सन्त सब जुगल भाव के रंग रंगे॥66॥

रघुनाथ सुअन पंडित रतन श्री देवकिनन्दन प्रगट।
किय रसाब्धि नव काव्य कृष्ण रस रास मनोहर।
श्री गोकुल-ससि सेइ लहे अनुभव बहु सुन्दर॥
पिता पितामह प्रपितामह की पंडितताई।
भक्ति रीति हरि प्रीति भलें करि आपु निभाई॥
जानकी उदर अंबुधि रतन पितु गुन जिन मैं विदित खट।
रघुनाथ सुअन पंडित रतन श्री देवकिनन्दन प्रगट॥67॥

पीताम्बर सुत विद्या निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्रजित।
श्री वल्लभ पाछें बुधि बल आचार्ज कहाए।
निरनय बाद बिबाद अनेकन ग्रन्थ बनाए॥
गाड़ा पै धुज रोपि जयति वल्लभ लिखि तापर।
ग्रन्थ साथ सब लिये फिरे जीतत चहुं दिसि धर॥
श्रीबालकृष्ण सेवा निरत निज बल प्रगटायो अमित।
पीताम्बर सुत विद्या निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्रजित॥68॥

श्रीद्वारकेश ब्रजपति ब्रजाधीश भए निज कुल कमल।
सेवाभाव अनेक गुप्त इन प्रगट दिखाए।
श्री युगल नित्य रस रास कीरतन बहुत बनाए॥
शुद्धि पुष्टि अनुभवत उच्छलित रस हिय माहीं।
सपनेहु जिनकी वृत्ति कबहुं लौकिक मय नाहीं॥
श्री वल्लभ को सिद्धान्त सब थित जिनके चित नित बिमल।
श्री द्वारकेश ब्रजपति ब्रजाधीश भए निज कुल कमल॥69॥

श्री श्री हरिराय स्व भक्ति बल नाथहि फिर बोलवाइयो।
रसिक नाम सौ ग्रन्थ रचे भाषा के भारे।
नाम राखि हरिदास तथा संस्कृत के न्यारे॥
परम गुप्त रस प्रगट विरह अनुभव जिन कीनो।
सेवा महं सब त्यागि सदा हरि के चित दीनो॥
हरि इच्छा लखि बिनु समयहू मन्दिर इन खुलवाइयो।
श्री श्री हरिराय स्व भक्ति बल नाथहि फिर बोलवाइयो ॥70॥

जो अनुभव श्री बिट्ठल कियो सोइ दाऊ जी मैं उघट।
सात सरूपहि फिर श्री जी पासहिं पधराए।
पहिले ही की भांति अन्नकुट भोग लगाए॥
सब रिपु उच्छव प्रगट एक रितु माहिं दिखाए।
हून परम करि सो कर फिर नहिं प्रभुहि छुवाए॥
करि लाखन व्यय सेवा करी किय गोकुल मेवाड़ अट।
जो अनुभव श्री बिट्ठल कियो सोइ दाऊ जी मैं उघट ॥71॥

लखि कठिन काल फिर आपुही आचारज गिरिधर भए।
बालकपन खेलत ही मैं पाखान तरायो।
बादी दक्षिण जीति पन्थ निज सुदृढ़ दृढ़ायो॥
श्री मुकुन्द भव दुन्द हरन काशी पधराए।
थापी कुल मरजादा अनुभव प्रगट दिखाए॥
पूरे करि ग्रन्थ अनेक पुनि आपहु बहु बिरचे नए।
लखि कठिन काल फिर आपुही आचारज गिरिधर भए ॥72॥

बारानसि प्रगट प्रभाव श्री स्यामा बेटी को भयो।
श्री गिरिधर की सुता सतोगुन-भय सब अंगा।
हरि सेवा मैं चतुर पतित-पावनि जिमि गंगा॥
खट ऋतु छप्पन भोग मनोरथ करि मन-भायो।
वृन्दाबन को अनुभव कासो प्रगटि दिखायो॥
थिर थापी करि सब रीति निज सुजस दसहु दिसि मैं छयो।
बारानसि प्रगट प्रभाव श्री स्यामा बेटी को भयो॥73॥

वे वल्लभ कुल के रत्न मनि बालक सब भुव मैं भए।
मोम चिरैया रचि कै श्री रनछोर उड़ाई।
पुरुषोत्तम प्रभु पद रचि लीला ललित सुनाई॥
विट्ठलनाथ दयाल सतोगुन मय बपु धारे।
तैसेहि गोविंदलाल गोकुलाधीस पियारे॥
जीवन जी जनि जीवन-करन बिबिध ग्रन्थ बिरचे नए।
ये वल्लभ कुल के रत्र-मनि बालक सब भुव मैं भए॥74॥

अघ निकर सूर कर सूर पथ सूर सूर जग मैं उयो।
वल्लभ सागर बिट्ठल जाहि जहाज बखान्यौ।
जन कवि कुल मद हस्यौ प्रेम नीके पहिचान्यौ॥
एक वृत्ति नित सवा लाख हरि पद रचि गाए।
श्री वल्लभ वल्लभ अभेद करि प्रगट जनाए॥
जा पद बल अब लौं नर सकल गाइ गाइ हरि गुनि जियो।
अध निकर सूर कर सूर पथ सूर सूर जग मैं उयो॥75॥

श्रीकुम्भनदास कृपाल अति मूरति धारें प्रेम मनु।
राधा माधव बिनु कोउ पद जिन कबहुं न गायो।
बिरह रीति हरि-प्रीति-पन्थ करि प्रगट दिखायो॥
सुनत कृष्ण को नाम स्रवन हियरो भरि आवत।
प्रेम मगन नित नव पद रचि हरि सनमुख गावत॥
श्री वल्लभ गुरुपद जुग पदुम प्रगट सरस मकरन्द जनु।
श्रीकुम्भनदास कृपाल अति मूरति धारें प्रेम मनु॥76॥

परमानन्ददास उदार अति परमानन्द ब्रिज बसि लह्यौ।
हिय हरि रस उच्छलित निरखि गुरुकर धरि रोक्यौ।
जिनके दृग जुग जुगल रूप रसिकन अवलोक्यौ॥
लाखन पद रचि कहे बिरह व्यापी अनुछिन गति।
सखी सखा वात्सल्य महातम भाव सिद्ध श्रुति॥
श्री वल्लभ प्रभु पद प्रेम सों जागरूक जग जस लह्यौ।
परमानन्ददास उदार अति परमानन्द ब्रज बसि लह्यौ॥77॥

श्री कृष्णदास अधिकार करि कृष्ण दास्य अधिकार लह।
अन्तरंग हरि सखा स्वामिनी के एकंगी।
जासु गान मुनि नचत मुदित ह्वै ललित तृमंगी॥
जगत प्रीति अभिमान द्वेष हरि को अपनावन।
इनके गुन औगुन प्रगटे तनहू तजि पावन॥
नव बार बधू हरि भेंट करि बल्लभ पद कर सृदृढ़ गह।
श्री कृष्णदास अधिकार करि कृष्ण दास्य अधिकार लह॥78॥

गोविन्द स्वामी श्रीदाम वपु सखा अन्तरंगी भए।
हरि संग खेलत फिरत तुरग बनि कबहूं धावत।
भूख लगत बन छाक लेन तब इनहिं पढ़ावत॥
अनुछिन साथहि रहत केलि परतच्छ निहारत।
गाइ रिझावत हरिहि प्रेम जग में बिस्तारत॥
द्वै सै बावन पर जुगल रस केलि मए बिरचे नए।
गोबिन्द स्वामी श्रीदाम बपु सखा अन्तरंगी भए॥79॥

श्री नन्ददास रस रास रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत।
तुलसिदास के अनुज सदा बिट्ठल पद चारी।
अन्तरंग हरि सखा नित्य जेहि प्रिय गिरिधारी॥
भाषा मैं भागवत रची अति सरस सुहाई।
गुरु आगें द्विज कथन सुनत जल माहिं डुबाई॥
पंचाध्यायी हठि करि रखि तब गुरुवर द्विज भए हरत।
श्री नन्ददास रस रास रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत॥80॥

श्रीदास चतुर्भुज लोक बपु सख्य दास्य दोऊ निरत।
निज मुख कुम्भनदास पुत्र पूरो जेहि भाख्यौ।
गाइ गाइ पद नवल कृष्ण रस नित जिन चाख्यौ॥
बिधुरि बिरह अनुभयो संग रहि जुगल केलि रस।
सब छिन सोइ रग रंगे बल्लभी जन के सरबस॥
सेयो श्री विट्ठल भाव करि जगत वासना सों विरत।
श्रीदास चतुर्भुज लोक बपु सख्य दास्य दोऊ निरत॥81॥

श्री छीत स्वामि हरि और गुरु प्रगट करि कै लखे।
गुरुहि परिच्छन हेत प्रथम सनमुख जब आए।
पोलो नरियन खोटो रुपया भेंट चढ़ाए॥
श्री बिट्ठल तेहि साचो किय लखि अचरज धारी।
शरन गए कहि छमहु नाथ यह चूक हमारी॥
पद बिरचि सेइ श्रीनाथ कहं विविध गुप्त अनुभव चखे।
श्री छीत स्वामि हरि और गुरु प्रगट कर करि कै लखे॥82॥

चौरासी परसंग मैं मम आयसु धरि सीस।
छन्द रचे ब्रजचन्द कछु सुमिरि गोकुलाधीस॥

अथ चौरासी वैष्णव प्रसंग

दामोदरदास दयाल भे सूत्र रूप यह माल के।
जिन कहं श्रीप्रभु[1] कह्यौ कियो तेरे हित मारग।
एक मात्र ये रहे रहस्यन के नित पारग॥
वल्लभ पथ के खम्भ समर्पन प्रथम किए जिन।
अनुदिन छाया सरिस संग रहि भेद लही इन॥
रहिहैं जब लौं भुव पन्थ यह अन्तरंग नन्दलाल के।
दामोदरदास दयाल भे सूत्र रूप यह माल के॥83॥

---

1. चौरासी वार्त्ता प्रसंग में प्रभु शब्द से श्री महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य्य जी का नाम जानना।

दृढ़ दास्य परम बिस्वास के कृष्णदास मेघन भए।
जब गुरु वल्लभ वेदब्यास ढिग मिलन पधारे।
तीनि दिवस लौं जल बिनु ठाढ़े रहे दुआरे॥
निसि मैं गंगा तरि गुरु के हित चूड़ा लाए।
करि प्रसन्न श्री प्रभुहि परम उत्तम बर पाए॥
गिरि सिला हाथ रोकी गिरत भूमि परिक्रम संग गए।
दृढ़ दास्य परम बिस्वास के कृष्णदास मेघन भए॥84॥

दामोदरदास कन्नौज के संभलवार खत्री रहे।
हरि सेयो तजि लाज सबै भय लोक मिटाई।
नारी सिर घट धारि प्रगट गागरी भराई॥
तृन सम धन के मोह तजे सेवा हित धारी।
अन्याश्रय को त्याग सदा भक्तन हितकारी॥
नित सेवत मथुरानाथ को प्रकट सम्प्रदा फल लहे।
दामोदरदास कन्नौज के संभलवार खत्री रहे॥85॥

पद्मनाभदास कन्नौज कों श्री मथुरानाथ न तजे।
नाम दास लै व्यास वृत्त प्रभु रूप लै त्यागी।
भाषौ अनुचित जानि पुष्टि मारग अनुरागी॥
कौड़ी लकड़ी बेंचि भागवत कृत निरवाहे।
छोला ही तें तोषि इष्ट ऐश्वर्ज न चाहे॥
सर्वज्ञ भक्त अरु दीन हित जानि एक कृष्णहि भजे।
पद्मनाभदास कन्नौज कों श्री मथुरानाथ न तजे॥86॥

तनया पद्मनाभदास की तुलसा वैष्णव रुचि रषी।
सषड़ी महाप्रसाद जाति भय भगत न लीनी।
जिय में यही बिचारि वैष्णवी पूरी कीनी॥
पै दोहन कों श्री मथुरापति कही सपन में।
सषडिहि महाप्रसाद जाति भय करौ न मन में॥
श्रीगोस्वामी हू मुदित भे सानुभावता अति लषी।
तनया पद्मनाभदास की तुलसा वैष्णव रुचि रषी॥87॥

पद्मनाभदास की बहू की ग्लानि गई सब जीय की।
लिख्यौ कुष्ट विरतान्त महाप्रभु निकट पठायो।
सेवक दुःख सुनि कै प्रभुहू कछु जिय दुःख पायो॥
दृढ़ विश्वास सुहेत दई अज्ञा प्रभु सेवहु।
वर पुरुषोत्तमदास कथा को समभयौ भेवहु॥
सेवत ही चारहि मास के भई पूर्व्व गति पीय की।
पद्मनाभदास की बहू की ग्लानि गई सब जीय की॥88॥

नाती पद्मनाभदास के रघुनाथदास सास्त्री रहे।
श्री गोस्वामी चरन कमल बन्दे गोकुल मैं।
पाई सुगम सुराह तिगुन मय या वपु कुल मैं॥
श्री मथुरापति प्रगट भाव बस बिहरत भूले।
या कुल की मरजाद जान जापैं अनुकूले॥
परमानन्द सोनी संग तें परम भागवत पद लहे।
नाती पद्मनाभदास के रघुनाथदास सास्त्री रहे॥89॥

छत्रानी रजो अडेल की परम भागवत रूप ही।
श्राद्ध लक्षमन भट्ट सरपि कछु थोरो हो तहं।
महाप्रभुन घृत हेत पठाए सेवक तेहि पहं॥
दिए नहीं बहु भांति मांगि थकि पारिष लीने।
इन ठाकुर घी देनो अति अनुचित दृढ़ कीने॥
स्राधहुदिन प्रभुहि जिवांइकै लोकमेटि हरि गति लही।
छत्रानी रजो अडेल की परम भागवत रूप ही॥90॥

पुरुषोत्तमदास सुसेठवर छत्री श्री काशी रहे।
नाम दान सनमान जासु गिरिजापति कीने।
निसि दिन भैरो द्वारपाल सिव सासन दीने॥
अन्याश्रय गत विरज मदनमोहन अनुरागी।
महाप्रभुन की कृपापात्रता जिन सिर जागी॥
जिन घर नन्दादिक कूप सो प्रगटि जनम उत्सव लहे।
पुरुषोत्तमदास सुसेठ बर छत्री श्री काशी रहे॥91॥

जाई पुरुषोत्तमदास की रुकमिनि मोहन मदन रत।
गंगा स्नानहु सों बढ़ि जिन सेवा गुनि लीनी।
श्री गोस्वामी श्री मुँख जासु बड़ाई कीनी॥
गहन नहानी एक बार चौबीस बरष में।
सेठौ सुनि भे मगन भजन सुख सिन्धु हरष में॥
सेवक स्वामी एकै अहैं यातें नित एकतै रहत।
जाई पुरुषोत्तमदास की रुकमिनि मोहन मदन रत ॥92॥

गोपालदास तिन ननय कों सुमिरत श्रीमोहन मदन।
भगवद नाम स्मरन हुंकारी प्रगट आप भर।
श्रीगोस्वामी श्रीमुख जिनहिं सराहत निरभर॥
भगवद लीला सदा नित्त नव अनुभव करते।
तिलक सुबोधनि पाठ कीरतन चित हित धरते॥
पुरुषोत्तमदास सुबंस में अति अनुपम अवतंस मन।
गोपालदास तिन तनय कों सुमिरत श्रीमोहन मदन ॥93॥

सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर हित चाकर भए।
देनो दियो चुकाइ जासु नवनीत पियारे।
श्री आचारज महाप्रभुन धनि धन्य उचारे॥
बाल भाव निज इष्टहि सेवत बालक पाए।
सेवा मैं बसु जाम लीन तन धन बिसराए॥
नित सकल काम पूरन परम दृढ़ विस्वास सरूप ए।
सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर हित चाकर भए ॥94॥

गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित धरे।
जजमानाश्रय भोग मदन मोहन के राषे।
जो आवै सो सकल तुरत अपने अभिलाषे॥
जा दिन नहिं कछु मिलै छानि जल अर्पन करते।
भूषे ही रहि आप वैष्णवनि हित अनुसरते॥
सागौ स्वादित अति जासु घर भक्त भाव सों नहिं टरे।
गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित धरे ॥95॥

बेनीदास माधवदास दोउ श्री नवनीत प्रिया निरत।
बेनीदास महान भागवत बड़े भ्रात हे।
विषई माधवदास अनुज पैं नहिं रिसात हे॥
बांटि सकल धन भए बिलग कामिनि अनुकूले।
मुक्तमाल लिए मोल इष्ट हित आपुहि भूले॥
प्रगटे ठाकुर बोरन लगे भए विषय तें तब विरत।
बेनीदास माधवदास दोउ श्री नवनीत प्रिया निरत॥96॥

हरिबंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्रीकाशी निवस।
द्वै दिन पटने रहे तहां हाकिम चित ऐसी।
अनुसरिहैं हम तुरत करैं ये आज्ञा जैसी॥
सपने ठाकुर कही डोल झलन हम चाहत।
हाकिम तें ह्वै बिदा तयारी करी बचन रत॥
श्री काशी में आए तुरत डोल झुलाए प्रेम बस।
हरिबंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्रीकाशी निवस॥97॥

गोविन्ददास भल्ला तज्यौ प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित।
चारि भाग निज द्रव्य प्रभुन आज्ञा तें कीने।
एक भाग श्री नाथै इक निज गुरु कहं दीने॥
एक भाग दै तजी नारि एक आपुहि लीने।
सोउ वैष्णवन हेत कियो सब व्यय भय हीने॥
तजि देव अंस गुरु अंस लहि सेवा केसवराय नित।
गोविन्ददास भल्ला तज्यौ प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित॥98॥

अम्मा पैं नित अनुकूल श्री बालकृष्ण ठाकुर प्रगट।
अम्मा बालक दोय ताहि करि प्यार पुकारैं।
मरे एक के ता रोवत हरि दुःख जिय धारैं॥
रोवत रोवत मरो सोऊ सुत बहु बिलाप कर।
श्री गोस्वामी समुझावन हित आए तेहि घर॥
मन्दिर को टेरा खोलि कै देषे पय पीवत निकट।
अम्मा पैं नित अनुकूल श्री बालकृष्ण ठाकुर प्रगट॥99॥

गंजन धावन छत्री हुते श्री नवनीत प्रिया सुखद।
जिन बिन ठाकुर महाप्रभु घरहू नहिं रहते।
जे ठाकुर बिन अतिहि दुसह दुःख सहत न कहते ॥
छन बिछुरत इन देह दहज जर वे न अरोगत।
इन दोउन की प्रीति परसपर कौन कहि सकत॥
सब भावहि बस निज ही रहे दिए जिनहिं निज परम पद।
गंजन धावन छत्री हुते श्री नवनीत प्रिया सुखद ॥100॥

ब्रह्मचारी नरायनदास जू बसत महाबन भजन रत।
धन कह गुन्यौ बिगार देखि निज सेज चहूं कित।
दिय बोहारि फेंकवाइ बहुरि लिपवायो हंसि हित॥
श्री गोकुल चन्द्रमा षीर खाई जिनके घर।
आरोगाई प्रभुन कही गति डरौ जाति डर॥
तवहीं तै सषड़ी खीर नहिं यहै रीति या पुष्टि मत।
ब्रह्मचारी नरायनदास जू बसत महाबन भजन रत॥101॥

छत्रानी एक महाबनहि सेवत नित नवनीत प्रिय।
पृथ्वि परिक्रम करत महाप्रभु तहां पधारे।
पाए श्रुति सरवस्व आपने प्रान अधारे॥
चार बेद के सार चार हरि विग्रह रूरे।
आस पास ही बसन मनोरथ निज जन पूरे॥
तिन मैं यह प्रेम सुरंग रंगि रही धरे अति भक्ति हिय।
छत्रानी एक महाबनहि सेवत नित नवनीत प्रिय ॥102॥

जियदास भजन रत जाम चहुं श्री लाडिले सुजान के।
उभय तनय पुरुषोत्तमदास छबीलदास जिन।
सेवा कीनी कछुक दिवस इन पै संतति बिन॥
तिनके मामा कृष्णदास पुनि सेवा कीनी।
तिन पीछे तिन मित्र सोई सेवा सिर लीनी॥
तहुं डेढ़ बरष रहि पुनि गए मन्दिर निज प्रिय प्रान के।
जियदास भजन रत जाम चहुं श्री लाडिले सुजान के ॥103॥

श्री ललित त्रिभंगी लाल की सेवा देवा सिर रही।
देवा पत्नी सहित सरस सेवा चित दीन्ही।
तिनहीं लौं तहं रहे ठाकुरौ भावहि चीन्ही॥
रहे तनय तिन चारि लई नहिं तिनतें सेवा।
भाव बस्य भगवान जासु कर्मादि कलेवा॥
अन्तरध्यान भे सु भौन तें निज इच्छा बिचरन मही।
श्री ललित त्रिभंगी लाल की सेवा देवा सिर रही॥104॥

रसिकाई दिनकरदास की कथा सुननि में अकथ ही।
तुरतहि धावत सुनत महाप्रभु कथा कहत अब।
काचिहि लीटी पाइ लेत सुधि रहति न तन तब॥
जानि कही प्रभु अति अनुचित तुम करी कथा हित।
भोग लगाइ प्रसाद पाइ अव तें ऐहौ नित॥
येई श्रोता अब आजु तें श्री मुख यह आपै कही।
रसिकाई दिनकरदास की कथा सुननि में अकथ ही॥105॥

मुकुन्ददास कायस्थ हे जिन मुकुन्द सागर किये।
श्री आचारज महाप्रभुन पद प्रीति जिनहिं अति।
याही तें प्रभु तिलक सुबोधनि भै तिन की मति॥
निज मुख श्री भागवत कहैं नहिं सुनै सु अपर मुष।
कर्म सुभासुभ जनित पंडितनि सुलभ न वह सुष॥
बरनाश्रम धर्मनि बंचकनि सहंजहि में इन ठगि लिये।
मुकुन्ददास कायस्थ हे जिन मुकुन्द सागर किये॥106॥

छत्री प्रभुदास जलोटिया टका मुक्ति दै दधि लई।
यह मारग अति बिषम कृष्ण चइतन्य सुनत ही।
मुर्छित स्वै जाहिं सु जिन कहं सुलभ सुषद ही॥
वृन्दाबन प्रति बृच्छ पत्र ब्रज प्रगट दिखाए।
अवगाहन नहिं दीन प्रभुन परसाद पवाए॥
सेवा श्रीमोहन मदन की जिनहिं सावधानी दई।
छत्री प्रभुदास जलोटिया टका मुक्ति दै दधि लई॥107॥

प्रभुदास भाट सिंहनन्द के तीर्थ प्रथोदिक निन्दियो।
सेवत नीकी भांति ठाकुरहिं बृद्ध भए अति।
तीर्थ प्रथोदिक पहुंचाए सब अन्याश्रित मति॥
अन्याश्रय लषि सावधान आए निज घर कहं।
करि सेवा निज सेव्य ललन की तजी देह तहं॥
निन्दा करि कीरति चौधरी मार षाइ पद बन्दियो।
प्रभुदास भाट सिंहनन्द के तीर्थ प्रथोदिक निन्दियो॥108॥

पुरुषोत्तमदास जु आगरे राजघाट पै रहत हे।
श्रीगोस्वामी एक समै आए तिनके घर।
भई रसोई भोग समर्प्यौ किए अनौसर॥
पुनि सादर जिन सेव्य ठाकुरै के भाजन में।
आरो गाए जस आरोगे नन्द भवन में॥
श्री ठाकुर ही की सेज पै पौढ़ाए सेवत रहे।
पुरुषोत्तमदास जु आगरे राजघाट पै रहत हे॥109॥

घर तिपुरदास को सेरगढ़ हुते सुकायथ जात के।
श्री हरिके रंग रंगे प्रभुन पद पदुम प्रीति अति।
सही कैद दइ जिनहिं तुरुक बहु मार मन्द मति॥
बिन चरनोदक महाप्रसाद लिये न पियत जल।
इन कहं खेदि जानि ठाकुरहु परत न छन कल॥
गज्जी की फरगुल इनहिं की हरे सीत श्रीनाथ के।
घर तिपुरदास को सेरगढ़ हुते सुकायथ जात के॥110॥

पूरनमल छत्री प्रभुन के कृपापात्र अति ही रहे।
आयसु लहि श्रीनाथ हेतु मन्दिर समराए।
सुभ मुहूर्त में जहं श्रीनाथहि प्रभु पधराए॥
अति सुगन्ध अरगजा समर्पे जिन अपने कर।
दिय ओढ़ाय आपने उपरना गोस्वामी बर॥
गद्दल परसादी नाथ के बरस बरस पावत रहे।
पूरनमल छत्री प्रभुन के कृपापात्र अति ही रहे॥111॥

यादवेन्द्रदास कुम्हार श्रीगोस्वामी आयसु निरत।
श्रीगोस्वामी संग कहूं परदेस चलत जब।
एक दिवस की सामग्री के भार बहत सब॥
सेवा करहिं रसोई निसि में पहरा देते।
मास दिवस के काम एक ही दिन करि लेते॥
जे कूप खोदि निज कर-कमल खारो जल मीठो करत।
यादवेन्द्रदास कुम्हार श्रीगोस्वामी आयसु निरत॥112॥

गोसांईदास सारस्वत देह तजी बदरी बनैं।
ठाकुर सेवा महाप्रभुन इन सिर पधराए।
सेये नीकी भांति ठाकुरहि अतिहि रिझाए॥
ठाकुर आयसु पाइ बदरिकास्रमहि पधारे।
ठाकुर सेवा काहु भागवत माथे धारे॥
जिन यह इनसों निरधार किय ठाकुर देव न इहि तनैं।
गोसांईदास सारस्वत देह तजी बदरी बनैं॥113॥

माधवभट कसमीर के मरे बालकहि ज्याइयो।
अतिहि दीन ह्वै लिषी सुबोधनि महाप्रभुन पैं।
सेवा में अपराध पर्‍यौ अनजाने उन पैं॥
लघु बाधा में तजी देह चोरनि सर लागे।
श्री आचारज महाप्रभुन पद रति रस पागे॥
श्रीनाथौ जिनकी कानि तें निज पासहि पधराइयो।
माधवभट कसमीर के मरे बालकहि ज्याइयो॥114॥

गोपालदास पै सदन बहु पथिकनि के बिस्राम हित।
आवत श्री द्वारिका पद्मरावल निवसे जहं।
सुनि गोपालदास सेवा सो पहुंचि गए तहं॥
पूछि कुसल लषि द्वारिकेस दरसन दरसन अभिलाषी।
कही प्रगट रनछोर अडेल लषे निज आंषी॥
सुनि बिरजो माव पटेल लै आइ दरस लहि भे मुदित।
गोपालदास पै सदन बहु पथिकनि के बिस्राम हित॥115॥

दुज सांचोरे रावल पदुम श्री रनछोर कही करी।
परमारथी गुपालदास सिषए ये आए।
महाप्रभुन दरसन करि निज अभिमत फल पाए॥
लै प्रभु पद चन्दन चरनामृत भे विद्याधर।
श्री ठाकुर आयसु तें गए कोऊ सेवक घर॥
पथ बहु रोटी अरपन करी घी चुपरी न रूषी परी।
दुज सांचोरे रावल पदुम श्री रनछोर कही करी॥116॥

पुरुषोत्तम जोसी दुज हुते कृष्णभट्ट पैं अति मुदित।
आए ये उज्जैन पद्मरावल के सुत घर।
रहे तहां पै तिन सब इनको कीन अनादर॥
बड़े पुत्र तिन कृष्ण भट्ट निज घर पधराए।
राखे तहं दिन चारि प्रसादहु भले लिवाए॥
सुनि सतसंगी हरिबंस के गोस्वामी मुष भगत हित।
पुरुषोत्तम जोसी दुज हुते कृष्णभट्ट पैं अति मुदित॥117॥

ऐसे भूले रजपूत कों जगन्नाथ लीने सरन।
श्रीठाकुर अर्पित अशुद्ध गुनि अति दुःख पाए।
ताती सीर समर्पि सिषे जो प्रभुन सिषाए॥
ज्वार भोग अनकुट पैं पेट कुपीर उपाई।
इरषा सों दुरजन इन पैं तरवार चलाई॥
तेहि श्री कर सों गहि कै कही मारै मति ये महत जन।
ऐसे भूले रजपूत कों जगन्नाथ लीने सरन॥118॥

जननी नरहर जगनाथ की महाप्रभुन छबि छकि रहीं।
इक इक मुहर भेंट हित दै पठए दोउ भाइन।
नाम निवेदन हेतु प्रभुन पैं अति चित चाइन॥
मिले कृपा करि दियो दरस पुरुषोत्तम नगरी।
भई स्वरूपासक्ति तुरत भूली सुधि सगरी॥
पुनि मांगि भेंट की मुहर प्रभु लिये सरन दोउन तहीं।
जननी नरहर जगनाथ की महाप्रभुन छबि छकि रहीं॥119॥

नरहर जोसी जगनाथ के भाई बड़े महान हे।
भोग अरोगन आए सिसु ह्वै अपन बिसारी।
पै इन प्रभु की कानि रंचकौ चित न बिचारी॥
सावधान भे सुनत अनुज सों प्रभु की करनी।
गोस्वामी के सरन किए जजमान सधरनी॥
तेहि जरत बचाए आगि तें ऐसे ये सुषदान हे।
नरहर जोसी जगनाथ के भाई बड़े महान हे॥120॥

सांचोरा राना ब्यास दुज सिद्धपुर निवसत रहे।
जगन्नाथ जोसी गर मुद्गर तपित लाइकै।
हाकिम पैं अबिकारी इनकों किए जाइकै॥
जिनकी मति लहि राजपुतानी सती भई नहिं।
शुद्ध होइ आई ताकों तिन दिए नाम तहिं॥
पुनि सरनागत करि प्रभुन के पर उपकारी पद लहे।
सांचोरा राना ब्यास दुज सिद्धपुर निवसत रहे॥121॥

धनि राजनगर बासी हुते रामदास दुज सारस्वत।
श्री नटवर गोपाल पादुका गुरु सेयौ इन।
श्री रनछोर सु कहे ग्रहन किय निज नारिहु जिन॥
ठाकुर ही आयसु तें तिय कों नामहु दीने।
तब ताके कर महाप्रसाद मुदित मन लीने॥
पुनि नाम निवेदन प्रभुन पैं करवाए कहि कानि सत।
धनि राजनगर बासी हुते रामदास दुज सारस्वत॥122॥

गोबिन्द दूबे सांचोर द्विज नवरत्नहि नित पाठ किय।
श्री गोस्वामी पत्र पाइ मीरहि द्रुत त्यागी।
श्री ठाकुर रनछोर बारता रस अनुरागी॥
प्रभुन थार के महाप्रसाद दिए नहिं इक दिन।
सकल वैष्णवनि सहित उपास किए तिहि दिन तिन॥
सुनि भूखे श्री रनछोर सो थार महापरसाद दिय।
गोबिन्द दूबे सांचोर द्विज नवरत्नहि नित पाठ किय॥123॥

राजा माधौ दूबे हुते दोउ भाई सांचोर दुज।
रामकृष्ण हरिकृष्ण बड़े छोटे दोउ भाई।
बड़े पढ़े बहु कथा कहैं लघु मूढ़ सदाई॥
भावज की कटु सुनि दूबे के सरनहिं आए।
अष्टोत्तर सतनाम बार द्वै जपि सब पाए॥
पुनि पाइ नाम श्री प्रभुन पैं भे निज कुलके कलस धुज।
राजा माधौ दूबे हुते दोउ भाई सांचोर दुज॥124॥

जननी श्लोकोत्तम दास कों नाथ सेवकनि मिलि कह्यौ।
करैं रसोई प्रीति समेत परोसि लिवावैं।
याही तें श्रीनाथ सेवकनि कों अति भावैं॥
श्री गोस्वामी रीझि रहे लषि शुद्ध प्रेम पन।
रस वात्सल्य अलौकिक जानि सिहाहिं मनहिं मन॥
मन शुद्धाद्वेत सरूप मति कृष्ण भक्ति तजि तन लह्यौ।
जननी श्लोकोत्तम दास कों नाथ सेवकनि मिलि कह्यौ॥125॥

ईश्वर दूबे सांचोर के मुखिया भे श्रीनाथ के।
श्लोकोत्तम जन नाम धन्य येऊ पुनि पाए।
नाथ सेवकनि अधिक घीय दै मातु कहाए॥
अबिरल भक्ति विशुद्ध गुसांई सों इन लीन्हीं।
महाप्रभुन्न पथ प्रीति रीति इन दृढ़ करि चीन्हीं॥
पाई सेवा श्रीअंग की सरन अनाथनि नाथ के।
ईश्वर दूबे सांचोर के मुखिया भे श्रीनाथ के॥126॥

वासुदेव जन जन्मस्थली काजी मद मरदन किए।
श्री गोपीपति मुहर गुसाईं पैं पहुंचाई।
करी दंडवत लाइ पहुंच पत्रिका सुहाई॥
मथुरा तें आगरे गए आए जुग जामैं।
सीहनन्द वैष्णवनि उछाहनि में अभिरामैं॥
मन डेढ़ नित्त ये खात है ढाल गुरज इक कर लिए।
वासुदेव जन जन्मस्थली काजी मद मरदन किए॥127॥

बाबा बेनू के अनुजवर कृष्णदास घघरी रहे।
श्री केसव के कीर्तनिया ये अरु जादव जन।
कृष्णदास तहं गिरिवरधर ध्यावत त्यागे तन॥
नाथ दरस करि गिरि नीचे बेनू तन त्यागे।
जादवदासौ सर रति नाथ धुजा के आगे॥
कहि नाथ देह तजि आगि धरि बायु बहे तिन तन दहे।
बाबा बेनू के अनुजवर कृष्णदास घघरी रहे॥128॥

जगतानन्द दुज सारस्वत थानेसर निवसत रहे।
एक श्लोक के अर्थ प्रभुन त्रै जाम बिताए।
कही मास द्वै तीनि बीतिहै सुनि सिर नाए॥
देहु नाम इन बिनय करी तब प्रभु अपनाए।
पुनि महाप्रभुन को नित निज घर पधराए॥
तहं नित सेवा बिधि तिनहिं कहि सावधान सेवन कहे।
जगतानन्द दुज सारस्वत थानेसर निवसत रहे॥129॥

दोऊ भाई छत्री हुते महाप्रभुन रस रंग रए।
आनन्ददास बड़े भाई नित बैठि अनुज संग।
महाप्रभुन के चरित कृष्ण गुन कहत पुलकि अंग॥
सोइ जात जब दास बिसम्भर भरत हुंकारी।
भरत आप तब श्री हरिजू निज जन हितकारी॥
कहि कथा पूछि अन जहि मुदित जानि ठाकुरहि ठगि गए।
दोऊ भाई छत्रि हुते महाप्रभुन रस रंग रए॥130॥

इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहं निज कर लहे।
माटी के सब पात्र सदन सांकरो सुहायो।
वृद्धि भई निज ठाकुर रत अपरस बिसरायो॥
लखि वैष्णव श्री महाप्रभुन पधराए तेहि घर।
प्रीति भाव लखि भे प्रसन्न अति ही जिय प्रभुवर॥
सेवकन कह्यौ मरजाद तजि इन प्रभु पद दृढ़ करि गहे।
इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहं निज कर लहे॥131॥

छत्रानी इक हरि नेह रत वत्सलता की खानि ही।
दिन दस केक लडुआ इक ही दिन करिकै राखे।
सो प्रभु आप उठाइ अंक लै तुरतहि चाखे॥
यह मरजादा भंग देखि रोई भय होई।
आरति के हित कियो कह्यौ तब प्रभु दुःख जोई॥
तब नित सामग्री नव करति ऐसी चतुर सुजानि ही।
छत्रानी इक हरि नेह रत वत्सलता की खानि ही॥132॥

समराई हठ करि प्रभुन कों निज कर भोग लगाइयो।
सास गोरजा महाप्रभुन के दरस पधारी।
तब यह हरि सनमुख लाई रच रुचि कै थारी॥
जब न अरोगे तब इन कछु आपहु नहिं खायो।
ऐसे ही हठ करि जल बिनु दिन कछुक बितायो॥
तब आपु प्रगट ह्वै प्रेम सों जाल लैं याहि पिवाइयो।
समराई हठ करि प्रभुन कों निज कर भोग लगाइयो॥133॥

दासी कृष्ण मति रुचि भरी गुरु सेवा मैं अति निरत।
जब गोस्वामी कहं चतुर्थ बालक प्रगटाए।
तब श्री बल्लभ गोस्वामी बर नाम धराए॥
कृष्णा भाख्यो इनकों गोकुलनाथ पुकारो।
तासों जग में यहै नाम सब लेत हंकारे॥
गोस्वामी हू जा कानि सो यहै नाम भाखे तुरत।
दासी कृष्ण मति रुचि भरी गुरु सेवा मैं अति निरत॥134॥

श्रीबूला मिश्र उदार अति बिनु रितुहू बालक दियो।
जिजमानहि हरिबंस एक ही छन्द सुनाई।
करम लिखी हू उलटन पतनी गोद भराई॥
छत्री को इन सकल मनोरथ पूरन कीनो।
करूना चित मैं धारि दान बालक को दीनो॥
हरि गुरु बल जो मुख सो कह्यौ सोई हठ करि कै कियो।
श्रीबूला मिश्र उदार अति बिनु रितुहू बालक दियो॥135॥

मीराबाई की प्रोहिती रामदास जू तजि दई।
हरि गुरु परम अभेद भाव हिय रहत सदाई।
याही तें गुरु कीरति इन हरि सनमुख गाई॥
मीरा भाख्यौ हरि चरित्र गाओ द्विजराई।
सुनि अति कोपे इन जाने नहिं वल्लभराई॥
लखि द्वैध भाव तजि गांव सों दूर बसे मति गुरु भई।
मीराबाई की प्रोहिती रामदास जू तजि दई ॥136॥

सेवक गोबर्द्धननाथ के रामदास चौहान हे।
जब प्रगटे प्रभु प्रथम गोबरधन गिरि के ऊपर।
नाम नवल गोपाललाल त्रय दमन मनोहर॥
तब श्री वल्लभ इनकों सेवा हरि की दीनी।
रहै मड़ैया छाइ परम रति मैं मति भीनी॥
नित ब्रज को गारस अरपि कै सेवत हरि सुख खान हे।
सेवत गोबर्द्धननाथ के रामदास चौहान हे ॥137॥

द्विज रामानन्द बिछिप्त बनि जगहि सिखाई प्रेम बिधि।
गुरु रिसि करि कै तज्यौ तऊ हरि जेहि नहिं त्याग्यौ।
दरसायो सिद्धान्त यहै पथ को अनुराग्यौ॥
बिकल पथहि पथ फिरत खात तन की सुधि नाहीं।
निरखि जलेबी हरिहि समर्पी अति चित चाही॥
ताको रस हरि के बसन मैं देख्यौ गुरुवर भावनिधि।
द्विज रामानन्द बिछिप्त बनि जगहि सिखाई प्रेम बिधि ॥138॥

छीपा कुल पावन भे प्रगट विष्णुदास वादीन्द्रजित।
हरिसेवक बिन लेत न जलहू प्रेम बढ़ावन।
भट्टनहू के परस लेत नहिं जानि अपावन॥
श्री गोस्वामी चरन कमल मधुकर ये ऐसे।
स्वाती अम्बर को चातक चाहत है जैसे॥
धनि धनि जिनके प्रेम-पन अन्याश्रय गत धीर चित।
छीपा कुल पावन भे प्रगट विष्णुदास वादीन्द्रजित ॥139॥

जन जीवन प्रभु की आनि दै मेघनि नहिं बरसन दए।
एक समै श्री महाप्रभु दरसन करिबे हित।
आवत हे सब सीहनन्द के वैष्णव इक चित॥
लागे करन रसोई मग में घन घिरि आए।
निहचै जानि अकाज अनन्यनि अति अकुलाए॥
चढ़ि आई गुरू की कानिचित मघवा मत जिन हरि लए।
जन जीवन प्रभु की आनि दै मेघनि नहिं बरसन दए॥140॥

भगवानदास सारस्वतै दई प्रभुन श्री पांवरी।
श्रीआचराज जाइ बिराजे इनके घर जहं।
नित उठि प्रातहि करहिं दंडवत ये सादर तहं॥
तातें कोउ नहिं धरत पाव तेहि पूजित ठौरहि।
ठाकुर जिन सों सानुभाव कहिए का औरहि॥
सेये जिन अपन बिसारि कै भरी निरन्तर भांवरी।
भगवानदास सारस्वतै दई प्रभुन श्री पांवरी॥141॥

भगवानदास श्रीनाथ के हुते भितरिया सुखद अति।
कछु सामग्री दाझि गई इक दिन अनजाने।
गोस्वामी सेवा तें बाहिर किए रिसाने॥
सुनि जन अच्युत गोस्वामी सौ रोड़ बिनय की।
नाथ हाथ गति प्रभु सम्बन्धी जीव निचय की॥
सुनि कर गहि लै गिरिराज पै कही सेइ अबतें सुमति।
भगवानदास श्रीनाथ के हुते भितरिया सुखद अति॥142॥

दुज अच्युतदास सनोड़िया चक्रतीर्थ पै रहत हे।
आवैं नित सिंगार समै श्रीनाथ दरस हित।
पुनि निज थल कों जात हुते ऐसो साइस चित॥
नाथ परिक्रम दंडवती इन तीन करी जब।
श्री गोस्वामी श्री-मुख करी बड़ाई बहु तब॥
हे गुनातीत ये भगवदी प्रभुन भगति रस बहस हे।
दुज अच्युतदास सनोड़िया चक्रतीर्थ पै रहत हे॥143॥

दुज गौड़ दास अच्युत तहीं प्रभु बिरहानल तन दहे।
सेवा पधराई श्री मोहन मदन लाल की।
आपहुं बैठे पाट प्रगटि तन छबि रसाल की॥
सेये नीकी भांति मदन मोहन रिझवारे।
श्रीगोस्वामी जिनहिं नमत लपि अपन बिसारे॥
प्रभु असुर विमोहन चरित लपि बद्रिनाथ दरसन लहे।
दुज गौड़ दास अच्युत तहीं प्रभु बिरहानल तन दहे॥144॥

श्री प्रभुन सरूप सुजान सुभ अच्युत अच्युतदास द्विज।
प्रभु संग लौंपृथी परिक्रम करि पद पांवरि पूजत।
प्रभु के लौकिक करम धरम तिन कहं नहिं सूझत॥
जिन लषि नर सुर असुर बिमोह परत भव सागर।
गुनातीत प्रभु चरित मगन मन जन नव नागर॥
मोहित जन लषि प्रभु दरस दै कहे सगुन प्रागट्य निज।
श्री प्रभुन सरूप सुजान सुभ अच्युत अच्युतदास द्विज॥145॥

नरायनदास प्रभु पद निरत अम्बालय में बसत है।
नृप नौकर अवसर न पावते प्रभु दरसन कों।
उत्कंठित दिन राति धन्य धनि जिनके मन कों॥
कब जैहौ भैया श्रीवल्लभ के दरसन हित।
चाकर राषे सुरति देन कों यों छन छन तिन॥
बहु भेंट पठावत हे प्रभुहि ऐसे ये भागवत हे।
नरायनदास प्रभु पद निरत अम्बालय में बसत है॥146॥

नरायनदास भाट जाति मथुरा में निवसत रहे।
जिनकों आयुस दई मदनमोहन गुनि प्रभु जन।
बाहिर मुहिं पधारउ काढ़िहों गुप्त इतै बन॥
मथुरा तें निकसाइ तुरत बाहिर पधराए।
पुनि श्री गोपीनाथ सिंहासन पै बैठाए॥
तातें दरसन करि सबै सहजहि अभिमत फल लहे।
नरायनदास भाट जाति मथुरा में निवसत रहे॥147॥

नरिया नरायनदास भे सरन प्रभुन के अनुसरे।
पातसाह ठट्ठा के ये दीवान हेत हे।
दुसह दंड में परि नित पांच हजार देत हे॥
रुपये लाख पचास भरन लौं कैद किए तिन।
इक दिन के द्वैं गुर भाइन को देइ दिए जिन॥
छुटि पातसाह सों सांच कहि सहस मुहर प्रभु पद धरे।
नरिया नरायनदास भे सरन प्रभुन के अनुसरे॥148॥

छत्रानी एक अकेलियै सीहनन्द मैं बसत ही।
श्री नवनीत प्रिया की करति अकिंचन सेवा।
तरकारी हित सिसु लौं झगरत जासों देवा॥
माया विद्या अन सषड़ी सषड़ी कै त्यागी।
भावहि भूषे घी चुपरी रोटिहि अनुरागी॥
माया विसिष्ट प्रगटत सदा प्रेमहि तें प्रभु तुरत ही।
छत्रानी एक अकेलियै सीहनन्द मैं बसत ही॥149॥

कायथ दामोदरदास जिन श्रीकपूररायहि भज्यौ।
जिनकी जुबती हुती बीरबाई प्रसूतिका।
श्री ठाकुर सेवा की सोई सुचि बिभूतिका॥
लई सूतकौ मैं सेवा जासो प्रभु पावन।
सेवक प्रभुन सरूप होत नहीं कबहुं अपावन॥
नहिं आतम सुद्धासुद्ध कहुं सोइ प्रभु सोइ सेवक सज्यौ।
कायथ दामोदरदास जिन श्रीकपूररायहि भज्यौ॥150॥

छत्री दोउ स्त्री पुरुष हे रहे आइ सिहनन्द में।
निपटै लघु घर हुतो मेड़ ठाकुर पौढ़ाए।
जिनके डर सों सोवत निसि आंगन सचुपाए॥
पावस रितु में भींजत जानि पुकारि कही सुनि।
घर मैं सोवहु भींजौ मति न करै ऐसी पुनि॥
तौऊ सांस न पावै वजन सोए जा आनन्द में।
छत्री दोउ स्त्री पुरुष हे रहे आइ सिहनन्द में॥151॥

श्री महाप्रभुन सूतार घर श्रम पिछानि पग धारते।
प्रभुन दरस बिन किए रहे नहिं जे एकौ दिन।
छुटे सफल गृह काज भए घर के सब सुष बिन॥
याही तें प्रभु आपै आवत हुते सदन जिन।
बहुत बारता करत हुते धनि जिनसों अनुदिन॥
पै दिन चौथे पचयें कछु जननी रिस जिय धारते।
श्री महाप्रभुन सूतार घर श्रम पिछानि पग धारते॥152॥

अन्य मारगी मित्र इक छत्री सेवक अति बिमल।
अन्य मारगी भवन नेह बस गए एक दिन।
किए पाक तेहि ठाकुर आगे नाथ अरपि तिन॥
भोग सराए ताहि लिवाए लिय आपौ पुनि।
भूपे ठाकुर ताहि जगाय कही सब सों सुनि॥
परभाव जानि या पन्थ को भयो सरन सोऊ बिकल।
अन्य मारगी मित्र इक छत्री सेवक अति बिमल॥153॥

चित लघु पुरुषोत्तमदास के गुरु ठाकुर मैं भेद नहिं।
श्री आचारज महाप्रभुन पद रति रस भीने।
आपै के गुन श्रवन कीरतन सुमिरन कीने॥
आपै कहं आतम अरपे सेये पूजे जन।
सषा दास आपहि के बन्दे आपहि को इन॥
आपहु जिनकों अति ही चहे भक्ति भाव धरि जीय महिं।
चित लघु पुरुषोत्तमदास के गुरु ठाकुर मैं भेद नहिं ॥154॥

कविराज भाट श्रीनाथ कों नित नव कबित सुनावते।
तीनों भाई नाम पाइकै किए निबेदन।
नाथ निकअ बहु कबित पढ़े प्रभु भए मुदित मन॥
धनि धनि धनि वे कबित धन्य वे धन्य भगति जिन।
धनि धनि धनि श्रीप्रभुन नाम उद्धारन अगतिन॥
किए कबित अनेकनि प्रभुन के सदा प्रभुन मन भावते।
कविराज भाट श्रीनाथ कों नित नव कबित सुनावते ॥155॥

गोपालदास टोरा हुते अति आसक्त प्रभून पै।
मार्कंडे पूजत हे प्रभु निज जन्मोत्सव दिन।
इक दिन आगे आए हे गाए पद तेहि छिन॥
सुनि माधव में वल्लभ हरि अवतरे दास मुष।
कृष्ण भगति मुद मगन भए तकि ज्ञानादिक सुष॥
बहु छन्द प्रबन्ध प्रवीन ये बारे रसिक दुहून पै।
गोपालदास टोरा हुते अति आसक्त प्रभून पै॥156॥

जनार्दनदास छत्री भए सरन पूर्न बिस्वास तें।
दरसन करत प्रभुन पूरन पुरुषोत्तम जाने।
करी बिनय कर जोरि सरन मोहिं लेहु सुजाने॥
आपै आज्ञा दई न्हाइ आवौ ते आए।
पाइ नाम पुनि किए समर्पन अति चित चाए॥
ये सन्निधान श्रीनाथ के न्यारे ह्वै भव-पास तें।
जनार्दनदास छत्री भए सरन पूर्न बिस्वास तें॥157॥

गुडुस्वामी ब्रह्म सनोड़िया प्रभुन सरन भे प्रभु कहे।
गए प्रभुन पैं न्हाइ दंडवत करी बिनय कै।
कही सरन मोहिं लेहु नाथ अब देहु अभय कै॥
कही आप मुसिकाय कहौ स्वामी किमि सेवक।
पुनि तिन बन्दन करी कही आज्ञा मुहिं देवक॥
लहि नाम सेवकनि सहित निज किए निवेदन मुद लहे।
गुडुस्वामी ब्रह्म सनोड़िया प्रभुन सरन भे प्रभु कहे॥158॥

कन्हैया साल छत्री जिन्हैं प्रभुन पढ़ाए ग्रन्थ निज।
श्रीमद्गोस्वामी जू जिन सों पढ़े ग्रन्थ बहु।
इनकी कहा बड़ाई करिए मुख अति ही लहु॥
प्रेम दास्य बिस्वास रूप ये नीके जानत।
श्रीहरि गुरु की भगति भाव करिकै पहिचानत॥
निज गमन समय राख्यौ इन्हैं थापन कों भुवपन्थ निज।
कन्हैया साल छत्री जिन्हैं प्रभुन पढ़ाए ग्रन्थ निज॥159॥

गौड़िया सु नरहरदास जू प्रभु न कृपा पाए सुपद।
जिन घर बैठे पाट मदन मोहन पिय प्यारे।
सोए सहित सनेह जानि प्रेमहिं पर वारे॥
पुनि पधराए श्रीगोस्वामी पैं यह गुनि जिय।
ये सुष पैहैं यहीं लाल हैं इनहीं के प्रिय॥
पुनि गोस्वामी पधरायो श्रीरघुनाथ सदन सुषद।
गौड़िया सु नरहरदास जू प्रभु न कृपा पाए सुपद॥160॥

बादा श्रीप्रभु की कृपा तें दास बादरायन भए।
आछे भट तें सुने भागवत नाम पाइ कैं।
जाते श्रीरनछोर प्रभुन तहं टिके आइ कैं॥
पाए प्रभु पैं नाम समर्पन किए गए संग।
दरसन करि पुनि आइ मोरबी रंगे प्रभुन रंग॥
पुनि रहे तहैं आयसु प्रभुन आपुन श्रीगोकुल गए।
बादा श्रीप्रभु की कृपा तें दास बादरायन भए॥161॥

नरो सुता तिय आदि सब सद्दू मानिकचन्द की।
देवदमन जिन सदन पियत पय नरो नियावति।
जात कटोरो भूलि ताहि मुषियहि दै आवति॥
मांगि प्रभुन सों गाय नाम गोपाल धराए।
निज प्रागट्य जनाइ प्रभुन तिन गृह पधराए॥
प्रभु कृपापात्र सुचि भगवदी मूरति ब्रह्मानन्द की।
नरो सुता तिय आदि सब सद्दू मानिकचन्द की॥162॥

संन्यासी नरहरदास पैं सुगुरु कृपा अतिसय हुती।
एक समै श्री महाप्रभु द्वारिका पधारे।
बेना कोठारिहु लै एऊ संग सिधारे॥
तहां विनय करि किए सुसेवक सरन प्रभुन के।
जिनके सरनागत पै बस नहिं चलत तिगुन के॥
सेवा अपराधौ तिगुन सिर भेद भगति यह दृढ़मती।
संन्यासी नरहरदास पैं सुगुरु कृपा अतिसय हुती॥163॥

गोपालदास जटाधारी नाथ खवासी करत हे।
ग्रीषम भोग अरोगि जामिनी जगमोहन में।
पैढ़त जहं श्रीनाथ स्वामिनी के गोहन में॥
आंखि मींचि चहुं जाम करत बीजन तहं ठाढ़े।
प्रभु आयसु तें आरस गत अति आनन्द बाढ़े॥
ठाकुर सेवक कहं दंड दै बादि बिरह मैं तन दहे।
गोपालदास जटाधारी नाथ खवासी करत हे॥164॥

सति धर्म मूल तिय बनिक गृह कृष्णदास पहुंचाइयौ।
वैष्णव धर्म अकिंचनता तेहि प्रगटि दिखाई।
जिनकी तिय करि कौल बनिक सों सीधो लाई॥
करी रसोई भोग अरपि पुनि भोग सराए।
बहुरि अनौसर करिकै सब वैष्णवनि जिंवाए॥
लषि ज्ञानचन्द पै प्रभु कृपा आपुहि कौल चिताइयौ।
सति धर्म मूल तिय बनिक गृह कृष्णदास पहुंचाइयौ॥165॥

श्रीगोस्वामी के प्रान प्रिय संतदास छत्री रहे।
श्रीहरि पद अरबिंद मरंद मते मिलिंद ये।
गावन में हरि चरित मौन में अति अमंद ये॥
अन आश्रय अरु वैष्णव धन विष जिनहिं विषहु तें।
याही तें ये हुते नियारे द्वन्द्व दुषहु तें॥
कौड़ी बेंचत हे ढाइयै पैसनि हित अधिक न चहे।
श्रीगोस्वामी के प्रान प्रिय संतदास छत्री रहे॥166॥

सुन्दर दासहि के संग तें वैष्णव माधवदास भे।
माधवदास कृष्ण चैतन्य सुसेवक दृढ़मति।
जाको भोग समर्पित पावत प्रेत दुष्ट अति॥
पै तिहि दृढ़ बिस्वास जु श्री ठाकुरै अरोगत।
श्री आचारज प्रभुन निन्दि सो लह्यौ दंड द्रुत॥
अपराध आपनो जानि कैं महाप्रभुन की आस भे।
सुन्दर दासहि के संग तें वैष्णव माधददास भे॥167॥

बिरजो मावजी पटेल दोउ वैष्णव ही हित अवतरे।
श्री गोकुल द्वै बेर साल में सदा आवते।
गाड़ा गाड़ा गुड़ घृत सौंजनि सहित लावते ॥
एक पाष श्रीगोकुल इक श्रीनाथद्वार रह।
खिरक लिवांवत भोग समर्पित सब ग्वालिनि कह ॥
पुरुषोत्तम खेतहि वैष्णवनि सबै लिवाए मुद भरे।
बिरजो मावजी पटेल दोउ वैष्णव ही हित अवतरे॥168॥

गोपालदास रोड़ा दिए नाम दान प्रभु के कहे।
एक समैं गोपालदास श्रीनाथहिं आए।
आयो ज्वर द्वै चारि भए लंघन दुष पाए ॥
लागी प्यास कही सेवक सों सोइ गयो सो।
आपुहि झारी प्याए जल दुष बिसरो सो ॥
श्री गोस्वामी की सीष सों प्रभु ता मद रंच न रहे।
गोपालदास रोड़ा दिए नाम दान प्रभु के कहे ॥169॥

काका हरिबंस प्रसंस मति धरम परम के हंस भे।
श्री बिट्ठल सुत जेहि काका सम आदर करहीं।
वैष्णव पर अति नेह सुअन सम नित अनुसरहीं ॥
नाम दान दै जगत जीव फिरि फिरि के तारे।
ठौर ठौर हरि सुजस भक्ति हित बहु बिस्तारे ॥
प्रिय कंस धंस के होइ कै छत्रिहु बल्लभ बंस भे।
काका हरिबंस प्रसंस मति धरम परम के हंस भे ॥170॥

गंगा बाई श्रीनाथ की अतिहि अन्तरंगिनि भई।
जवन उपद्रव जब श्रीप्रभु मेवाड़ पधारे।
मारग मैं यह साथ रहीं हिय भगति बिचारे ॥
जब रथ कहुं अड़ि जात तबै सब इनहिं बुलावैं।
श्री जी के ढिग भेजि नाथ इच्छा पुछवावैं ॥
श्री बिट्ठल गिरिधर नाम सों पद रचि हरि लीला गई।
गंगा बाई श्रीनाथ की अतिहि अन्तरंगिनि भई ॥171॥

श्री तुलसिदास परताप तें नीच ऊंच सब हरि भजे।
नन्ददास अग्रज द्विज-कुल मति गुन गन मंडित।
कविहरि जस गायक प्रेमी परमारथ पंडित॥
रामायन रचि राम भक्ति जग थिर करि राखी।
थोरे मैं बहु कह्यौ जगत सब याको साखी॥
जगलीन दीनहू जा कृपा बल न राम चरितहि तजे।
श्री तुलसिदास परताप तें नीच ऊंच सब हरि भजे॥172॥

गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक जग में प्रगट।
भट्ट नागजी कृष्णभट्ट पद्मा रावल सुत।
माधोदास हिसार बास कायथ जिन पितु जुत॥
बिट्ठलदास निहालचद श्रीरूपमुरारी।
रूपचन्द नन्दा खत्री भाइला कुठारी॥
राजा लाखा हरिदास भाई जलौट हरि नाम रट।
गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक जग में प्रगट॥173॥

गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक हरि चरन रत।
कृष्णदास कायस्थ नरायनदास निहाला।
ज्ञानचन्द ब्राह्मणी सहारनपुर के लाला॥
जन अर्दन परसाद गोपालदास पाथी गनि।
मानिकचन्द मधुसूदनदास गनेस ब्यास पुनि॥
जदुनाथ दास कान्हो अजब गोपीनाथ गुआल सत।
गोस्वामी बिट्ठलनाथ के ये सेवक हरि चरन रत॥174॥

हित रामराय भगवान बलि हठी अली जगनाथ जन।
कही जुगल रस केलि माधुरीदास मनोहर।
बिट्ठल बिपुल बिनोद बिहारिनि तिमि अति सुन्दर॥
रसिक बिहारी त्यौंही पद बहु सरस बनाए।
तिमि श्री भट्टहु कृष्ण चरित गुप्तहु बहु गाए॥
कल्यानदेव हित कमल दृग नरबाहन आनन्दघन।
हित रामराय भगवान बलि हठी अली जगनाथ जन॥175॥

श्री ललितकिशोरी भाव सों नित नव गायो कृष्ण जस।
भट्ट गदाधर मिश्र गदाधर गंग गुआला।
कृष्ण जिवन हरि लछीराम पद रचत रसाला॥
जन हरिया धनश्याम गोबिंदा प्रभु, कल्याना।
बिचित्र बिहारी प्रेम सखी हरि सुबिस बखाना॥
रस रसिकबिहारी गिरिधरन प्रभु मुकुंद माधव सरस।
श्री ललितकिशोरी भाव सों नित नव गायो कृष्ण जस॥176॥

श्री बल्लभ आचारज अनुज रामकृष्ण कवि मुकुटमनि।
बसत अजुध्या नगर कृष्ण सों नेह बढ़ावत।
कृष्ण कुतूहल कहि गुपाल लीला नित गावत॥
दोऊ कुल की वृत्ति तिनूका सी तजि दीनी।
ब्याह कियो नहिं जानि दुखद हरि पद मद भीनी॥
करि वाद पन्थ थापन कियो ग्रन्थ रेच नव तीन गनि।
श्री बल्लभ आचारज अनुज रामकृष्ण कवि मुकुटमनि॥177॥

हरि प्रेम माल रस जाल के नागरिदास सुमेर भे।
वल्लभ पथहि दृढ़ाइ कृष्णगढ़ राजहि छोड़यौ।
धन जन मान कुटुम्बहि बाधक लखि मुख मोड़यौ॥
केवल अनुभव सिद्ध गुप्त रस चरित बखाने।
हिय संजोग उच्छलित और सपनेहुं नहिं जाने॥
करि कुटी रमन रेती बसत संपद भक्ति कुबेर भे।
हरि प्रेम माल रस जाल के नागरिदास सुमेर भे॥178॥

हिय गुप्त बियोगहि अनुभवत बड़े नागरीदास है।
बार बधू ढिग बसत सबै कछु पीयो खायो।
पै छनहूं हिय सों नहिं सो अनुभव बिसरायो॥
सुनतिह बिट्ठल नाम भक्त मुख श्रवन मंझारी।
प्रान तज्यो कहि अहो तिनहिं सुधि अजहुं हमारी॥
दरसन ही दै हरिभक्त अपराध कुष्ट जन दुख दहे।
हिय गुप्त बियोगहि अनुभवत बड़े नागरीदास है॥179॥

श्री बृन्दाबन के सूर ससि उभय नागरीदास जन।
निज गुरु हित हरिबंस कृष्ण चैतन्य चरन रत।
हरि सेवा में सुदृढ़ काम, क्रोधादि दोषगत॥
अद्भुत पद बहु किए दीन जन दै रस पोषे।
प्रभु पद रति बिस्तारि भक्तजन मन सन्तोषे॥
दृढ़ सखी भाव जिय में बसत सपनेहुं नहिं कहुं और मन।
श्री बृन्दाबन के सूर ससि उभय नागरीदास जन॥180॥

इन मुसलमान हरि जनन पै कोटिन हिन्दुन वारियै।
अलीखान पाठान सुता यह ब्रज रखवारे।
सेख नबी रसखान मीर अहमद हरि प्यारे॥
निरमलदास कबीर ताजखां बेगम बारी।
तानसेन कृष्णदास बिजापुर नृपति दुलारी॥
पिरजादी बीबी रास्ती पद रज नित सिर धारियै।
इन मुसलमान हरि जनन पै कोटिन हिन्दुन वारियै॥181॥

बाबा नानक हरि नाम दै पंचनदहि उद्धार किये।
बार बार निज सौंज साधुजन लखत लुटाई।
बेदी बंस प्रसंस प्रगटि रस रीति दृढ़ाई॥
गुप्त भाव हरि प्रियतम को निज निज हिए पुरायो।
गाइ गाइ प्रभु सुजस जगत अघ दूरि बहायो॥
जग ऊंच नीच जन करि कृपा एक भाव अपनाइ लिये।
बाबा नानक हरि नाम दै पंचनदहि उद्धार किये॥182॥

कबि करनपूर हरि गुरु चरित करनपूर सबको कियो।
सेन बंस श्री शिवानन्द सुत बंग उजागर।
सुर बानी मैं निपुन सकल रस के मनु सागर॥
अति छोटे तन गुरु महिमा करि छन्द बखानी।
जननि गोद सों किलकि हंसे निज गुरु पहिचानी॥
परमानन्द सों चैतन्य ससि नाम पलटि दूजो दियो।
कबि करनपूर हरि गुरु चरित करनपूर सबको कियो॥183॥

बनमाली के माली भए नाभा जी गुन गन गथित।
नाम नरायनदास बिदित हनुमत कुल जायो।
अग्र कील्ह गुरु कृपा नयन खोयोहू पायो॥
गुरु आयसु धरि सीस भक्त कीरति जिन गाई।
भक्तमाल रस जाल प्रेम सों गुथि बनाई॥
नित ही नव रूप सुबास सम सुमन सन्त करनी कथित।
बनमाली के माली भए नाभा जी गुन गन गथित॥184॥

ये भक्तमाल रस जाल के टीकाकार उदार-मति।
कृष्णदास बंगाल कृष्ण पद पदुम रत।
प्रियादास सुखदास प्रिया जुग चरन कुमुद नत॥
ललित लाल जी दास एक औरहु कोउ लाला।
लाल गुमानी तुलसिराम पुनि अग्गरवाला॥
परताप सिंह सिधुआपती भूपति जेहि हरि चरन रति।
ये भक्तमाल रस जाल के टीकाकार उदार मति॥185॥

लाला बाबू बंगाल के बृन्दाबन निवसत रहे।
छोड़ि सकल धन धाम बास ब्रज को जिन लीनो।
मांगि मांगि मधुकरी उदर पूरन नित कीनो॥
हरि मन्दिर अति रुचिर बहुत धन दै बनवायो।
साधु सन्त के हेत अन्न को सत्र चलायो॥
जिनकी मृत देहहु सब लखत ब्रजरज लोटन फल लहे।
लाला बाबू बंगाल के बृन्दाबन निवसत रहे॥186॥

कुल अग्रवाल पावन करन कुन्दनलाल प्रगट भए।
प्रथम लखनऊ बसि श्री षन सों नेह बढ़ायो।
तहां श्री युगल सरूप थापि मन्दिर बनवायो॥
द्वापर को सुखरास कलियुग में कीनी।
सोइ भजन आनन्द भाव सहचरि रंग भीनी॥
लाखन पद ललित किशोरिका नाम प्रगटि बिरचे नए।
कुल अग्रवाल पावन करन कुन्दनलाल प्रगट भए॥187॥

गिरिधरनदास कवि कुल कमल वैश्य बंश भूषन प्रगट।
रामायन भागवत गरग संहिता कथामृत।
भाषा करि करि रचे बहुत हरि चरित सुभाषित॥
दान मान करि साधु भक्त मन मोद बढ़ायो।
सब कुल देवन मेटि एक हरि पन्थ दृढ़ायो॥
लक्षावधि गन्थन निरमए श्री वल्लभ विश्वास अट।
गिरिधरनदास कवि कुल कमल वैश्य बंश भूषन प्रगट॥188॥

यह चार भक्त पंजाब में चार बेद पावन भए।
श्री रामानुज बृद्ध हरिचरन बिनु सब त्यागी।
भाई सिंह दयाल भजन मैं अति अनुरागी॥
कविवर दास अमीर कृष्ण पद मैं मति पागी।
मयाराम रसरास ललित प्रेमी बैरागी॥
श्री हरि के प्रेम प्रचार-हित जिन उपदेस बहुत दए।
यह चार भक्त पंजाब में चार बेद पावन भए॥189॥

श्री भक्त रत्नहरिदास जू पावन अमृतसर कियो।
क्षत्रिय बंश गुलाबसिंह सुत मत रामानुज।
रामकुमारी गर्भ रत्न त्यागी मंडल धुज॥
सुबसु बेद बसु चन्द आठ कातिक प्रगटाए।
श्री हरि महिमा ग्रन्थ ललित बत्तीस[1] बनाए॥
रणजीत सिंह नृप बहु कह्यौ तदपि नहिं दरसन दियो।
श्री भक्त रत्नहरिदास जू पावन अमृतसर कियो॥190॥

---

1. श्रीरघुनाथ के परम भक्त अति रसिक विद्वज्ज मान्य महानुभावजी रत्नहरिदासजी ने 32 ग्रन्थ नवीन बनाए हैं। तिन ग्रन्थों में प्रति पद जमक अनुप्रासादि अलंकार भरे हैं और वर्णमैत्री की तो प्रतिज्ञा है कि एक पद वर्णमैत्री बिना नहीं होगा तथा उनके पढ़ने से अत्यानन्द प्रगट होता है कि कथन में नहीं आता। जो पुरुष सुनते हैं, वही मोहित हो जाते हैं–
1. रामरहस्य–चौपाई दोहादि छन्दों में बाल्यलीला रघुनाथजी की श्लोक 5000।
2. प्रश्नोत्तरी–दोहा 40 शुक प्रोक्तप्रष्णोत्तरी की भाषा है।
3. राम ललाम–ललित पद छन्दों में रामायण है। श्लोक 6000 राम राम कलेवा ग्रन्थवत।
4. सार संगीत–उक्त छन्दों में श्लोक 6000 भागवत की कथा।
5. नानक–चन्द्र-चन्द्रिका–चौपाई दोहादि छन्दों में श्रीनानक शाह का जीवन चरित्र वर्णन।
6. दासरथी दोहावली–दोहा 1100 रामायण है अति चमत्कार युत।
7. जमकदमक दोहावली–दोहा 125 प्रति दोहा में 4 जमक हैं। →

त्रेता में जो लछिमन करी सो इन कलियुग माहिं किय।
अग्रज कुन्दनलाल सदा दैवत सम मान्यौ।
परम गुप्त हरि बिरह अमृत सों हियरो सान्यौ॥
अन्तरंग सखि भाव कबहु काहू न लखायो।
करम जाल विध्वंसि प्रेम पथ सुदृढ़ चलायो॥
श्रीकुन्दनलाल उदार मनि बन्धु भगति अति धारि हिय।
त्रेता में जो लछिमन करी सो इन कलियुग माहिं किय॥191॥

नित श्याम सखी सम नेह नव श्याम सखा हरि सुजस कवि।
नित्य पांच पद बिरचि कृष्ण अरचन तब ठानत।
गान तान बंधान बांधि हरि सुजस बखानत॥
देस देस प्रति धूमि घूमि नर पावन कीनो।
निज नयनन के प्रेम-बारि हियरो नित भीनो॥
घर त्यागि फिरत इत उत भ्रमत भक्त बनज बन प्रगटरबि।
नित श्याम सखी समनेह नव श्याम सखा हरि सुजसकवि॥192॥

दक्षिण के ये सब भक्तवर सन्त मामलेदार सह।
तुकाराम चोखा महार साबन्ता माली।
नामदेव गोरा कुम्हार पंढरी सुचाली॥
रामदास पुनि एकनाथ मायूर कन्हाई।
कृष्णा साबू और कृष्ण अर्पन रत बाई॥
दामाजी दत्त बधूत ज्ञानेश्वर अमृतराव कह।
दक्षिण के ये सब भक्तवर सन्त मामलेदार सह॥193॥

→ 8. गूढ़ार्थ दोहावली–दोहा 100 फुटकर हैं।
9. एकादशस्कन्ध-भागवत का चौपाई दोहा में।
10. कोशलेश कवितावली–कवित्त 108 रामायण क्रम से।
11. गुरु कीरति कवितावली–108 नानक शाह का चरित्र है।
12. कुसुमक्यारी–कवित्त 36, दशमस्कन्ध का समास से।
13. दशमस्कन्ध कवितावली–कवित्त 167 अति बिचित्र हैं।
14. महिम्न कवितावली–कवित्त 27।
15. नानक नावक–कवित्त 9 नानक शाह की स्तुति।
16. रास पंचाध्यायी–कवित्त 60।
17. व्रजयात्रा–कवित्त 150 व्रज के यात्रा का वर्णन।
18. कवित्त कादम्बिनी–भागवत क्रम से कवित्त 150।
19. रघूत्तसहस्र नाम–श्लोक 25 वाल्मीकि रामायण की कथा क्रम से।
20. पदरत्नावली–विष्णु पदों में रामायण। इसी प्रकार और भी उत्तम ग्रन्थ हैं।

नारायन शालग्राम हरिभक्त प्रगट यहि काल के।
गट्टूजी महराज काठजिभ कृष्णदास धरि।
तुलाराम रघुनाथदास रघुनाथसिंह हरि ॥
युगुलानन्य सुप्रियादास राधिकादास कहि।
हरिबिलास नवनीत गोप जै श्रीकृष्ण लहि ॥
मथुरा ससि हरख यजीत हरि रामगुलाम गुपाल के।
नारायन शालग्राम हरिभक्त प्रगट यहि काल के ॥194॥

द्विज ब्रह्मदत्त सह प्रगट एहि समय भक्त हरि के भए।
रामसखा हरिहरप्रसाद लक्ष्मीनारायन।
अवधदास चौपाई उमादत जन रामायन ॥
रामचरन सुक लोटा गट्टू रामप्रसादा।
सेवक सीताराम पौहरी गल्लू दादा ॥
बलि रामनिरंजन जुगल जुगराम परम हंसादि ये।
द्विज ब्रह्मदत्त सह प्रगट एहि समय भक्त हरि के भए ॥195॥

ये चार भक्त एहिकाल के औरहु हरि पद पंकज रन।
राम नाम रत रामदास हापड़ के बासी।
त्यागि सम्पदा भए सुनत सप्ताह उदासी ॥
जागो भट्ट प्रसिद्ध भजन प्रिय सेवत कासी।
राम नाम रत माजी नागर बंस प्रकासी ॥
श्रीहरिभाऊ हरिभावरत शूलटंक सिव ढिग बसत।
ये चार भक्त एहिकाल के औरहु हरि पद पंकज रन ॥196॥

उनइस सै तैंतीस बर संवत भादों मास।
पुनो सुभ ससि दिन कियो भक्त चरित्र प्रकास ॥
जे या संवत लौं भए जिनको सुन्यौ चरित्र।
ते राखे या ग्रन्थ में हरि जन परम पवित्र ॥
प्राननाथ आरति हरन सुमिरि पिया नन्द नन्द।
भक्तमाल उत्तर अरध लिखी दास हरीचन्द ॥
जो जग नर ह्वै अवतर्यौ प्रेम प्रगट जिन कीन।
तिनहीं उत्तर अरध यह भक्तगाल रचि दीन ॥
जय वल्लभ बिट्ठल जयतिजै जै पिय नन्दलाल।
जिन बिरची यह प्रेम गुन गुथी भक्ति की माल ॥

नहिं तो समरथ यह कहां हरिजन गुन सक गाय।
ताहू मैं हरिचन्द सो पामर है केहि भाय॥
जगत जाल मैं नित बंध्यो पर्यो नारि के फन्द।
मिथ्या अभिमानी पतित झूठो कवि हरिचन्द॥
धोबी बच सों सिय तजन ब्रज तजि मथुरा गौन।
यह द्वै संका जा हिए करत सदा ही भौन॥
दुखी जगत गति नरक कहं देखि क्रूर अन्याय।
हरि दयालुता मैं उठत संका जा जिय आय॥
ऐसे संकित जीअ सों हरि हरि भक्त चरित्र।
कबहुं गायो जाइ नहिं यह बिनु संक पवित्र॥
हरि चरित्र हरि ही कह्यौ हरिहि सुनत चितलाय।
हरिहि बड़ाई करत हरि ही समुझत मन भाय॥
हम तो श्री वल्लभ-कृपा इतनो जान्यौ सार।
सत्य एक नन्दनन्द है झूठो सब संसार॥
तासों सब सों बिनय करि कहत पुकार पुकार।
कान खोलि सबही सुनौ जौ चाहौ निस्तार॥
मोरौ मुख घर ओर सों तोरौ भव के जाल।
छोरौ जग साधन सबै भजौ एक नन्दलाल॥197॥

हरिश्चन्द्रो माली हरिपदगतानां सुमनसां
सदाऽम्लानां भक्ति प्रकटतर गंधां च सुगुणां।
अगुंफत्सन्मालां कुरूत हृदयस्थां रस पदा।
यतोन्येषां स्वयं प्रणय सुखदात्रीयमतुला।

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका के सन 1876-77 ई. के अंकों में प्रकाशित]

जैन कुतूहल

अर्हन्नित्यपि जैन शासन रताः

सन 1873 ई.

समर्पण

प्यारे!

तुम तो मेरा मत जानते ही हो, इस पचड़े से तुम्हें क्या! यह देखो यह नया तमाशा जैन कुतूहल नाम का तुम्हें दिखाता हूं। तुम्हें मेरी सौगन्द, वाह वाह अवश्य करना।

केवल तुम्हारा
हरिश्चन्द्र

जैन कुतूहल

पियारे दूजो को अरहन्त?
पूजा जोग मानिकै जग मैं जाको पूजैं सन्त ॥
अपुनी अपुनी रुचि सब गावत पावत कोउ नहिं अन्त।
'हरीचन्द' परिनाम तुही है तासों नाम अनन्त ॥1॥

जय जय जयति ऋषभ भगवान।
जगत ऋषभ बुध ऋषभ धरम के ऋषभ पुरान प्रमान ॥
प्रगटित करन धरम पथ धारत नाना बेश सुजान।
'हरीचन्द' कोउ भेद न पायो कियो यथारुचि गान ॥2॥

तुमहि तौ पार्श्वनाथ हौ प्यारे।
तलपन लागैं प्रान बगल तें छिनहु होहु जो न्यारे ॥
तुमसों और पास नहिं कोऊ मानहु करि पतियारे।
'हरीचन्द' खोजत तुमहीं को वेद पुरान पुकारे ॥3॥

अहो तुम बहु बिधि रूप धरो।
जब जब जैसो काम परै तब तैसो भेख करो ॥
कहुं ईश्वर कहुं बनत अनीश्वर नाम अनेक परो।
सत पन्थहि प्रगटावन कारन लै सरूप बिचरो ॥
जैन धरम में प्रगट कियो तुम दया धर्म सगरो।
'हरीचन्द' तुमकों बिनु पाए लरि लरि जगत मरो ॥4॥

बात कोउ मूरख की यह मानो।
हाथी मारै तौहू नाहीं जिन मन्दिर में जानो ॥
जग में तेरे बिना और है दूजो कौन ठिकानो।
जहां लखो तहं रूप तुम्हारो नैनन माहिं समानो ॥

एक प्रेम है एकहि प्रन है हमरो एकहि बानो।
'हरीचन्द' तब जग में दूजो भाव कहां प्रगटानो ॥5॥

नाहिं ईश्वरता अंटकी वेद में।
तुम तो अगम अनादि अगोचर सो कैसे मत भेद में ॥
तुम्हारी अनित अपार अहै गति जाको वार न पारो।
ताकों इति करि गाइ सकै क्यौं बपुरो वेद बिचारो ॥
बेद लिखी ही होय तुम्हारी जो पै महिमा स्वामी।
तौ परिमिति गुन भए तिहारे नेति नेति के नामी ॥
बेद मारगहि वारो प्यारे जो इक तुमकों पावै।
तौ जगस्वामी जग जीवन क्यों तुमरो नाम कहावै ॥
जो तुव पद रज अंजन नैनन लागै तौ यह सूझै।
'हरीचन्द' बिनु नाथकृपा क्यों यह अभेद गति बूझै ॥6॥

जैन को नास्तिक भाखै कौन?
परम धरम जो दया अहिंसा सोई आचरत जौन ॥
सत् कर्मन को फल नित मानत अति विवेक के भौन।
तिन के मतहि बिरुद्ध कहत जो महा मूढ़ है तौन ॥
सब पहुंचत एकहि थल चाहौ करौ जौन पथ गौन।
इन आंखिन सों तो सब ही थल सूझत गोपी रौन ॥
कौन ठाम जहं प्यारे नाहीं भूमि अनल जल पौन।
'हरीचन्द' ए मतवारे तुम रहत न क्यों गहि मौन ॥7॥

पियारे तुव गति अगम अपार।
यामैं खोलै जीह जौन सो मूरख कूर गंवार ॥
तेरे हित बकनो बिन बातहिं ठानि अनेकन रार।
यासों बढ़िकै और जगत नहिं मूरखता व्यवहार ॥
कहं मन बुद्धि बेद अरु जिह्वा कहं महिमा विस्तार।
'हरीचन्द' बिनु मौन भए नहिं और उपाय बिचार ॥8॥

कहां लौं बकिहैं बेद बिचारे।
जिनसों कछु नातो नहिं तोसों तिनके का पतियारे ॥
कागज अक्षर शब्द अर्थ हिय धारण मुख उच्चार।
इनसों बढ़ि जा मैं कछु नाहीं ते पावहि क्यों पार ॥

तेरी महिमा अमित इतै हैं गिनती की सब बात।
'हरीचन्द' बपुरे कहिहैं का यह नहिं मोहिं लखात ॥9॥

युक्ति सों हरि सों का सम्बन्ध?
बिना बात ही तरक करैं क्यौं चारहु दृग के अन्ध ॥
युक्तिन को परमान कहा है ये कबहूं बढ़ि जात।
जाकी बात फुरे सों जीतै यामें कहा लखात ॥
अगम अगोचर रूपहि मूरख युक्तिन मैं क्यों सानै।
'हरीचन्द' कोउ सुनत न मेरी करत जोई मन मानै ॥10॥

जो पै झगरेन मैं हरि होते।
तो फिर श्रम करि कै उनके मिलिबे हित क्यों सब रोते ॥
घर घर मैं नर नारिन मैं नित उठि कै झगरो होत।
वहां क्यों न हरि प्रगट होत हैं भव वारिधि के पोत ॥
पसुगन मैं पच्छिन मैं नितही कलह होत है भारी।
तौ क्यों नहिं तहं प्रगट होत हैं आसुहि गिरवरधारी ॥
झगड़हु मैं कछु पूंछ लगी है याहि होत का बार।
तनिक बात पैं झगरि मरत हैं जग के फोरि कपार ॥
रे पंडितो करत झगरो क्यों चुप ह्वै बैठा भौन।
'हरीचन्द' याही मैं मिलिहैं प्यारे राधा रौन ॥11॥

खंडन जग मैं काको कीजै।
सब मत तो अपने ही हैं इनको कहा उत्तर दीजै ॥
तासों बाहर होइ कोऊ जब तक कुछ भेद बतावै।
ह्यां तो वही सबै मत ताके तहं दूजो क्यों आवै ॥
अपुने ही पै क्रोधि बावरे अपुनो काटैं अंग।
'हरीचन्द' ऐसे मतवारेन कों कहा कीजै संग ॥12॥

पियारो पैये केवल प्रेम मैं।
नाहिं ज्ञान मैं नाहिं ध्यान मैं नाहिं करम कुल नेम मैं ॥
नहिं भारत मैं नहिं रामायन नहिं मनु मैं नहिं बेद मैं।
नहिं झगरे मैं नाहिं युक्ति मैं नाहिं मतन के भेद मैं ॥
नहिं मन्दिर मैं नहिं पूजा मैं नहिं घंटा की घोर मैं।
'हरीचन्द' वह बांध्यो डोलत एक प्रीति के डोर मैं ॥13॥

धरम सब अटक्यो याही बीच।
अपुनी आपु प्रशंसा करनी दूजे न कहनो नीच ॥
यहै बात सबने सीखी है का बैदिक का जैन।
अपनी अपनी ओर खींचनो एक लैन नहिं दैन ॥
आग्रह भरयौ सबन के तन मैं तासों तत्त्व न पावैं।
'हरीचन्द' उलटी की पुलटी अपुनी रुचि सों गावैं ॥14॥

जै जै पदमावति महारानी।
सब देविन मैं तुमरी मूरति हम कहं प्रगट लखानी।
तुमहि लच्छमी काली तारा दुरगा शिवा भवानी।
'हरीचन्द' हमकों तो नैनन दूजी कहुं न दिखानी ॥15॥

कन्त है बहुरूपिया हमारो।
ठगत फिरत है भेस बदलि जग आप रहत है न्यारो ॥
बूढ़ो ज्वान जती जोगिन को स्वांग अनेकन लावै।
कबहूं हिन्दू जैन कबहुं अरु कबहुं तुरुक बनि आवै ॥
भरमत वाके भेदन मैं सब भूले धोखा खात।
'हरीचन्द' जानत नहिं एकै ह्वै बहुरूप लखात ॥16॥

लगाओ चसमा सबै सफेद।
तब सब ज्यौं का त्यौं सूझैगो जैसो जाको भेद ॥
हरो लाल पीरो अरु नीलो जो जो रंग लगायो।
सोइ सोइ रंग सबै कछु सूझत वासों तत्त्व न पायो ॥
आग्रह छोड़ि सबै मिलि खोजहु तब वह रूप लखैहै।
'हरीचन्द' जो भेद भूलिहै सोई पिय को पैहै ॥17॥

कहो अद्वैत कहां सों आयो।
हमैं छोड़ि दूजो है को जेहिं सब थल पिया लखायो ॥
बिनु वैसो चित पाएं झूठो यह क्यौं जाल बनायो।
'हरीचन्द' बिनु परम प्रेम के यह अभेद नहिं पायो ॥18॥

यह पहिले ही समुझि लियो।
हम हिन्दू के बेटा हिन्दुहि को पय पान कियो ॥
तब तोहि तत्त्व सूझिहै कहं लौं पहिलेहि सो बनि आपु रहे।
जनम करम मैं हरिहि मानिकै खोए जे जग तत्व लहे ॥

मेरो मेरो कहि कै भूले अपुनो हठहि भुलात नहीं।
'हरीचन्द' जो यह गति है तौ फिर वह नहीं दिखाय कहीं ॥19॥

इतनोही तौ फरक रह्यौ।
हमरो हमरो कहत सबै जग हम ही हम काहू न कह्यौ॥
जौ हम हम भाखैं तो जग में और दिखाई कौन परै।
'हरीचन्द' यह भेद मिटावै तबै तत्त्व जिय में उछरै ॥20॥

चहिए इन बातन को प्रेम।
कोरो 'हम' सों काम चलै नहिं मरौ बृथा करि नेम॥
जब लौं मूरति प्राननाथ की आंखिन में न समाय।
तब लौं सब थल प्रीतम प्यारो कैसे सबहि लखाय॥
'अहं ब्रह्म' सब मूरख भाखैं ज्ञान गरूर बढ़ाय।
तनिक चोट के लगे उठत हैं रोइ रोइ करि हाय॥
तो तुम ब्रह्म चोट केहि लागी रोइ तजौ क्यों प्रान।
'हरीचन्द' हांसी नाहीं है करनो ज्ञान विधान ॥21॥

'शिवोंह' भाखत सब ही लोग।
कहं शिव कहं तुम कीट अन्न के यह कैसा संजोग॥
अरध अंग मैं पारवती हूं शिवहि न काम जगावै।
तुमको तो नारी के देखत अंग गुदगुदी आवै॥
तुमसों कहा सम्बन्ध ब्रह्म सों क्यौं छांटत हौ ज्ञान।
'हरीचन्द' मनमथ जागैगो तबै पड़ैगी जान ॥22॥

जो पै सबै ब्रह्म ही होय।
तो तुम जोरू जननी मानौ एक भाव सों दोय॥
ब्रह्म ब्रह्म कहि काज न सरनो वृथा मरौ क्यों रोय।
'हरीचन्द' इन बातन सों नहिं ब्रह्महि पैहो कोय ॥23॥

जो पै ईश्वर सांचो जान।
तौ क्यौं जग को सगरे मूरख झूठो करत बखान॥
जो करता सांचो है तो सब कारजहू है सांच।
जो झूठो है ईश्वर तौ सब जगहू जानौ कांच॥
जो हरि एक अहै तो माया यह दूजी है कौन।
'हरीचन्द' कछु भेद मिल्यौ न बक्यौ जिय आयो जौन ॥24॥

कहौ रे इक मत है मतवारो।
क्यौं इतनो पाखंड रचि रहे बिनु पाए पिय प्यारो॥
कहा समुझ्यौ, सिद्धान्त कहा कियो, का परिनाम निकारो।
कैसे मान्यौ केहि मान्यौ क्यों कौन उपाय बिचारो॥
सब कीन्हों पै सिद्ध कहा भयौ तप करि क्यौं तन जारो।
'हरीचन्द' जो परम सुलभ पथ तापै कंटक डारो॥25॥

भये सब मतवारे मतवारे।
अपुनो अपुनो मत लै लै सब झगरत ज्यौं भठिहारे॥
कोउ कछु कहत ताहि कोउ दूजो खंडत निज हठ धारे।
कह झगड़े ही मैं तेहि मान्यौ पागल भए बिचारे॥
आपुस में पहिले सब मिलि निश्चै करि होइं न न्यारे।
'हरीचन्द' आयो तो भाखैं जामैं मिलैं पियारे॥26॥

मत को नाहीं अर्थ अहै।
तो सब कोई मत मत कहिकै फिर क्यों कछू कहै॥
इन बातन में जानि परे नहिं सब कोउ कहा लहै।
'हरीचन्द' चुप ह्वै सगरो जग यामैं क्यौं न रहै॥27॥

नहिं इन झगड़न मैं कछु सार।
क्यों लरि लरिकै मरो बावरे बादन फोरि कपार॥
कोइ पायो कै तुमही पैहो सो भाखौ निरधार।
'हरीचन्द' इन सब झगड़न सों बाहर है वह यार॥28॥

अरे क्यों घर घर भटकत डोलौ।
कहा धर्‍यौ तेहि कहूं पाइहौ क्यों बिन बातन छोलौ॥
क्यों इन थोथिन पोथिन लै कै बिना बात ही बोलौ।
'हरीचन्द' चुप ह्वै घर बैठो यामैं जीभ न खोलौ॥29॥

खराबी देखहु हो भगवान की।
कहां कहां भटकत डोलत है सुधि न ताहि कछु प्रान की॥
तीन ताग मैं कहुं अंटक्यौं कहुं वेदन मैं यह डोलै।
कहुं पानी मैं कहुं उपवासन मैं कहुं स्वाहा मैं बोलै॥
कहुं पथरा बनि बनि बैठो कहुं बिना सरूप कहायो।
मन्दिर महजिद गिरजा देहरन डोलत धायो धायो॥

बादन मैं पोथिन मैं बैठ्यौ बचन विषय बनि आय।
'हरीचन्द' ऐसे को खोजैं केहि थल देहु बताय ॥30॥

लखौ हरि तीन ताग मैं लटक्यौ।
रीझि रह्यौ पानी चाटन पै करम जाल में अंटक्यौ ॥
हाथ नचावत सोर मचावत अगिन कुंड दै पटक्यौ।
'हरीचन्द' हरजाई बनिकै फिरत लखहु वह भटक्यौ ॥31॥

माया तुम सों बड़ी अहै।
तुम्हरो केवल नाम बड़ो है वेद पुरान कहै ॥
बस कछु नहिं तुम्हरो या जग मैं यह जन सांच कहै।
नाहीं तो 'हरिचन्द' तुम्हारो ह्वै क्यौं काम दहै ॥32॥

न जानै तुम कुछ हौ की नाहीं।
झूठहि बेद पुरान बकत सब भेद जान नहिं जाहीं ॥
तुम सांचे हौ कै सपना हौ कै हौ झूठ कहानी।
पतित उधारन दीन नेवाजन यह सब कैसी बानी ॥
जौ सांचे हौ तुम अरु सगरे बेदादिक सब सांचे।
'हरीचन्द' तौ हमहुं पतित ह्वै उधरन सो क्यौं बांचे ॥33॥

अहो यह अति अचरज की बात।
जानि बूझि कै विष के फल को क्यों भूल्यौ जग खात ॥
सब जानत मरनो है जग मैं झूठे सुत पितु मात।
'हरीचन्द' तो फिर क्यों नित नित याही मैं लपटात ॥34॥

कहां तोहिं खोजिए ए राम।
मन्दिर वेद पुरान जग्य जप तप मैं तो नहिं ठाम ॥
जहं जहं भाखत तहं तहं धावत मिलत न कहुं बिसराम।
'हरीचन्द' इन सों कहा बाहर अहै तिहारो धाम ॥35॥

देखैं पावत कौन सोहाग।
बहुत सोहागिन एक पियरवा सब ही को अनुराग ॥
खोजत सब पावत नहिं कोऊ धावत करि करि लाग।
'हरीचन्द' देखैं पहिले हम काको लागत भाग ॥36॥

[सन 1873 ई. में प्रकाशित]

अपवर्गदाष्टक

सन 1877 ई.

अपवर्गदाष्टक

परब्रह्म परमेश्वर परमातमा परात्पर।
पर पुरुष पदपूज्य पतित पावन पद्मावर॥
परमानन्द प्रसन्नवदन प्रभु पद्म विलोचन।
पद्मनाभ पुंडरीकाक्ष प्रनतारति मोचन॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥1॥

फनपति फनप्रति फूंकि बांसुरी नृत्य प्रकासन।
फनिपति नाथ फनीश शयन फनि बैरि कृतासन॥
फैली फिरि फिरि चन्द्रफेन सी बदन कांतिबर।
फलस्वरूप फबि रही फूल माला गल सुन्दर॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥2॥

व्रजपति बृन्दाबन बिहार रत बिरह नसावन।
विष्णु ब्रह्म बरदेश बरहवर सीस सुहावन॥
बनमाली बलरामानुज बिधु विधि बन्दित वर।
बिबुधाराधित बिधुमुख बुधनत बिदित बेनुधर॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥3॥

भवकर भवहर भवप्रिय भद्राग्रज भद्रावर।
भक्तिवश्य भगवान भक्तवत्सल भुव भरहर॥
भव्य भावनागम्य भामिनीभाव विभावित।
भाव गतामृतचन्द्र भागवतभय विद्रावित॥

पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥4॥

माधव मनमथमनमथ मधुर मुकुन्द मनोहर।
मधुमरदन मुरमथन मानिनी मान मन्दकर॥
मरकतमनि तन मोहन मंजुल नर मुरलीकर।
माथे मत्त मयूर मुकुट मालती माल गर॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥5॥

बृंदा बृंदाबनी बिदित बृखभानु दुलारी।
परा परेशा प्रिया पूजिता भव भयहारी॥
ब्रजधीश्वरी भामा मोहन प्रानपियारी।
ब्रजबिहारिनी फलदायिनि बरसाने वारी॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥6॥

विष्णुस्वामि पथ प्रथित बिल्वमंगल मतमंडन।
मिथ्यावाद विनासकरन मायामत खंडन॥
भारद्वाज सुगोत्र विप्रवर बेद बादब्रत।
भक्तपूज्य भुवि भक्ति-प्रचारक भाष्यरचन-रत॥
पुरुषोत्तम प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥7॥

ब्रजबल्लभ बल्लभ बल्लभ बल्लभ बल्लभवर।
पद्मावतिपति बालकृष्ण पितु भुविस्ववंसधर॥
मथन भागवत समुद भामिनी भाव विभावित।
प्रगट पुष्टिपथकरन प्रथित पतिपादिक पावित॥
बिट्ठल प्रभु प्यारे भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ प्रिय अपवर्गी गति देत किमि॥8॥

[सन 1877 ई. की कविवचन सुधा (ज्येष्ठ कृष्ण 6 सं. 1934) में प्रकाशित]

अपवर्गपंचक

सन 1877 ई.

अपवर्गपंचक

परम पुरुष परमेश्वर पद्मापति परमाधर।
पुरुषोत्तम प्रभु प्रनतपाल प्रिय पूज्य परात्पर॥
पदन नयन अरु पद्मनाथ पालक पांडव पति।
पूर्ण पूतना घातक प्रेमी प्रेम प्रीति गति॥
प्यारे यह मुख सों भाखिए संक तजे 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि॥1॥

फलस्वरूप फनपति फनप्रतिनिर्त्तन फलदाई।
वासुदेव बिभु बिष्णु विश्व ब्रजपति बल भाई॥
भरताग्रज भुवभार हरण भवप्रिय भव भय हर।
मनमोहन मुरमधुसूदन माबर मुरलीधर॥
माधव मुकुन्द सोई भाखिए संक तजे 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि॥2॥

प्रिया परा परमानन्दा पुरुषोत्तम प्यारी।
फलदायिनि ब्रजसुखकारिनि बृषभानु दुलारी॥
बरसानेवारी बृन्दा बृन्दाबन स्वामिनि।
भक्त जननि भयहरनि मनहरनि भोरी भामिनि॥
माधव सुखदायिनि भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि॥3॥

बल्लभ बल्लभ बल्लभ पंडित मंगल मंडन।
ब्रह्मवाद कर भाष्यकार माया मत खंडन॥
भारद्वाज सुगोत्र भट्टकुल मनि बेदोद्धर।
मिथ्या मत तमतोम दिवाकर पुष्टि प्रगट कर॥

बल्लभ बल्लभ सोइ भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै अपवर्गी गति देत किमि ॥4॥

बल्लभनन्दन भक्ति मार्ग प्रगटन बुध बोधक।
भावाश्रयरसपुष्ट बिष्णु स्वामी पथ शोधक ॥
वैष्णवजन मन हरन भक्त कुल कमल प्रकासक।
बिद्वन् मंडन करन बितंडावाद बिनासक ॥
बिट्ठल बिट्ठल सोइ भाखिए संक तजै 'हरीचन्द' जिमि।
तुम नाम पवर्गी पाइ कै प्रभु अपवर्गी गति देत किमि ॥5॥

दोहा

यह पवर्ग हरि नाम जुत पंचक बर अपवर्ग।
पढ़त सुनत 'हरीचन्द' जो लहत तौन सुख स्वर्ग ॥

[रचनाकाल—सन 1877 ई.]

पुरुषोत्तम पंचक

सन 1877 ई.

पुरुषोत्तम पंचक

सखी पुरुषोत्तम मेरे प्यारे।
प्राननाथ मेरे मन धन जीवन जसुदानन्द दुलारे॥
जानत प्रीति रीति सब भाँतिन नेह निबाहन हारे।
'हरीचन्द' इनके पद नख पैं जगत जाल सब वारे॥1॥

सखी पुरुषोत्तम मेरे नाथ।
मोर मुकुट सिर कटि पीताम्बर सुन्दर मुरली हाथ॥
गल बनमाल गोप गोपीगन गऊ बच्छ लिये साथ।
'हरीचन्द' पिय करुना सागर निज जन करन सनाथ॥2॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे स्वामी।
पतित उधारन करुना कारन तारन खग पति गामी॥
पंकज लोचन भव दव मोचन जन रोचन अभिरामी।
'हरीचन्द' सन्तन के सरबस बखसहु चरन गुलामी॥3॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे सरबस।
सरबस गुन निधि करुना बरुनालय जानत सकल प्रेम रस।
प्रीति रीति पहिचानत मानत यातें रहत भगत बस।
'हरीचन्द' मेरे प्रान जीवन धन मोह्यौ मनहि तनिक हंस॥4॥

पुरुषोत्तम बिन मोहिं नहिं कोई।
मात पिता परिवार बंधु धन मम हरि राधा दोई॥
इन बिनु जगत और जो कीनो आयसु नाहक खोई।
'हरीचन्द' इन चरन सरन रहु मन बिनु साधन होई॥5॥

[रचनाकाल–सन 1877 ई.]

वेणु गीति

सन 1877 ई.
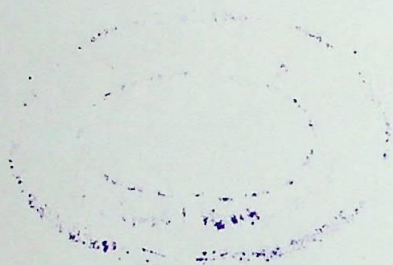
वेणु गीति

(श्री चन्द्रावली मुख चकोरी विजयते)

दोहा

जै जै श्री घनश्याम बपु जै श्री राधा बाम।
जै जै सब ब्रज सुन्दरी जै बृन्दाबन धाम॥1॥
मायावाद मतंग मद हरत गरजि हरि नाम।
जयति कोऊ सो केसरी, बृन्दाबन बन धाम॥2॥
गोपीनाथ अनाथ गति जग गुरु बिट्ठलनाथ।
जयति जुगल बल्लभ तनुज गावत श्रुति गुनगाथ॥3॥
श्री बृन्दाबन नित्य हरि गोचारन जब जाहिं।
बिरह बेलि तबही बढ़े गोपी जन उर माहिं॥4॥
तब हरि चरित अनेक बिधि गावहिं तनमय होइ।
करहिं भाव उर के प्रगट जे राखे बहु गोइ॥5॥
जो गावहिं ब्रज भक्त सब मधुरे सुर सुभ छन्द।
रसना पावन करन कों गावत सोइ 'हरिचन्द'॥6॥

राग सोरठ तिताला

सखी फल नैन धरे को एह।
लखिबो श्री ब्रजराज कुंवर को गौर सांवरी देह॥
सखन संग बन तें बनि आवत करत बेनु को नाद।
धन्य सोई या रस को जानै पान कियो है स्वाद॥
वह चितवनि अनुराग भरी सी फेरनि चारहुं ओर।
'हरीचन्द' सुमिरत ही ताके बाढ़त मैन मरोर॥1॥

सखी लखि दोउ भाइन को रूप।
गोप सखा मंडल मधि राजत मनु द्वै नट के भूप॥

नवदल मोरपच्छ कमलन की माल बनी अभिराम।
ता पै सोहत सुरंग उपरना वेष विचित्र ललाम॥
नटवर रंगभूमि में सोभित कबहुं उठत हैं गाय।
'हरीचन्द' ऐसी छबि लखि कै बार बार बलि जाय॥2॥

राग देस होरी का ताल

बंसी कौन सुकृत कियौ।
गोपिकन को भाग याने आपुही लै पियौ॥
करत अमृत पान आपुन औरहू को देत।
बचत रस सो पिवत ह्रदिनी वृक्ष लता समेत॥
प्रगट हिदिनी तटनि नृन पुन श्रवत मधु तरु डार।
होत याहि रोमांच वा को बहत आंसू धार॥
बेन पुत्र सुपुत्र लखिकै करत दोउ आनन्द।
आपु हरी न होत अचरज यह बड़ो 'हरिचन्द'॥3॥

राग मल्लार आड़ा चौताला

बढ़ी जग कीरति बृन्दाबन की।
श्री जसुदानन्दन की जापैं छाप भई चरनन की॥
बेनु धुनि सुनि जहां नाचत मत्त होइ मयूर।
सिखर पै गिरिराज के सब संग कों करि दूर॥
सबै मोहत देव नर मुनि नदी खग मृग आन।
ता समै यह मोर नाचत सुनत बंसी तान॥
पच्छ यातें धरत सिर पैं श्याम नटवर राज।
कहत इमि 'हरीचन्द' गोपी बैठि अपुन समाज॥4॥

बिहाग तिताला

धन्य ये मूढ़ हरिन की नार।
पाइ बिचित्र वेष नन्दनन्दन नीके लेहिं निहारि॥
मोहित होइ सुनहिं बंसी धुनि श्याम हरिन लै संग।
प्रनय समेत करहिं अवलोकन बाढ़त अंग अनंग॥
जानि देवता बन को मानहुं पूजहिं आदर देहिं।
'हरीचन्द' धनि धनि ये हरिनी जन्म सुफल कर लेहिं॥5॥

राग सोरठ तिताला

बिमानन देव बधू रहीं भूलि।
बनिताजन मन नैन महोत्सव कृष्ण रूप लखि फूलि ॥
सुनिकै अति बिचित्र गीतन कों बेसी की धुनि घोर।
थकित होत सब अंग अंग मैं बाढ़त मैन मरोर ॥
खुलि खुलि परत फूल की कबरी नीबी की सुधि नाहिं।
'हरीचन्द' कोउ चलन न पावत या नभ पथ के माहिं ॥6॥

देस तिताला

लखो सखि इन गौवन को हाल।
ऐसी दसा पसुन की है जहं हम तो हैं ब्रजवाल ॥
कृष्णचन्द्र के मुख सों निकसै जो बंसी की तान।
तो अमृत कों पान करहिं ये ऊंचे करि करि कान ॥
बछरा थन मुख लाइ रहे नहिं पीवत नहिं तृन खात।
थन दें पय की धार बहत है नैनन तें जल जात ॥
इक टक लखत गोविन्दचन्द कों पलक परत नहिं नैन।
'हरीचन्द' जहां पसु की यह गति अबलन कों किन चैन ॥7॥

धन्य ये मुनि बृन्दाबन बासी।
दरसन हेतु बिहंगम ह्वै रहे, मूरति मधुर उपासी ॥
नव कोमल दल पल्लव द्रुम पै मिलि बैठत हैं आई।
नैननि मूंदि त्यागि कोलाहल सुतहिं बेनु धुनि भाई ॥
प्राननाथ के मुख की बानी करहिं अमृत रस पान।
'हरीचन्द' हम कों सोउ दुर्लभ यह बिधि की गति आन ॥8॥

सोरठ तिताला

अहो सखि जसुना की गति ऐसी।
सुनत मुकुंद गीत मधु श्रवनन बिहवल ह्वै गई कैसी ॥
भंवर पड़त सोइ काम वेग सों थकित होत गति भूली।
तटनि घास अंकुरित देखियत सोइ रोमावलि फूली ॥
चुम्बन हित धावत लहरन सों कर लै कमल अनेक।
मानहुं पूजन हेत चरन कों यह इक कियो विवेक ॥
चरन कमल के सदृस जानि तेहि निसि दिन उर पैं राखै।
'हरीचन्द' जहं जल की यह गति अबलन की कहा भाखै॥9॥

बिहाग आड़ा चौताला

जहं जहं राम कृष्ण चलि जाहीं।
तहं तहं आतप जानि देव सब दौरि करहिं तन छांहीं॥
खेलहिं संग गोप के बालक चरहिं गऊ सुख पाई।
तिन के मध्य बने दोउ राजत मुरली मधुर बजाई॥
प्रेम मगन ह्वै सुरंग फूल सब गगन आइ बरसावैं।
कठिन भूमि कोमल पद लखि कै मनु पांवड़े बिछावैं॥
दूर देस सों आइ देवता रूप सुधा नित पीयैं।
'हरीचन्द' बसि एक गांव बिनु दरसन कैसे जीयैं॥10॥

कान्हरा आड़ा चौताला

अहो सखी धनि भीलन की नारि।
हरि पद पंकज को श्री कुंकुम लेहिं कुचन पै धारि॥
तन सिंगार जो ब्रज जुवतिन को प्रान पिया पद लायौ।
सो बन गवन समै ब्रज तृन के पातन मैं लपटायौ॥
हरि पद तल की आभा सों सो अरुन ह्वै रह्यो मोहै।
भक्तन को अनुराग मनहुं यह चरनन लाग्यौ सोहै॥
ताहि देखि भई बिकल काम बस कर सों लेहिं उठाई।
निज मुख मैं दोउ कुच मैं लावहिं मनसिज ताप नसाई॥
जगबन्दन नन्दनन्दन के पग चन्दन भीलिन पावैं।
'हरीचन्द' हम कों सोउ दुर्लभ एकहि जान कहावैं॥11॥

राग सारंग वा विहाग ताल चर्चरी

हरि दास बर्य्य गिरिराज धन धन्य
सखि राम घनश्याम करैं केलि जापै।
चरन के स्पर्श सों पुलकि रोमांच भयौ
सोई सब बृक्ष अरु लता तापैं॥
झरत झरना सोई प्रेम अंसुवा बहत
नवत तरु डार मनुहार करहीं।
परम कोमल भयो है यंगवीन (?) सम
जानि जापैं कृष्ण चरन धरहीं॥
करत आदर सहित सबन की पहुनई
संग के गोप गो बच्छ लेहीं।

पत्र फल मधुर मधु स्वच्छ जल तृन छांह
आदि सब वस्तु गिरिराज देहीं॥
करहिं बहु केलि हरि खेल खेलहिं संग
ग्वालगन परम आनन्द पावैं।
देखि 'हरीचन्द' छबि मुदित बिथकित चकित
प्रेम भरि कृष्ण के गुनहिं गावैं॥12॥

सोरठ तिताला

सखी यह अति अचरज की बात।
गोप सखा अरु गोधन लै जब राम कृष्ण बन जात॥
बेनु बजावत मधुरे सुर सों सुनि कै ता धुनि कान।
भूलि जात जग मैं सब की गति सुनत अपूरब तान॥
वृक्षन कौं रोमांच होत है यह अचरज अति जान।
थावर होइ जात हैं जंगम जंगम थावर मान॥
गोपधन कन्धन पै धारे फेंटा झुकि रह्यो माथ।
मत्त भृंग जुत है वन माला फूल छरी पुनि हाथ॥
बेनु बजावत गीतन गावत आवत बालक संग।
'हरीचन्द' ऐसो छबि निरखत बाढ़त अंग अनंग॥13॥

दोहा

कृष्णचन्द्र के बिरह मैं बैठि सबै ब्रजबाल।
एहि बिधि बहु बातैं करत तन सुधि बिगत बिहाल॥1॥
जब लौं प्यारे पीय को दरस होत नहिं नैन।
इक छन सौ जुग लौं कटत परत नहीं जिय चैन॥2॥
सांझ समै हरि आइ कै पुरवत सब की आस।
गावत तिनको बिमल जस 'हरीचन्द' हरिदास॥3॥

[रचनाकाल—सन 1877 ई.]

मूक प्रश्न

सन 1877 ई.

मूक प्रश्न

छप्पय

जीव एक, द्वै मृतक, वनस्पति तीजो जानो।
धातु चतुर्थी, शून्य पांच, जल छठयों मानो॥
रस सातों, आठवों पारथिन, नवों बसन कहि।
दस मुद्रा, मणि ग्यारह, बारहमो मिश्रित लहि॥
औषध तेरह, कृत्रिम चतुरदस, पन्द्रह लेखन सकल।
'हरिचन्द' जोड़ि दोहान को कहहुं प्रश्न फल अनि विमल॥[1]

दोहा

जीव, वनस्पति, शून्य, रस, वस्त्रौषधि, मनि लेख।
एक कृष्ण को ध्यान धरि, प्रश्न चित्त सों देख॥

---

1. इस छप्पय में पन्द्रह वस्तु हैं, यथा—जीव, मृतक, वनस्पति, धातु, शून्य, जल, रस, पार्थिव, वस्त्र, द्रव्य, मणि, मिश्रित, औषध, कृत्रिम और लेख। इन्हीं पन्द्रहों में सारे संसार की वस्तु आ गई। जीव में जीते हुए प्राणी मात्र। मृतक में चमड़ा, मांस, लोम, केश, पंख, मल, झाला, इत्यादि जो कुछ जीव से अलग वस्तु हो। वनस्पति में पत्ता, छाल, लकड़ी, फल, फूल, गोंद, अन्न इत्यादि। धातु में बनाई हुई धातु की चीज़ें और बिना बनी धातु। शून्य कुछ नहीं। जल में पानी से लेकर द्रव्य पदार्थ मात्र। रस में घी, गुड़, नमक और भोज्य वस्तु मात्र। पार्थिव में पत्थर, खाक, कंकड़, चूना इत्यादि। वस्त्र में डोरा, रुई, रेशम इत्यादि। द्रव्य में रुपया, पैसा, हुंडी, लोट, गहना इत्यादि। मिश्रित जिस में एक से विशेष वस्तु मिली है। औषध में दवा, सूखी गोली और मद्य इत्यादि। कृत्रिम में मनुष्य की बनाई वस्तु। लेख में कागज, पुस्तक, कलम इत्यादि। इन वस्तुओं को ध्यान में चढ़ा लेना और छप्पय याद कर लेना। किसी से कहो कि कोई चीज हाथ में वा जी में ले और फिर उस के सामने क्रम से दोहे पढ़ो।
   पूछो किस किस दोहे में वह वस्तु है जो तुमने ली हैं। जिन दोहों में बतावे उन दोहों के दूसरे तुक की गिनती के संकेतों को जोड़ डालो जो फल हो वह छप्पय के उसी अंक में देखो! जैसा किसी ने रस लिया है तो पहिला, दूसरा और तीसरा दोहा बतावैगा उस के अंक एक जुगल चतुर अर्थात् एक दो और चार गिन के सात हुए तो छप्पय में सातवीं वस्तु रस है देख लो और गणित के प्रभाव से सच्चा और सिद्ध मूक प्रश्न बतला दो।

मृतक, वनस्पति, लेख, जल, कृत्रिम, रस, मनि, द्रव्य।
जुगल चरन सिर नाइ कै, भाषु प्रश्न फल भव्य॥
धातु, शून्य, जल, लेख, रस, कृत्रिम, औषध, मिस्र।
चतुर्व्यूह माधो सुमिरि, कह फल स्वच्छ अमिस्र॥
मिस्रौषध, कृत्रिम, बसन, द्रव्य, लेख, मनि भूमि।
अष्ट सखी सह श्याम सजि, कहु फल गुरु पद चूमि॥

[यह मूक प्रश्न कविवचन सुधा 30 अप्रैल सन 1877 ई. में प्रकाशित हुआ था]

गीत गोविन्दानन्द

सन 1877-78 ई.

गीत गोविन्दानन्द

दोहा

भरित नेह नव नीर नित बरसत सुरस अथोर।
जयति अलौकिक घन कोऊ लखि नाचत मन मोर ॥1॥
रसिक राज बुध वर विदित प्रेमी प्रिय पद सेव।
राधा गुन गायक सदा मधु बच जय जयदेव ॥2॥
कहै कविवर जयदेव बच कहं मम मति अति हीन।
पै दोउ हरि गुन गामिनी एहि हित यह स्रम कीन ॥3॥
रसिक राज जयदेव की कविता को अनुवाद।
कियो सबन पै नहिं लह्यौ तिन मैं तौन संवाद ॥4॥
मेटन को निज जिय खटक उर धरि पिय नन्दनन्द।
तिनही के पर बल रच्यो यह प्रबन्ध हरिचन्द ॥5॥
जिमि बनिता के चित्र मैं नहिं कछु हास बिलास।
पै जेहिं सो प्रिय सो लहत वाहू मैं सुखरास ॥6॥
तैसहि गीत गुविन्द अति सरस निरस मम गीत।
पै जिन कहं प्रिय तौन ते करिहैं यासों प्रीत ॥7॥

मंगलाचरण

मेघन तें नभ छाय रहे, बन भूमि तमालन सों भई कारी।
सांझ समै डरिहै, घर याहि कृपा करिकै पहुंचावहु प्यारी॥
यों सुनि नन्द निदेश चले दोउ कुंजन में वृषभानु दुलारी।
सोइ कलिन्दी के कूल इकन्त की, केलि हरै भव भीति हमारी ॥8॥

दोहा

वाणी चारु चरित्र सों, चित्रित जो पिय भीति।
पद्मावति पद दास जो, जानत कविता रीति॥9॥

सोई कवि जयदेव यह, गीत गोविन्द रसाल।
रच्यो कृष्ण कल केलिमय, नव प्रबन्ध रस जाल ॥10॥
जौ हरि सुमिरन होइ मन, जौ सिंगार सों हेत।
तौ बानी जयदेव की, सुनु सब सुगुन निकेत ॥11॥

सवैया

वेद उधारन मन्दर धारन भूमि उबारन है बनचारी।
दैत विनासी बलि के छलि छय कारक छत्रिन के असुरारी॥
रावन मारन त्यौं हल धारन वेद निवारन म्लेच्छ सुदारी।
यों दस रूप विधायक कृष्णहि कोटिन्ह कोटि प्रनाम हमारी ॥12॥

राग सोरठ

जय जय राधा हरि राधा रस केलि।[1]
तरनि तनूजा तट इकन्त मैं बाहु बाहु पर मेलि ॥ध्रुव.॥
एक समै हरि नन्दराय संग रहे बाट मैं जात।
तितही श्री राधा सुख साधा आइ कढ़ी हरखात॥
हरि माया करि मेघ बुलाए छाए घेरि अकास।
सांझ समय भुव लहि तमाल तरु भई श्याम सुखरास॥
देखि नन्द भय करि श्यामा सों बोले बैन रसाल।
यह डरपत लखि कै अंधियारी बारो मेरो लाल॥
आगे हौं लै जाइ सकत नहिं भई भयानक सांझ।
राधे करिकै दया याहि तुम पहुंचाओ घर मांझ॥
इमि सुनि नन्द निदेस चले दोउ बिहरत जमुना तीर।
'हरीचन्द' सो निरखि जुगल छबि हरी दृगन हक पीर[2] ॥13॥

राग मालव

जय जय जगदीश हरे।
प्रलय भयानक जलनिधि जल धंसि प्रभु तुम वेद उधारे।
करि पतवार पुच्छ निज बिहरे मीन सरीरहि धारे ॥ध्रुव.॥
कठिन पीठ मन्दर मन्थन किन छिति भर तिल सम राजै।
गिरि घूमनि सुहरानि नींद बस कमठ रूप अति छाजै ॥जय. ॥

---

1. इस मंगलाचरण में बारहों रस हैं। इस से यथाक्रम श्रृंगार, अद्भुत वीर, रौद्र, भयानक, हास्य, वात्सल्य, करुणा, बीभत्स, सख्य, मांधुर्य और शान्त हैं। (चन्द्रिका)
2. ब्रह्मवैवर्त पुराण के श्रीकृष्ण जन्म खंड की यह कथा है। (चन्द्रिका)

कनक नयन वध रुधिर छींट मिलि कनक बरन छबि छायो।
रद आगे धर ससि कलंक मनु रूप बराह सुहायो ॥जय.॥
कर नख केतकिपत्र अग्र अलि कनककसिपु तन फारयौ।
खम्भ फारि निज जन रच्छन हित हरि नरहरि वपु धारयौ ॥जय.॥
अद्भुत बामन बनि बलि छलिकै तीन पैंड़ जग नाप्यौ।
दरसन मज्जन पान समन अघ निज नख जल थिर थाप्यौ ॥जय.॥
अभिमानी छत्रीगन बधि तिन रुधिर सींचि घर सारी।
इकइस बार निछत्र करी भुव हरि भृगुपति बपु धारी ॥जय.॥
दस दिसि दस सिरमौल दियो बलि सब सुरगन भय हारे।
सिय लछमन सह सोभित सुन्दर रामरूप हरि धारे ॥जय.॥
सुन्दर गौर सरीर नील पट ससि मैं घन लपटायो।
करसन कर हल सों जमुना जल हलधर रूप सुहायो ॥जय.॥
अति करुना करि दीन पसुन पैं निन्दे निज मुख वेदा।
कलिजुग धरम कहे हरि ह्वै कै बुद्ध रूप हर खेदा ॥जय.॥
म्लेच्छ बधन हित कठिन धार तरवार धारि कर भारी।
नासे जवन सत्ययुग थाप्यौ कलकि रूप हरि धारी ॥जय.॥
नन्द नन्दन जग वन्दन दस बपु धरि लीला बिस्तारी।
गाई कवि जयदेव सोई 'हरीचन्द' भक्त भय हारी ॥जय.॥14॥

झिंझौटी या खमाच

कमला उर धरि बाहु बिहारी।
कुंडल कनक गंड जुग धारी॥
ललित कलित बनमाल संवारी।
जय जय जय इरि देव मुरारी॥
जय जय दिनमनि तेज प्रकासन।
जय जय जय जय भव भव नासन॥
मुनि मन मानस जलस विकासन।
जय जय हरि केसव गरुड़ासन॥
जय कालिय विषधर बल गंजन।
जय जय ब्रज जुवती मन रंजन॥
जदु कुल कमल सूर दृग खंजन।
जय जय हरि केसव भव भंजन॥
जय जय सुर मधु नरक बिदारन।
पन्नगपति गामी जगतारन॥

जय जय सुर कुल सुख विस्तारन।
जय हरिदेव भक्त भय हारन॥
जय जय अमल कमल दल लोचन।
जय जय भवपति भव दव मोचन॥
त्रिभुवन गति ब्रज तिय मन रोचन।
जय जय हरि सिर वर गोरोचन॥
जय जय जनक सुता कृत भूषण।
समर विजित त्रिसिरा खर दूषण॥
जय दसकंठ वनज वन भूषण।
जय दृग छटा कमल छबि भूषण॥
जय जय अभिनव जलधर सुन्दर।
जय धृत पृष्ठ कठिन गिरि मन्दर॥
जय बिहरन गोबर्धन कन्दर।
श्रीमुख ससि रत गोप पुरन्दर॥
हम सब तुव पद पंकज दासा।
पूरहु निज भक्तन की आसा॥
तिनको तुम दुःख नित नित नासा।
जिन कहं तुव चरनन बिस्वासा॥
श्रीजयदेव रचित मन भई।
मंगल उज्जल गीति सुहाई॥
'हरीचन्द' गावत मन लाई।
ताकी हरि नित करत सहाई॥15॥

॥ इति मंगलाचरण॥

प्रथम सर्ग

(सामोद दामोदरः)

बसन्त

हरि बिहरत लखि रसमय बसन्त।
जो बिरही जन कहं अति दुरन्त॥
बृन्दाबन कुंजनि सुख समन्त।
नाचत गावत कामिनी कन्त॥
लै ललित लवंगलता सुबास।
डोलत कोमल मलयज बतास॥
अलि पिक कलरव लहि आस पास।
रह्यौ गूंजि कुंज गहवर अवास॥
उनमादित ह्वै तपि मदन ताप।
मिलि पथिक बधू ठानहिं बिलाप॥
अलि कुल कल कुसुम समूह दाप।
बन सोभित मौलसिरी कलाप॥
मृगमद सौरभ के आलबाल।
सोभित बहु नव चलदल तमाल॥
जुव हृदय बिदारन नख कराल।
फूले पलास बन लाल लाल॥
बन प्रफुलित केसर कुसुम आन।
मनु कनक छरी लिए मदन रान॥
अलि सह गुलाब लागे सुहान।
विष बुझे मैन के मनहुं बान॥
नव नीबू फूलन करि विकास।
जग निलज निरखि मनु करत हास॥

तिमि बिरही हिय छेदन हतास।
बरछी से केतकि पत्र पास॥
लपटत इव माधविका सुबास।
फूली मल्ली मिलि करि उजास॥
मोहे मुनिजन करि काम आस।
लखि तरुन सहायक रितु प्रकास॥
पुसपित लतिका नव संग पाय।
पुलकित बौराने आम आय॥
लहि सीतल जमुना लहर बाय।
पावन वृन्दाबन रह्यौ सुहाय॥
जयदेव रचित यह सरस गीत।
रितु पति विहरन हरि जस पुनीत॥
गावत जे करि 'हरिचन्द' प्रीत।
ते लहत प्रेम तजि काम भीत॥16॥

मालकोस

सखि हरि गोप बधू संग लीने।
बिलसत बिबिध बिलास हास मिलि केलि कला रसभीने॥ध्रुव.॥
स्याम सरीर खौर चन्दन की पीत वसन बनमाला।
रभनि हंसनि झलकत मनि कुंडल लोल कपोल रसाला॥
पीन उरोज भार झुकि हरि को प्रेम सहित गर लाई।
गोप वधू कोउ पंचम रागहिं ऊंचे सुर रहि गाई॥
चपल कटाच्छन जुवती जन उर काम बढ़ावनहारे।
मुग्ध वधू कोउ आइ रही मन मैं मनमोहन प्यारे॥
कोउ हरि के कपोल ढिग अपनो नवल कपोलहि लाई।
बात करन मिस चूमति पिय मुख तन पुलकावलि छाई॥
जमुना तीर निकुंज पुंज मैं मदनाकुल कोउ नारी।
खैंचत गहि हरि को पीताम्बर हंसत लरे बनवारी॥
ताल देत कंकन धुनि मिलि कल बंसी बजत सुहाई।
ता अनुसार सरस कोउ नाचति लखि हरि करत बड़ाई॥
बिहरत कोउ संग कोउ मुख चूमत काहू को गर रहे लगाई॥

काहू को सुन्दर मुख देखत चलत कोऊ संग लाई।
जो जयदेव कथित यह अद्भुत हरि वन बिहरनि गावै।
वल्लभ बल 'हरिचन्द' सदा सो मंगल फल नव पावैं ॥17॥

॥ इति सामोद दामोदरो नाम प्रथम सर्ग ॥

बिहाग

जिय तें सो छबि टरत न टारी।
रास बिलास रमत लखि मो तन हंसे जौन गिरिधारी ॥
अधर मधुर मधु पान छकी बंसी धुनि देति छकाई।
ग्रीव डुलनि चंचल कटाच्छ मिलि कुंडल हिलनि सुहाई ॥
घुंघुरारी उलकन पै प्यारी मोर चन्द्रिका राजै।
नवल सजल घन पै मनु सुन्दर इन्द्रधनुष छबि छाजै ॥
गोप बधू मुख चूम अधर अमृत रस लाल लुभाए।
बन्धुजीव निन्दक ओठन पै मन्द हंसनि मन भाए ॥
भरत भुजन मैं गोप बधूटिन प्रेम पुलक तन पूरे।
कर पद गल मनिगन आभूखन मेटत हिय तम रूरे ॥
स्याम सुभग सिर केसर रेखा घन नव ससि छबि पावै।
जुवती जूथ कठिन कुच मीचत जेहि जिय दया न आवै ॥
गंडन पर मनि मंडित कुंडल झलकत सब मन मोहै।
सुर नर मुनिगन बन्दित कटि तट लपटि पीत तट सोहै ॥
बिशद कदम्ब तरे ठाढ़े जन भव भय मेटनवारे।
काम भरी चितवन लखि मम उर काम बढ़ावनहारे ॥
श्रीजयदेव कथित यह हरि को रूप ध्यान मन भायो।
बसै सदा रसिकन के हिय 'हरिचन्द' अनूप सुहायो ॥18॥

अरी सखि मोहिं मिलाउ मुरारी।
मेटों काम कसक तन की गर लाइ रमन गिरिधारी ॥ध्रुव.॥
इकदिन गहवर कुंज गई हौं तहां छिपे रहे प्यारे।
चितवत चहूं दिसि मोहिं लखि हसे सुरति सुख धारे ॥
प्रथम समागम लाजि रही बहु बातन तब बिलमाई।
बोलत ही हंसिकै कछु मो तन नीबी सिथिल कराई ॥
कोमल सेज सुवाई मोहिं उर पर भर दै रहे सोई।
हरि आलिंगत चुम्बत ही पियो अधर लपटि तिन दोई ॥

आलस बस दृग मूंदत ही तिन तन पुलकावलि छाई।
स्वेग सिथिल तब होत मोहिं भए काम बिबस ब्रजराई॥
बोलत ही मम प्राननाथ बहु कोक कला बिसतारी।
कुतल कुसुम खसित लखि मम कुच जुग नख रेख पसारी॥
नूपुर बोलत ही पिय प्यार सुरत बितानहि तान्यौ।
रमत गिरत किंकिनि सिर गहि मुख चूमत अति सुख मान्यौ॥
रति सुख समुद मगन मोहिं लखि दृग मूदि रहे मद थाके।
विथकित सेज परी लखि पियहू काम कलोलन छाके॥
गोप बधू सखि सों इमि भाखत श्याम काम रस पूरी।
गायो सो जयदेव सुकवि 'हरिचन्द' भक्ति रति मूरी॥19॥

हाहा गई कुपित ही प्यारी।
निज अपमान मानि मन भारी॥ध्रुव.॥
मोहिं घिर्‌यौ लखि बधुन मंझारी।
रिस करि गई उदास बिचारी॥
निज अपराध जानि भय धारी।
हौंहू ताहि न सक्यौ निवारी॥
किमि ह्वैहै करिहै कहा बारी।
का कहिहै मम बिरह दुखारी॥
धन जन जीवन घर परिवारी।
ता बिनु वृथा जगत निधि सारी॥
सो मुख चन्द जोति उंजियारी।
कोप कुटिल भौहैं कजरारी॥
मनहुं कंवल पर भंवर कतारी।
बिसरति हिय तें नाहिं बिसारी॥
बन बन फिरौं ताहि अनुसारी।
बिलपौं बृथा पुकारि पुकारी॥
अब हौं हिय सौं ताहि निकारी।
रमिहौं तासों गल भुज डारी॥
मम अपराधन हिए बिचारी।
अतिहि दुखित तेहि जात निहारी॥
पै नहिं जानौं कितै सिधारी।
तासों सकत मनाइ न हारी॥

दृग सों छिनहूं होत न न्यारी।
आवत जात लखात सदारी॥
पै यह अचरज अतिहि हहा री।
धाइ लगत गर क्यौं न पियारी॥
अबकें करु अपराध छमा री।
करिहौं फेर न चूक तिहारी॥
सुन्दरि दरसन दै बलिहारी।
दहत मदन तो बिनु तन जारी॥
किन्दु बिल्व वारिधि तमहारी।
गाई कवि जयदेव संवारी॥
बिरहातुर हरि कहनि कथारी।
जो 'हरिचन्द' भक्त सुखकारी॥20॥

प्यारै तुम बिनु ब्याकुल प्यारी।
काम बान भय ध्यान धरत तुव लीजै ताहि उबारी॥
चन्दन चन्द न भावत पावत अति दुख धीर न धारै।
अहिगन गरल बगारि सरल तन मलयानिल तेहि जारै॥
अबिरल बरसत मदन बान लखि उर महं तुमहिं दुराई।
सजल कमल दल कवच बनाइ छिपावत हियहिं डराई॥
कुसुम सेज कंटक सों लागत सुख साजन दुख पावै।
ब्रत सम मुख तजि तुव रति मनवत कोउ बिधि समय बितावै॥
अबिरल नीर ढरकि नैननि तें रहत कपोलन छाई।
मनहुं राहु बिदलित ससि तें जुग अमृत धार बहि आई॥
मृगमद लै तुव चित्र बनावति ब्याकुल बैठि अकेली।
काम जानि तेहि लिखति मकर सर पुनि प्रनवत अलबेली॥
पुनि पुनि कहति अहो पिय प्यारे पाय परति अपनाओ।
तुम बिनु दहत सुधानिधि प्रीतम गर लगि मरत जिआओ॥
विलपति हंसति बिखाद करति रोअति कबहुं अकुलाई।
कबहुं ध्यान महं तुमहिं निरखि गर लागति ताप मिटाई॥
ऐसहि सो हरि बिरह जलधि महं मगन होइ रस चाहै।
सीख बचन जयदेव कथित 'हरिचन्द' गीत अवगाहै॥21॥

तुव बियोग अति ब्याकुल राधा।
मिलि हरि हरहु मदन मद बाधा॥ध्रुव॥

कृश तन प्रानहु भर सम जानै।
हार पहार सरिस उर मानै॥
कोमल चन्दन बिष सम लागै।
सुख सामा लखि संकित भागै॥
लेत स्वांस गुरु ब्याकुल भारी।
दहति तनहि मदनागि प्रजारी॥
चौंकि चौंकि चितवत चहुं ओरी।
स्रवत नीर नलिनी मनु तोरी॥
तुव बिनु सुमन परस तन जारी।
सूनी सेज न सकत निहारी॥
निज कर सों न कपोल उठावै।
नव ससि सांझ गहे मनु भावै॥
पुनि पुनि हरि तुव नाम उचारै।
बिरह मरत कोउ बिधि जिय धारै॥
कवि जयदेव कथित यह बानी।
'हरीचन्द' हरि जन सुखदानी॥22॥

राग झिंझौटी

बिरह बिथा तें ब्याकुल आली।
तुव बिनु बहुत बिकल बनमाली॥ध्रुव.॥
मलय समीर झकोरत आवत।
तन परसत अति काम जगावत॥
फूले बिबिध कुसुम तरु डारन।
बिरही जन हिय नखन बिदारन॥
चन्द चांदनी सों तन जारत।
तुव बिछुरे पिय प्रान न धारत॥
मदन बान बिधि ब्याकुल भारी।
तलपि तलपि बिलपत बनवारी॥
मधुर भंवर धुनि सहि नहिं जाई।
मूंदे रहत श्रवन हरिराई॥
जब निसि बढ़त मदन रुज भारी।
मोहत बिकल अधीन मुरारी॥
छोड़ि देह सुख गेह बिसारी।
गिरि बन वास करत गिरिधारी॥

मुरछि धरनि लोटत बिलखाई।
चौंकि रहत राधे रट लाई॥
हरि को बिरह बिलास सुहायो।
श्री जयदेव सुकबि यह गायो॥
'हरीचन्द' जेहि यह रस भावत।
तेहि हरि अनुभव प्रगट लखावत॥23॥

बिलम मत करु पिय सों मिलु प्यारी।
बैठे कुंज अकेले तुव हित मदन मंथन गिरधारी॥ध्रुव॥
धीर समीर घाट जमुना तट बन राजत बनमाली।
कठिन पीन कुच परसन चंचल कर जुग सोभा साली॥
लै तुव नाम बदत संकेतहिं मधुरी बेनु बजाई।
तुव दिसि तें जु रेनु उड़ि आवत रहत ताहि हिय लांई॥
उड़त पखेरुन गिरत पतौअन तुव आगवन बिचारी।
सेज संवारत इत उत चितवत चकित पन्थ बनवारी॥
चंचल मुखर नूपुरहि तजि मुख अंचल ओट दुराई।
तिमिर पुंज चल कुंज सखी मिलि हियरो लै न सिराई॥
रति बिपरीत पिया उर ऊपर मुक्तमाल ढिग सोही।
धन पैं चपल बलाका सह चपला सी रह मन मोही॥
किंकिन तजिकै बसन उतारि निरन्तर अन्तर त्यागी।
चढ़ु पिय कोमल किसलय सेज पिया के उर रहु लागी॥
हरि बहु नायक मानी रैनहु जात चली सब बीती।
बेगहि चलु करु पीय गनोरथ पालि प्रीति की रीती॥
श्री जयदेव कथित दूती वच हरि राधा गुन गाई।
लही प्रेम फल सब 'हरिचन्द' जुगल छबि जीअ बसाई॥24॥

तुम बिनु दुखित राधिका प्यारी।
तुव भय भइ तन सुरति बिसारी॥
अधर मधुर मधु पियत कन्हाई।
तुमहिं सबै दिसि परत दिखाई॥
मिलत चलत उठि तुम कहं धाई।
गिरि गिरि परत बिरह दुबराई॥
किसलय वलय विरचि कर धारी।
तुव रति ध्यान जिअति सुकुमारी॥

कबहुं रचति रस रास संवारी।
जानति हमहीं मदन मुरारी॥
बदति सखिन सों पुनि पुनि आली।
अजहुं न क्यों आए बनमाली॥
लखि घन सम अंधियार भुलाई।
तुव धोखे चूमति गर लाई॥
तुव बिलम्ब अति ही अकुलाई।
ब्याकुल रोअति सेज सजाई॥
श्रीजयदेव रचित जो गावै।
'हरीचन्द' हरि पद रति पावै॥25॥

(नागर नारायण नाम सप्तम सर्ग)

हा हरि अजहूं बन नहिं आए।
बैठे बाट बिलोकत बीती औधहु कित बिलमाए॥ध्रुव.॥
सखियन झूठ बोलि बहरायो, हा, अब कौन उपाई।
प्राननाथ बिनु बिफल सबै मन नव जोबन सुन्दराई॥
जाके मिलन हेत कारी निसि बन बन डोलत धाई।
मदन बान बेदना देत मोहिं सोई निठुर कन्हाई॥
घरहू छूट्यो हरिहु नहिं आए तौ अब मरनहिं नीको।
कहा लाभ बिरहागि दाहि तन रखिबो जीवन फीको॥
इत मधु मधुर जामिनी मो हिय बेदन देत प्रजारी।
उत कोउ बड़भागिनि कामिनि संग ह्वैहैं रमत मुरारी॥
कर कंचन कंकन बाजूबंद बिरहानल तपि जारैं।
विष सो विषय साज सब लागत उलटे दुखहिं प्रचारैं॥
कुसुम सरिस मम कोमल तन पैं फूल माल हू भारी।
तीछन काम बान सी बेधति बिनु प्यारे गिरिधारी॥
हम जाके हित बेत कुंज मैं बैठी त्यागि हवेली।
सो हरि भूलेहु सुमिरत नहिं मोहिं छांड़ी हाय अकेली॥
इमि बिलपति वृषभानु लली हरि बिरह बिथा अकुलाई।
श्री जयदेव सुकबि मधुरी 'हरिचन्द' कथा सोइ गाई॥26॥

हरि संग बिहरति ह्वैहै कोऊ।
बड़भागिनि जुवती गुनवारी दै गल मैं भुज दोऊ॥ध्रुव.॥
मदन समर हित उचित भेस लै कंचुकि कुच कसि बांधे।
कच बिगलित कुसुमन सों मानहुं बीर सुमन सर साधे॥

हरि गल लागत स्वेदादिक तन मदन बिकारहु जागे।
कुच कलसन पर मुक्तहार बहु हिलत सुरत रस पागे॥
मुख सरि निकट ललित अलकावलि उमरि घुमरि रहि छाई।
पिय अधरासव पान छकी तिमि झूमत तिय अलसाई॥
परसत उझकि कपोलन चंचल कुंडल जुगल सुहाए।
किंकिनि कलरव करति हिलत जब जुगल जंघ मन भाए॥
पिय तिय दिसि निरखत चितवति कछु हंसि करि नैन लजीले।
बिबिध भाव रस भरी दिखावति लहि रति रसिक रसीले॥
रोम पांनि उलहित तन बेपथु होत गरो भरि आएं।
मूंदि मूंदि दृग खोलति लै लै स्वास सुरति सुख पाएं॥
झलकत मुक्तजाल से तन पर स्रम सीकर अति नीके।
रति रन अभिरत थाकि परी गल लगिकै हिय पर पी के॥
श्री जयदेव सुकवि भाखित यह हरि विहार रस गावै।
काम बिमुख स्वै 'हरीचन्द' सो प्रेम रुचिर* फल पावै॥27॥

माधव नव रमनी संग लीने।
बंसी बट यमुना तट बिहरत रति रन जय रस भीने॥ध्रुव॥
मदन पुलक तन चूमन पिय मुख फरकत अधर लसाहीं।
मृगमद तिलक देत ता मुख मैं मन ससि मैं मृगछाहीं॥
जुवजन मनहर रतिपति मृग बन सघन सुघन सम कारे।
चिकुर निकर कर लिए संवारत गूंथि कुसुम बहु प्यारे॥
नभमंडल सम कुच जुग मैं घन मृगमद लपटि सुहावै।
नख छत ससि लखि नखत माल सी मुक्तमाल पहिरावै॥
नवल नलिन भुज कोमल करतल सुकमल दल से राजै।
मरकत कंकन तहं पहिरावत मधुपमाल सम भ्राजैं॥
सघन जघन मनु मदन हेम सिंहासन सुरुचि सोहायो।
सुरंग बसन पर तोरन सम पिय किंकिन जाल बंधायो॥
कमलालय नख मनिगन भूखित पर पल्लव हिय लाई।
निज मन हित मनु मेंड़ बनावत जावत रेख सुहाई॥
इमि बलबीर निठुर बन बिहरत संग लौ दूजी नारी।
ता हित तरु तर बैठि बिलोकत बाट बृथा हम हारी॥
यो हरि रसमय होय कहति सखियन सों ब्याकुल प्यारी।
सो कविवर जयदेव कह्यौ 'हरिचन्द' कलुख कलि हारी॥28॥

---

* पाठभेद—अनुपम

कमल लोचन पिया जाहि गर लाइहै।
सो न सजनी कबहुं बिरह दुख पाइहै॥
देखि किसलय सेज सो न दुख मानिहै।
प्रान प्रीतमहि निज निकट करि जानिहै॥
अमल कोमल कमल बदन हिय धारिहै।
तेहि न सर कुटिल कामहुं कबहुं मारिहै॥
अमृत मधु मधुर पिय बचन स्रवन पारिहै।
ताहि अति मलिन मलयानिल न जारिहै॥
थल कमल सम चरन करन हिय चाहिहै।
ताहि चन्दहु न निज किरन सर दाहिहै॥
स्याम सुन्दर सजल जलद तन लागिहै।
तासु हिय कबहुं नहिं बिरह दुख पागिहै॥
कनक सम पीत पट लपटि सुख सानिहै।
सो न गुरुजन हंसत संक जिय मानिहै॥
तरुन मनि कृष्ण सों सुरत सुख ठानिहै।
सो न सपनेहुं कबौं विरह दुख जानिहै॥
सुकवि जयदेव कृत गीत जो गाइहै।
सो न 'हरिचन्द' भव दुखन घबराइहै॥29॥

भैरव

हम सों झूठ न बोलहु माधव जाहु जू केशव जाओ।
जो जिय बसी रैन निवसे जहं ताही को गर लाओ॥ध्रुव.॥
अनियारे दृग आलस भीने पलकैं घुरि घुरि जाहीं।
जागि तिया रस पागि न प्रगटत निज अनुराग लजाहीं॥
बार बार चूमन सों रस भरि तिय जुग दृग कजरारे।
लाल रहे तुव अधर लाल पै भए अंग सब कारे॥

रति नर अभिरत स्याम सुभग तन नख छत लखत सुहायो।
मदन नील पट कनक लेखनी मनु जयपत्र लिखायो॥
पिय तुव हिय तिय पद को जावक लखहु न कैसों सो है।
मनु जिय काम लता उलही है पल्लव पसरि रह्यो है॥

तुम अति निठुर तदपि हम तुम सों तनिकहु बिलग न प्यारे।
तुव अधरन रद छद पै ताकी पिय उर पीर हमारे॥
तन जिमि कारो तिमि मनहू तुव कुटिल कपट सो कारो।
अपनी जानि औरहू हम कहं वदि मदनानल जारो॥

बन वन बधुन बधन हित डोलत निरदय बने सिकारी।
या मैं अचरज नहिं तुम प्रथमहिं नारि पूतना मारी॥
सुनि तिय बचन सरोस पिया हठि लीनी कंठ लगाई।
श्री जयदेव सुकवि 'हरिचन्द' बिलास कथा सोइ गाई॥30॥

मानी माधव पिय सों मानिनि मान न करु मम मान कही।
बहत पवन लखि हरि उठि आए तू केहि सुख घर बैठि रही॥
कुच जुग कलस ताल फल से गुरु सरस तिनहिं कित निफल करै।
बार बार सखि तेहि समुझावति किन सुन्दर हरि सों बिहरै॥
बिलपति बिकल तोहि लखि सखिगन हंसहिं तऊ नहिं लाज धरैं।
बैठे सजल नलिन दल से जन हरि लखि किन दृग पीड़ हरै॥
किन जिय खेद करति सुनु मम बच हरि सों मिलि मृदु बोलि अरी।
सुनि जयदेव सखी 'हरिचन्द' कथन निज उर दुख दूर दरी॥31॥

मान तजि मानु सुनु प्रान प्यारी।
दहत मोहिं मदन तुव बिरह जर जाल सों,
अधर मधु पान दै लै उबारी॥ध्रुव.॥

मधुर कछु बोलि मुख खोलि जासों निरखि
दसन दुति बिरहतम दूर नाऊं।
अधर मधु मधुर सुन्दर सुधा सिन्धु, मुख
ससिहि लखि दृग चकोरहि जुड़ाऊं॥

सांचही होइ रूठी जुपै कोप करि,
तौ न क्यौं नयन सर मोंहि मारै।
बांधि भुज पास सों अधर दन्तन सुदसि,
क्यों न अपराध बदलो निवारै॥

तुही मम प्रानधन भव जलधि रतन तू,
तोहि लगि जगत हौं जीव धारौं।
तनिक जौ तू कृपा कोर मो दिसि लखै,
तौ जगहि तोहि परि बारि डारौं॥

नील नलिनी सुदल सरिस तुव नयन जुग,
कोप सों कोकनद रूप धारे।
तौ न कीन जानि मोहि कृष्ण हति काम सर,
अरुन करु तरुन अनुराग भारे॥

क्यों न सोभित करति कुम्भ कुच हार सों,
हीय जासों दुगुन होइ राजै।
सघन निज जघन पैं बांधि किंकिनि कलित,
मदन नौबति सरिस सुरत बाजै॥

थल कमल हर मम हृदय प्रानकर,
सरस रतिरम्भ तुव चरन प्यारे।
कहै तो लाइ हिय मैं महावर भरौं,
हरौं जिय ताप आनन्दवारे॥
सदन सन्ताप को मदन मोहिं कदन हित,
दहत अति अगिनि तन मैं बढ़ाई॥
चरन पल्लव जुगल गरल हर सीस मम,
धारि किन तेहि तुरत दै बुझाई॥
देखि इमि चतुर हरि पगन परि तियहि,
रिझयो लियो संक तजि अंक लाई॥
सोइ पदमावति प्रान जयदेव कवि,
कही 'हरिचन्द' लीला बनाई॥32॥

उठि चलु मोहन ढिग प्यारी।
मंजुल वंजुल कुंज बिलोकत तुव मग गिरिधारी।
मनावत तो कहं जे हारे,
कियो बिनय बहु तुव पद पैं निज सीस रहे धारे॥
सुरत करि उनकी तू नारी,
मंजुल वंजुल कुंज बिलोकत तुव मग गिरिधारी॥

पहिरि पग मनि नूपुर सीरे,
पीन पयोधर सघन जघन भर चलु धीरे धीरे।
चाल सो हंसहि लजवाई,
चलु सुनु तरुनी जन मोहन मन मोहन बच धाई॥
सफल करूं श्रवनहिं मैं वारी ॥मंजुल वंजुल.॥
कुंज में सुनु कोइल बोलै,
काम नृपति के बन्दीजन से मदन बिरद खोलै।
चलत मलयानिल मदमाती,
नवपल्लव हिलि तोहिं बुलावत निकट बिरिछि पांती॥
विलम्ब न करु गज गति वारी ॥ मंजुल वंजुल.॥
देखु फरकत जोबन दोऊ,
मदन रंग उमड़ि अलिंगन चहत पियहिं सोऊ।
गवन हित सगुन मनहुं कीने,
हीर हार जलधार भरे जुग घट सनमुख लीने॥
चूक मति समयहि बलिहारी ॥ मंजुल वंजुल.॥

सखिन तोहि रति रन हित साज्यौ,
तौ किन अब लौं मदन भेरि तुव किंकिन रव बाज्यौ।
द्रवत तजि लाजन क्यों रूठी,
चलति न क्यों सखि कर गहि बैठी मानिनि ह्वै झूठी॥
बिना तुव ब्याकुल बनवारी ॥ मंजुल वंजुल.॥
कह्यौ लै मानिनि मम मानी,
सूचन रति अभिसार बजावत चलु कंकन रानी।
मिलत लखि तोहि हम सुख पावैं,
जुगल रूप जयदेव सुकबि लखि हिय महं पधरावैं॥
होइ 'हरिचन्दहु' बलिहारी ॥मंजुल वंजुल.॥33॥

माधव ढिग चल राधा प्यारी।
बिलस पिया गल मैं भुज धारी ॥ध्रुव॥
मंजु कुंज मधि सेज बिछाई।
बिहर तहां हंसि हंसि सुख पाई ॥माधव.॥
कुच कलसन पर तरलित माला।
बिहर असोक सेज पर बाला ॥माधव.॥

विविध कुसुम लै कुंजन बांधे।
विलस कोमल तन राधे ॥माधव०॥
बहत सीत मलयानिल आई।
बिहर सुरत रत हरि गुन गाई ॥माधव०॥
सघन जघन बरु सफल सुहाए।
लखु पल्लव बल्लिन लपटाए।
गूंजत मधुप मदन मदमाती।
बिहर कृष्ण संग रतिरस राती ॥माधव०॥
गूंजत मधुप मदन मदमाती।
बिहर कृष्णा संग रति रसराती ॥माधव०॥
सुनु गावत पिक काम बधाई।
चलु लै निज पिय कों हित लाई ॥माधव०॥
कवि जयदेव केलिरस गावैं।
'हरिचन्दहु' सुनि जनम सिरावैं ॥माधव०॥34॥

राधा केलि कुंज महुं जाई।
बैठे बाट बिलोकत निरखे रस उमगे हरिराई ॥ध्रुव॥
राधा ससि मुख निरखि हरखि तन रस समुद्र लहराने।
रमन मनोरथ करत मदन बस बिबिध भाव प्रगटाने ॥
स्याम सुभग हिय पर इमि सोहत सुन्दर मोतिन माला।
जमुना जल मनु सेत कमल के सोभित फेन रसाला ॥
मृगमद मोचक मेचक तन पैं पीत बसन लपटायो।
मानहुं नील कमल पै पसर्‍यौ पीत पराग सुहायो ॥
रसमय तन मैं सुन्दर बदन विलोचन जुग मतवारे।
सरद सरोवर कमलनि खेलत जुग खंजन अनियारे ॥
कमल बदन में दुहुं दिसि कुंडल रबि से सुभग लखाहीं।
हिलत अधर मुसुकात मनहुं पिय मुख चूमन ललचाहीं ॥
बारन कुसुम गुथे मनु घन महं कहुं कहुं चांदनि राजै।
नव ससि अरुन किरिन सम सिर पै कुंकुम तिलक बिराजै ॥
मनि गन भूखन भूखित सब अंग सुन्दर सुभग सरीरा।
पुलकित तन रति आतुर बैठे मोहन पिय बलबीरा ॥
श्री जयदेव कथित हरि को बपु जा जिय में छिन आवै।
सो 'हरिचन्द' धन्य जग में निज जीवन को फल पावै ॥35॥

राधे मेरी आस पुजाओ।
प्रान पिया हरि को कहनो करि मिलि पिय सों सुख पाओ ॥ध्रुव॥
नव किसलय सों सेज संवारी कोमल पद तहं धारी।
हरु पल्लव अभिमानहि अरुन चरन दरसाइ पियारी ॥
अति श्रम भयो प्रानप्यारी तोहिं चरन पलोटौं तेरे।
नूपुर धरौं उतारि सेज पर बैठु आइ ढिग मेरे ॥
बोलि मधुर कछु किन निज पिय कों ब्याकुल हियो जुड़ावै।
कहु तौ उर सों अंचल कृष्ण उतारि अधिक सुख पावै ॥
पिय गर लगन हेत फरकौहैं जुगल कलस कुच प्यारी।
पिय पुलकित हिय लाइ हरत किनि मदन ताप सुकुमारी ॥
निज विरहानल तपत देखि मोहिं क्यों न दया उर लावै।
अधर मधुर रस सुधा स्वाद दै किन मोहिं मरत जियावै ॥
तुव बिन कोकिल नाद सुनत रहे स्रवन सदा दुख पाई।
दै तिन कहं सुख भाखि मधुर कछु किंकिन कलित बजाई ॥
नाहक मान ठानि दुख दीनो अब मो दिस लखु प्यारी।
नीचे नैन न लाज भरी करु दै रति सुख बलिहारी ॥
श्री जयदेव सुकवि हरि भाखित सरस गीत जो गावै।
ता जिय में 'हरिचन्द' प्रेम बल काम बिकार न आवै ॥36॥

यह सुनि राधा पिय सों बोली।
मान छांड़ि निज प्राननाथ सों गांठ हृदय की खोली ॥ध्रुव॥

मंगल कलस सरिस सम जुग कुच मृगमद चित्र बनाओ।
चन्दन से सीतल कर हिय धरि जिय को ताप मिटाओ।
काम बान अलि कुल मद गंजन नैननि अंजन प्यारे।
तुव चूमन सों फैलि रह्यो तेहि देह संवारि दुलारे।
दृग कुरग गति मेंड़ सरिस मम स्रवन न पिय गिरधारी।
काम फांस से कुंडल प्यारे निज कर देहु संवारी।
मेरे मुख पर पीतम सुन्दर निज कर बिरचि संवारौ।
नवल कमल पर अलि कुल सरिस अलक निरुवारि बगारौ।
स्रम सीकरहि पोंछि मम सिर पिय निज कर रुचिर बनाओ।
पूरन ससि पै मृगछाया सों मृगमद तिलक लगाओ।
मदन चौंर धुज से मम सुन्दर केस पास निरुवारौ।
केकि पच्छ से बारन गूथहु सुन्दर कुसुम संवारौ।

सरस सघन मम जघनन पर फल किंकिनि कलित सजाओ।
सुन्दर बसन अभूषन रचि रचि मम अंगनि पहिनाओ।
इमि राधा बच सुनत कृष्णगर लगि बिहरे सुख पायो।
सो जयदेव सुकवि 'हरिचन्द' बिहार कुतूहल गायो॥37॥

दोहा

अष्ट पद चौबीस इमि गाई कबि जयदेव।
भाषा करि हरिचन्द सोइ कही प्रेमरस भेव॥1॥
गुप्त मन्त्र सम पद सबै प्रगटे भाषा माहिं।
यह अपराध महा कियो यामें संसय नाहिं॥2॥
छमिहैं निज जन जानि सो जुगल दास तकसीर।
हरिहैं अपनो समुझि जिय कठिन मोह भव पीर॥3॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका के नवम्बर सन 1877 ई. खं. 5, 6 तथा अक्टूबर सन 1878 ई. तक के अंकों में प्रकाशित]

॥ इति ॥

भीष्मस्तवराज

सन 1879 ई.

भीष्मस्तवराज

मेरी मति कृष्ण चरन मैं होय।
जग के तृष्णा जाल छांड़ि कै सोक मोह भ्रम खोय॥
जादवपति भगवान लेत जो बिहरन हित अवतार।
परमानन्द रूप मायामय पावत कोउ न पार॥
यह जग होत जासु इच्छा तें जो यहि देत बिबेक।
तिनही श्री हरिचरन कमल तें मम चित टरै न नेक॥1॥

मो मन हरि सरूप मैं रहै।
विजय सखा पद कमल छोड़ि मति छनहुं न इत उत बहै॥
त्रिभुवन मोहन सुन्दर स्याम तमाल सरस तन सोहै।
कुटिल अलक अलि मुख सरोज पर निरखत ही मन मोहै॥
अरुन किरिन सम सुन्दर पीत बसन जुग तन पर धारे।
एकहु छिन इन नैनन तें मम कबहू होहु न न्यारे॥2॥

बसै जिय कृष्ण रूप में मेरो।
भारत जुद्ध समय जो सुन्दर अरजुन रथ पर हेरो॥
सुन्दर अलकावलि मैं रन की धूरि रही लपटाई।
सोहत सीकर बिन्दु बदन पर सो छबि लगति सुहाई॥
मम चोखे बानन सों कहुं कहुं खंडित कवचहि धारे।
अनुदिन बसो नयन जुग मेरे श्री बसुदेव दुलारे॥3॥

जिय तें सो छबि बिसरत नाहीं।
लखी जौन भारत अरम्भ मैं अरजुन के रथ माहीं॥
सखा बचन सुनि दोउ दल के मधि रथ लै ठाढ़ो कीनो।
पर जोधन की आयु तेज बल देखत जिन हरि लीनो॥4॥

तिनकी चरन भक्ति मोहिं होई।
जिन अरजुनहिं मोह मैं लखि कै तासु अविद्या खोई॥
सब बेदन को सार ज्ञानमय जिन हरि गीता गाई।
निज जन बध संकाहि मोह मति पारथ की बिसराई॥5॥

मेरी गति होउ सोइ बनवारी।
जिन मेरी परतिज्ञा राखत निज परतिज्ञा टारी॥
अरजुन कहं लखि बिकल बान सों कूदि सुरथ सों धावत।
कोप भरे मेरी दिसि आवत कर तें चक्र फिरावत॥
जद्यपि पग गहि बहु भांतिन सों पारथ रोक्यौ चाहै।
पै न रुकत जिमि महामत्त गज लखि मृगराज उछाहै॥
गिनत न मम सर बरसनि को कछु बध हित धावत आवैं।
टूटि रह्यौ तन कवच मनोहर सोभा अधिक बढ़ावैं॥
पीताम्बर फहरात बात बस सो छबि लागत प्यारी।
यहै रूप तें सदा बसौ मन मेरे श्री गिरधारी॥6॥

मेरे जिय पारथ सारथि बसिए।
इक कर मैं लगाम दूजे मैं चाबुक लीने बसिए॥
जासु रूप लखि मरे बीर जे तिनहूं हरि पद पायो।
मरन समय मम जिय मैं निबसौ सोई रूप सुहायो॥7॥

हरि मम आंखिन आगे डोलौ।
छिनहूं हिय तें टरहु न माधव सदा श्रवन ढिग बोलौ॥
जो सरूप लखि कै ब्रज बनिता देह गहे सब त्यागी।
होइ बिलग हरि रूप उपासी हरि पद मैं अनुरागी॥
रास बिलास हास रस बिहरत प्रेम मगन मन फूलीं।
तनमय भई तनिक सुधि नाहीं देह दसा सब भूलीं॥
भाव बिबस भगवान भक्त प्रिय सबही बिधि सुखदाई।
सोई बसो सदा इन नैनन सुन्दर कुंअर कन्हाई॥8॥

अहो मम भाग्य कह्यौ नहिं जाई।
जो देखत त्रिभुवनपति माधव नैनन तें ब्रजराई॥
धरम सभा महं जेहि लखि रिषि मुनि अपनों भाग सराहैं।
सब सों पूजित चरन कमल जो तासु चरन हम चाहैं॥9॥

तिन हरि मो कहं अब अपनायो।
निज नख चंद्र प्रकास मोह तम मेरो सबहि नसायो ॥
सबके हिय मैं अंतर जामी ह्वै जो ईस समायो।
सोई अब मम उर अन्तर मैं निज प्रकास प्रगटायो ॥
हर्यौ मोह तम अभय दान दे निज सरूप दरसायो।
कहि 'हरीचन्द' भीष्म हरि पद बल परम अमृत फल पायो ॥10॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका 15 सितम्बर, सन 1879 ई. के अंक में प्रकाशित]

मान लीला फूल बुझौअल

सन 1879 ई.

मान लीला फूल बुझौअल

अमल कमल कर पद बदन जमल कमल से नैन।
क्यौं न करत कमला बिमल कमल नाभ संग सैन॥1॥
निसि बीती मनवत सखी तू न नेक मुसकात।
चटकत कली गुलाब की होन चहत परभात॥2॥
वह अलबेला कुंज मैं पस्यौ अकेला हाय।
उठि चलि बहु बेला गई करु दृग मेला धाय॥3॥
अरी माधवी कुंज में माधव अति बेहाल।
मधु रितु माधव मास मैं तो बिनु व्याकुल बाल॥4॥
पहिरि नवल चम्पाकली चम्पकली से गात।
रस लोभी अनुपम भंवर हरि ढिग क्यौं नहिं जात॥5॥
रूप रंग ऐसो मिल्यौ तापैं ऐसी मान।
बिनु सुगन्ध के फूल तू भई कनैर समान॥6॥
तुव कुच परसन लालसा गेंदा लै कर श्याम।
खरे उछारत कुंज मैं क्यों न चलत तू बाम॥7॥
कह पायन मिंहदी लगी जासों चल्यौ न जाय।
धाय कुंज मैं पियहि क्यौं लेत न कंठ लगाय॥8॥
दाऊ दीठि बचाय हरि गए कुंज के भौन।
बजवत दाऊदी उतै क्यौं न करत तू गौन॥9॥
वृथा बकुल पन कर रही उत व्याकुल अति लाल।
चलि न मौलि बारन गुथे मौलिसिरी की माल॥10॥
खबर न तोहि संकेत की कही केतकी बार।
चलि पथ कुंज निकेत की कित की ठानत आर॥11॥
छिरकि केवरा सों पथहि चलन पांवरे डारि।
कब सों मोहन बैठि कै मारग रहे निहारि॥12॥

करत न हरगिस लाड़िले वा बिन सेज न सैन।
नरगिस से कब के खुले तुअ मग जोहत नैन॥13॥
विमल चांदनी भुव बिछी नभ चांदनी प्रकास।
तऊ अंधेरो तुब बिना प्रिय अति रहत उदास॥14॥
बैठि रही क्यों कुन्द ह्वै चलु मुकुन्द के पास।
कुन्द दमन दरसाइ क्यौं करत मन्द नहिं हास॥15॥
अरी माधुरी कुंज मैं बचन माधुरी भाखि।
मधुर पिया के प्रान कों क्यौं न लेत तू राखि॥16॥
कह्यौ न मानत मो तिया पहिरि मोतिया हार।
लाउ गरे मोहन पिया सुन्दर नन्द कुमार॥17॥
सारी तन सजि बैजनी पग पैजनी उतारि।
मिलु न बैजनी माल सों सजनी रजनी चारि॥18॥
मदन बान पिय उर हनत तो बिनु अति अकुलात।
तू निरमोहिन इत परी झूठे ही अनखात॥19॥
मानिनि वारी वेग चलि प्यारी मान निवारि।
सहि न सकत अब वेदना तो बिनु मदन मुरारि॥20॥
रमन रेवती के अनुज तो बिनु अति अकुलात।
पिय पद क्यौं नहिं सेवती करत मान बिनु बात॥21॥
जदपि सबै सामां जुही कल न लहत तउ लाल।
सोनजुही सौं भावती चलि उठि याही काल॥22॥
अति अनारि हठ नहिं करिय सीख सखी की मानि।
पिय सों रोस न कीजिये यामैं कोउ दिन हानि॥23॥
गुल्लाला फूले लखौ आयो बर रितु राज।
कहो भला ऐसी समै कहा मान सों काज॥24॥
तुव हित कब के चक्रधर ठाढ़े पकरि कपाट।
दै निसु दरसन लाड़िली जोहत हरि तुव बाट॥25॥
हरि सिंगार सब छांड़ि कै तुव बिनु होय मलीन।
परे भूमि पै देखु किन बिरह बिथा तन छीन॥26॥
फूली बन नव मालती माल तीय गर डारि।
अब उठि चलु न बिलम्ब करु लै उर लाइ मुरारि॥27॥
करन फूल दोउ करन सजि हरन सकल उर सूल।
चलु न चरन आभरन तजि भरन मदन सुख मूल॥28॥
रायबेलि महकति सखी अति सुगन्ध रस झेलि।
क्यौं न रमत तू श्याम सों कंठ भुजा दोउ मेलि॥29॥

ठाढ़े पीअ कदम्ब तर तजिकै जुवति कदम्ब।
चलु बिलम्ब तजि राधिके दै निज भुज अवलम्ब॥30॥
पहिरि मल्लिका माल उर प्रेम बल्लिका बाल।
लपटी कृष्ण तमाल सों लखि 'हरीचन्द' निहाल॥31॥

1

मल्लिका (चमेली)	कमल	रायबेलि	मालती
सुदरसन	अनार	सेवती	मदन बान
मोतिया	कुन्द	नरगिस	केतकी
गुलदाऊदी	गेंदा	चम्पा	बेला

चन्द्र

2

मल्लिका (चमेली)	गुलाब	कदम्ब	मालती
हरसिंगार	अनार	जुही	मदनबान
बैजनी	कुन्द	चांदनी	केतकी
मौलसिरी	गेंदा	कनैर	बेला

नेत्र

4

मल्लिका (चमेली)	कदम्ब	रायबेलि	करनफूल
अनार	माधवी	जूही	सेवती
निवारी	कुन्द	चांदनी	नरगिस
केवड़ा	गेंदा	कनैर	चम्पा

वेद

8

मल्लिका (चमेली)	कदम्ब	रायबेलि	करनफूल
मिंहदी	मालती	हरसिंगार	सुदरसन
गुल्लाला	कुन्द	चांदनी	नरगिस
केवड़ा	केतकी	मौलसिरी	गुलदाउदी

वसु

16

मल्लिका (चमेली)	कदम्ब	रायबेलि	करनफूल
मालती	हरसिंगार	सुदरसन	गुल्लाला
अनार	जूही	सेवती	निवारी
मदनबान	बैजनी	मोतिया	माधुरी

शृंगार

प्रश्न करने की विधि

यह एक बड़ा आश्चर्य प्रश्न का खेल है। पहले मान लीला के जिन दोहों में जिन दोहों में जिस फूल का नाम निकलता हो उस को समझ लो और उन दोहों के अंक भी याद कर रक्खो। प्रश्न करने वाले से कहो कि इन्हीं 31 फूलों में एक फूल का नाम अपने जी में लो फिर इन पांचों ताशों में से एक एक ताश उसके सामने रख कर पूछो इसमें वह फूल है, जिसमैं वह बतावै उन ताशों को अलग करके उनके ऊपर लिखी गिनती जोड़ लो कि कितने अंक आते हैं। मान लीला के उसी अंक के दोहे में जिस फूल का नाम हो वही उसने जी में लिया है। जैसा चम्पा अगर किसी ने लिया है तो वह 4 और 1 एक अंक वाला ताश बतावेगा तो उस के जोड़ने से 5 अंक हुए तो मान लीला में पांचवें दोहे में चम्पा का वर्णन है इस से चम्पा उस ने लिया है समझो और जिस में सब के समझ में न आवै इस के वास्ते स्पष्ट अंक के बदले छिपे अंक रक्खे हैं यथा—चन्द्र 1 नेत्र 2 वेद वसु 8 शृंगार 16।

[रचनाकाल–सन 1879 ई.]

श्री सीता वल्लभ स्तोत्र

सन 1879 ई.

श्री सीता वल्लभ स्तोत्र

तद्वन्दे कनकप्रभं किमपि जानकीधाम।
मत्प्रसादतस्सार्थतामेति राम इति नाम॥
यो धारितः शिरसि शारदनारदाद्यैः।
यश्चैक एव भवरोगकृते निदानम्॥
यो वै रघूत्तमवशीकरसिद्धचूर्णम्।
तं जानकीचरणरेणुमहं स्मरामि॥1॥
या ब्रह्मोशैः पूजिता ब्रह्मरूपा।
प्रेमानन्दा प्रेमभावैकगम्या॥
रामस्यास्ते याऽपरा गौरमूर्तिः।
सा श्रीसीता स्वामिनी मेऽस्तु नित्यम्॥2॥
नमोस्तु सीतापदपल्लवाभ्याम्।
ब्रह्मेशमुख्यैरतिसेविताभ्याम्॥
भक्तेष्ट दाभ्याम्भवभंजनाभ्याम्।
रामप्रियाभ्याम्ममजीवनाभ्याम्॥3॥
रामप्रिये राममनोऽभिरामे।
रामात्मिके पूरितरामकामे॥
रामप्रदे रामजनाभिवन्द्ये।
रामे रमे त्वां शरणं प्रपद्ये॥4॥
कंठे पंकजमालिका भगवतो यष्टिः करेकांचनी।
गेहे चित्रपटी कुलेऽमृतमयां क्षेमंकरी देवता॥
शय्यायां मणिदीपिका रतिकलाखेलाविधौ पुत्रिका।
देहे प्राणसमास्ति या रघुपतेस्तां जानकीमाश्रये॥5॥
श्री मद्राममनः कुरंगदमने या हेमदामात्मिका।
मंजूषाऽसुमणे रघूत्तममणेश्चेतोऽलिनः पद्मिनी॥
या रामाक्षिचकोरपोषणकरी चान्द्रीकला निर्मला।
सा श्रीरामवशीकरी जनकजा सीताऽस्तु मे स्वामिनी॥6॥

प्रायेण सन्ति बहवः प्रभवः पृथिव्याम् ।
ये दंडनिग्रहकरा निजसेवका नाम् ।
किंचापराधशतकौटिसहाजनानाम् ।
एकात्वमेव हि यतोऽसि धरासुपुत्री ॥7॥

स्वस्वास्सपत्न्यास्सुरनाथ सूनो रक्षः पतेस्त्यागकृतश्च भर्तुः ।
त्वयाऽपराधा क्षमिता अनेके क्षमासुते क्षाम्यममापि चागः ॥8॥

यन्मातास्ति वसुन्धरा भगवती साक्षात् विदेहः पिता ।
स्वस्रः कोशलराज जास्व सुरकश्चार्य्यो दशस्यन्दनः ।
दासो वायुसुतो सुतौ कुशलवौ रामानुजा देवराः—
यस्या ब्रह्मपति स्तयातिदयया किं किं न सम्भाव्यते ॥9॥

नातः परं किमपि किंचिदपीह मातः
वाच्यं ममास्ति भवती पदकंजमूले ।
एतावदेव निनिवेद्य सुखं शयेऽहम्
यन्मूढ़धीः शिशुरहं जननी त्वमेव ॥10॥

वन्दे भरतपत्नीं श्री माण्डवी रतिरूपिणीम् ।
तारुण्यरससम्पूर्णां कारुण्यरसपूरिताम् ॥11॥

लक्ष्मणप्रेयसी श्री मच्छीरध्वजतनूद्भवाम् ।
वन्देहमूर्म्मिलां देवीं पतिप्रेमरसोर्म्मिलाम् ॥12॥

नृपतिकुशध्वजकन्या धन्या नान्या समास्ति यल्लोके ।
सा श्रुतिविश्रुतकीर्तिः श्रुतिकीर्तिमऽस्तु सुप्रीता ॥13॥

यस्याः पतिर्निमिकुलाभरणं विदेहो
जामातरः श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य रूपाः ।
भाग्यस्य या करपदादिविशिष्टमूर्तिः
तां श्री जगज्जनिजनिं प्रणमेसुनेत्राम् ॥14॥

जमातृत्वे गतं यस्य साक्षाद्ब्रह्म परात्परम् ।
नं वन्दे ज्ञाननिलयं विदेहं जनकं परम् ॥15॥

विश्वामित्रं शतानन्दं मैथिलं च कुशध्वजम् ।
भौमं लक्ष्मीनिधिं चापि वन्दे प्रीत्या पुनः पुनः ॥16॥

विदेहस्थान् नरांश्चापि बालान् नारीः गुणोज्वलाः
वन्दे सर्व्वान् पशूज्जीवान् भूमिं च तृणावीरुधः ॥17॥

सर्व्वे ददन्तां कृपयाः मह्यं श्रीजानकीपदम् ।
भक्तिदानम्प्रकुर्वन्तु यतस्ते स्वामिनीप्रियाः ॥18॥

आह्लादिनिं चारुशीलामतिशीलां सुशीलकाम् ।
हेमां बन्दे सदा भक्त्या सखीः सेवाविधौ हरेः ॥19॥

शान्ता सुभद्रा सन्तोषा शोभना शुभदा धरा।
चार्वगी लोचना क्षेमा सुधात्री चापि सुस्मिता ॥20॥
क्षेमदात्री सत्यवती धीरा हेमांगिनी तथा।
वन्दे एता अपि श्रीमज्जानक्याः प्रियकारिणीः ॥21॥
वयस्यां माधवीं विद्यां वागीशां च हरिप्रियां।
मनोजवां सुविद्यां च नित्यां नित्यं नमाम्यहम् ॥22॥
कमला विमलाद्याश्च नद्यस्सख्यात्मिकास्तु याः।
नमोनमः सदा ताभ्यः सर्वास्ताः कृपयान्तु माम् ॥23॥
परीता स्वगुणैरेवमधीतावेदवादिभिः
कान्त्यास्फीता गुणातीता पीतांशुकविलासिनी ॥24॥
श्रुतिगीतादिभिर्गीता शीतांशुकिरणोज्वला।
नित्यमस्तु मनोनीता सीता प्रीता ममोपरि ॥25॥
आशाक्रीता वशं नीता मायया दुःखदायया।
भवभीता वयं सीतापदपल्लवमाश्रिताः ॥26॥
खादन्पिवन्स्वापन्गच्छन्श्वसनस्तिष्ठन्यदा तदा।
यत्र तत्र सुखे दुःखे सीतैव स्मरणेऽस्तु ने ॥27॥
रात्रौ सीता दिवा सीता सीता सीता गृहे वने।
पृष्ठाऽग्रे पार्श्वयोः सीता सीतैवास्तु गतिर्मम् ॥28॥
इदं सीता प्रियं स्तोत्रं श्रीरामस्यातिवल्लभम्।
श्री हरिश्चन्द्रजिह्वाग्रे स्थित्वा वाण्या विनिर्मिताम् ॥29॥
यः पठेत् प्रातरुत्थाय सायं वा सुसमाहितः।
भक्तियुक्तो भावपूर्णः स सीतावल्लभो भवेत् ॥30॥

इति

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड-6, संख्या- 13, जुलाई, सन 1879 ई. में प्रकाशित]

विनय प्रेम पचासा

सन 1881 ई.

विनय प्रेम पचासा

जै जै श्री बृन्दाबन देवी।
जो देवन को देव कन्हाई सोऊ जा पद सेवी॥
अगम अपार जगत सागर के जाके गुन गन खेवी।
'हरीचन्द' की यहै बीनती कबहू तो सुधि लेवी॥1॥

बचन दीन जन सों जुगति नई निकारी लाल।
बहरावत हित हम सबन भए बाल गोपाल॥
जनम करम पढ़ि आपु को बहंकि जाइं से और।
हम दामन तजिहैं नहीं अहो छली सिरमौर॥
जदपि बास तव मैं अहैं जीवहि दोसी नाथ।
पै निरघृन कौतुक लखत तुम क्यों वाके साथ॥
भयो पाप सों पाप बिनु जग न जियत छन एक।
ऐसे जीवहिं होइ क्यों तुव पद पदम बिबेक॥
न्याय परायन सांच तुम सांचे अहौ दयाल।
देखौं निबहत उभय गुन किमि मेरे अघ काल॥
जो हम जैसो कुछ करै तुम तैसो फल देहु।
तौ जग की गति आपहू करी बिसारि सनेहु॥2॥

राग यथा रुचि

नैनन मैं निवसौ पुतरी ह्वै हिय मैं बसौ ह्वै प्रान।
अंग अंग संचरहु सक्ति ह्वै ए हो मीत सुजान॥
मन में बृत्ति वासना ह्वै के प्यारे करौ निवास।
ससि सूरज ह्वै रैन दिना तुम हिय नभ करहु प्रकास॥
बसन होइ लिपटौ प्रति अंगन भूषन ह्वै तन बांधो।
सोंधो ह्वै मिलि जाऊ रोम प्रति अहो प्रानपति माधो॥

ह्वैं सुहाग सेंदुर सिर बिलसौ अधर राग ह्वै सोहौ।
फूल माल ह्वै कंठ लगौ मम निज सुबास मन मोहौ॥
नभ ह्वै पूरौ मम आंगन मैं पवन होइ तन लागौ।
ह्वै सुगन्ध मो घरहि बसावहु रस ह्वैके मन पागौ॥
श्रवनन पूरौ होइ मधुर सुर अंजन ह्वै दोउ नैन।
होइ कामना जागहु हिय मैं करहु नींद बनि सैन॥
रहौ ज्ञान में तुमही प्यारे तुम लय तन मम होय।
'हरीचन्द' यह भाव रहै नहि प्यारे हम तुम दोय॥3॥

राग असावरी

जुगल केलि रस बल्लभियन बिनु और कहा कोउ जानै।
बिनु अधिकारी कौन और या गुप्त रसहिं पहिचानै॥
तर्क बितर्क महा चतुराई काव्य कोष निपुनाई।
कबहूं याके निकट न आवत लाख कहौ न बनाई॥
कै तो जगत विषय की तिन सों गन्ध भयानक आवै।
कै विज्ञान महा तम बढ़िके सगरे रसहि सुखावै॥
जौ कोउ कोमल कमल तन्तु सो महा मत्त गज बांधै।
तौ या मरमहिं समुझि सकै कछु पै जौ एकहि साधै॥
साधन जिते जगत मैं गाए तिनको फल कछु औरै।
यह तौ उनकी कृपा साध्य इक साधन करै सो बौरै॥
जुपै प्रवाह छुट्यौ तौ लागी आई महा मरजादा।
जद्यपि यह नीकि प्रवाह सों रंग तऊ है सादा॥
अतिहि निकट परलोक लोक दोउ जो या में कछु बोलै।
तनिकहु पग खिसक्यौ तौ डूब्यौ अमृत मैं बिष घोलै॥
रात दिना के सुनै किये जे अति अभ्यासित भाव।
तिन सों कैसे बचै कहो मन कोटिक करौ उपाव॥
जिमि बिनु आयसु कठिन दुर्ग में सकै न कोऊ जाय।
तैसहिं उनकी कृपा बिना नहिं याको और उपाय॥
पद पद पै अघ धरे करोरन बृत्ति सहज अधगामी।
काम क्रोध उपजत छिन छिन मैं होउ भले कोउ नामी॥
इन रिपुगन को जीवन कों जौ तप आदिक कछु साधै।
तौ अभिमान जानकारी को आइ सकल अंग बांधै॥
सूछमता को परम प्रान जो ताको अतर निकारै।
तो या रसहि कछुक कछु जानै औरन आन बिचारै॥

कहिए जुपै होइ कहिबे की पुनि भाखे न कहाई।
'हरीचन्द' बिनु बल्लभ पद बल यह निधि नहिं लहि जाई ॥4॥

तोसों और न कछु प्रभु जाचौं।
इतनो ही जांचत करुना निधि तुम ही मैं इक राचौं।
खर कूकुर लौं द्वार द्वार पै अरथ लोभ नहिं नाचौं।
या पाखान सरिस हियरे पै नाम तुम्हारोइ खाचौं॥
विस्फुलिंग से जग दुख तजि तब बिरह अगिन तन ताचौं।
'हरीचन्द' इक रस तुमसों मिलि अति अनन्द मन माचौं ॥5॥

प्यारे यह नहिं जानि परी।
नाथ समुझि यह बस्यो तुमहिं कै तुम मोहिं प्रभो बरी॥
हम भाजत पै तुम गहि राखत बरबस करत निबाह।
उलटी गति दिखराति मनों नुमहीं कहं मेरी चाह॥
हम अपराध करत नहिं चूकत बिचलावत विश्वास।
तुम तेहि छमा करत गहि गहि भुज औरहु खींचत पास॥
दास होइ हम अति अभिमानी बंचक निमक हराम।
तुम स्वामी समरथ करुनामय क्यौं बनि रहे गुलाम॥
जो हम कहं करनी चाहत ही सो तुम उलटी कीन्हीं।
प्रियतम ह्वै प्रेमी समान सब चाल जनन सों लीन्हीं॥
यह उदारता कहं लौं गाओं बनै तुमहि सों नाथ।
नाहीं तौ 'हरिचन्द' पतित को कौन निबाहै साथ ॥6॥

याही सों घनश्याम कहावत।
द्रवत दीन दुरदसा बिलोकत करुना रस बरसावत॥
भींगे सदा रहत हिय रस सों जन मन ताप जुड़ावत।
'हरीचन्द' से चातक जन के जिय की प्यास बुझावत ॥7॥

हरि तन करुना सरिता बाढ़ी।
दुखी देखि निज जन बिनु साधन उमगि चली अति गाढ़ी॥
तोरि कूल मरजादा के दोउ न्याव करार गिराए।
जित तित परे करम फल तरुगन जड़ सों तोरि बहाए॥
अचल बिरुद गम्भीर भंवर गहि महा पाप गन बोरे।
असहन पवन बेग अति बेगहि दीन महान हलोरे॥

भरि दीने जन हृदय सरोवर तीनहुं ताप बुझाई।
'हरीचन्द' हरि जस समुद्र में मिली उमगि हरखाई ॥8॥

प्रभु की कृपा कहां लौं गैये।
करुना में करुनानिधि ही के इती बड़ाई पैये॥
डार डार जौ अघ मेरे तो पात पात वह बोलै।
नदी नदी जो पाप चलत तौ बिन्दु बिन्दु वह डोलै॥
थल थल में छिपि रहत जु यह वह रेनु रेनु ह्वै धावै।
दीप दीप जौ यह समान वह किरिन किरिन बनि जावै॥
काकी उपमा वाहि दीजिए व्यापक गुन जेहि मांहीं।
हिय अन्तर अंधियार दुराने अघहु नाहिं बचि जाहीं॥
सिन्धु लहरहू सिन्धुमयी है मूढ़ करै जो लेखे।
नाहीं तो 'हरीचन्द' सरीखे तरत पतित कहुं देखे ॥9॥

प्रभु हो जो करिहौ सोइ न्याव।
सुगति कुगति सब ही अति समुचित हम पतितन के दाव॥
जौ तृन मात्रहु न्याव करौ प्रभु करि शास्त्रन पै नेह।
तौ हम कठिन नरक के लायक यामैं कछु न सन्देह॥
पै जौ ढरौ नाथ करुना दिसि तौ का मेरे पाप।
कोटि कोटि बैकुंठ सुलभ तर तनिक कटाक्ष प्रताप॥
जौ हमरी दिसि लखहु उचित तौ सब बिधि दंड बिधान।
'हरीचन्द' तौ यही जोग पै तुम प्रभु दयानिधान ॥10॥

जिन नहिं श्रीबल्लभ पद गहे।
ते भवसिन्धु धार मैं साधन करत करत हू बहे॥
परम तत्व जानत नहिं कोऊ जद्यपि शास्त्रन कहे।
ते इनके किंकर जन ही के कर अमलक ह्वै रहे॥
नवनीत प्रिय हाथ लगत नहिं स्तुति पय बरबस महे।
'हरीचन्द' बिनु बैश्वानर बल करम काठ किन दहे ॥11॥

कहां लौं निज नीचता बखानौं।
जब सों तुमसों बिछुरे तब सों अघ ही जनम सिरानौं॥
दुष्ट सुभाव बियोग खिस्याने संग्रह कियो सहाई।
सूखी लकरी वायु पाइ कै चलौ, अगिन उलहाई॥

जनम जनम को बोझ जमा करि भारी गांठ बंधाई।
उठि न सकत गर पीठ टूटि गई अब इतनी गरुआई ॥
बूड़त तेहि लेके भव धारा अब नहिं कछुक उपाई।
'हरीचन्द' तुम ही चाहौ तौ तारो मोहिं कन्हाई ॥12॥

प्रभु मैं सेवक निमक हराम।
खाइ खाइ के महा मुटैहों करिहौं कछू न काम ॥
बात बनैहों लम्बी चौड़ी बैठ्यौ बैठ्यो धाम।
त्रिनहु नाहिं इत उत सरकैहों रहिहौं बन्यौ गुलाम ॥
नाम बेंचिहौं तुमरो करि करि उलटो अघ के काम।
'हरीचन्द' ऐसन के पालक तुमहि एक घनश्याम ॥13॥

उमरि सब दुख ही मांहि सिरानी।
अपने इनके उनके कारन रोअत रैन बिहानी ॥
जहं जहं सुख की आसा करिकै मन बुधि सह लपटानी।
तहं तहं धन सम्बन्ध जनित दुख पायो उलटि महानी ॥
सादर पियो उदर भरि विष कहं धोखे अमृत जानी।
'हरीचन्द' माया मन्दिर सों मति सब बिधि बौरानी ॥14॥

बैस सिरानी रोअत रोअत।
सपनेहुं चौंकि तनिक नहिं जागौं बीती सबही सोअत ॥
गई कमाई दूर सबै छन रहे गांठ को खोअत।
औरहु कजरी तन लपटानी मन जानी हम धोअत ॥
स्वाद मिलौ न मजूरी को सिर टूट्यौ बोझा ढोअत।
'हरीचन्द' नहिं भर्‍यौ पेट पै हाथ जरे दोउ पोअत ॥15॥

नाहिंनै या आसा को अन्त।
बढ़त द्रौपदी चीर सरिस सब जुरे तन्त में तन्त ॥
बरन बरन प्रगटत ही आवत तन विराट अनुहारी।
थक्यौ दुसासन जीव बापुरो खींचत खींचत हारी ॥
जिमि तित बसन बढ़ाइ कहाए भगत बछल महराज।
तैसहि इतै घठाइ राखिए 'हरीचन्द' की लाज ॥16॥

करनी करुनानिधि केसव की कैसे कहि कहि गाऊं।
अधम जीव परिमित मति रसना एक पार क्यौं पाऊं ॥

जग मैं जैसी होत तितोही जगत जीव कहि जानै।
तुम तो सब बिधि करत अलौकिक किमि तेहि नाथ बखानै॥
मात पिता तिय मुनिहू जो अघ सहि न सकै लखि भारी।
सो तुम तुरत छमत करुनानिधि निज दिसि लखि बनवारी॥
कह लौ कहौं दयानिधि तुम सों जानहु अन्तरजामी।
'हरीचन्द' से अधिहि चाहिए तुमरेहि ऐसो स्वामी॥17॥

लखहु प्रभु जीवन केरि ढिठाई।
निज निन्दा मेटन हित तुम महं प्रेरक शक्ति लगाई॥
बुरो भलो सब करत बुद्धि बस मनहू की रुचि पाई।
कहैं सबै हरि करत जीव को दोष नहीं कछु भाई॥
दैव करम संयोग आदि बहु सब्दन लेत सहाई।
अपने दोस और पर थापत लखहु नाथ चतुराई॥
शास्त्रनहू कछु प्रेरकता कहि उलटो दियो भुलाई।
सब मैं मिल्यौ सब सों न्यारो कैसे यह न बुझाई॥
मिल्यौ कहैं तो पाप पुन्य दोउ एकहि सम ह्वै जाई।
जुदो कहैं किमि तुम बिनु दूजो सत्ता नाहिं लखाई॥
कर्त्ता बुधि दायक जग स्वामी करुनासिन्धु कन्हाई।
'हरीचन्द' तारहु इन कहं मति इनकी लखौ खुटाई॥18॥

प्रभु हो! कब लौं नाच नचैहो।
अपने जन के निलज तमासे कब लौं जगहि देखैहो॥
कब लौं इन बिमुखन के मुख सों निज गुन गनहि लजैहो।
कब लौं जिन पै सतत हंसत जम तिनसों हमहिं हंसैहो॥
छिन छिन बूड़त जात पंक लखि मोहिं कब चित्त द्रवैहो।
जनम जनम के निज 'हरीचन्दहि' कब फिरिकै अपनैहो॥19॥

छप्पय

जीव धर्म सों कुटिल मन्द मति लोक बिनिन्दित।
काम क्रोध मद मत्त सदा संसार मलिन मति॥
अथिर अबोध अधीर अधरमी अति अज्ञानी।
पुरुषारथ सों रहित निबल अति पै अभिमानी॥
सब भांति नष्ट लखि दास निज जानि कृपा कर धाइए।
प्रभु महा हीन 'हरीचन्द' को दीन जानि अपनाइए॥20॥

कवित्त

भजौं तो गुपाल ही कों सेवौं तो गुपालै एक
मेरो मन लाग्यो सब भांति गुपाल सों।
मेरे देव देवी गुरु माता पिता बन्धु इष्ट
मित्र सखा हरि नातो एक गोप बाल सों॥
'हरीचन्द' और सों न मेरो सम्बन्ध कछु
आसरो सदैव एक लोचन बिसाल सों।
मांगौं तो गुपाल सों न मांगौं तो गुपाल ही सों
रीझौं तो गुपाल पै औ खीझौं तो गुपाल सों॥21॥

द्वारहि पैं लुटि जायगो बाग औ आतिसबाजी छिनै में जरैगी।
ह्वैहैं बिदा ढका लै हय हाथिहु खाय पकाय बरात फिरैगी॥
दान दै मातु पिता छुटिहैं 'हरीचन्द' सखीहु न साथ करैगी।
गाय बजाय जुदा सब ह्वैहैं अकेली पिया के तू पाले परैगी॥22॥

पूजिहैं देवी न देव कोऊ किन वेद पुरानहु ऊंचे पुकारौ।
काहू सों काम कछू नहिं मोहिं सबै अपनी अपनी को सम्हारौ॥
हैं बनिहैं कै नसाइहौं यासौं यहै प्रन है 'हरीचन्द' हमारौ।
मानिहैं एक गुपालहि को नहिं और के बाप को यामें इजारौ॥23॥

नैनन के तारे दुलारे प्रान प्यारे मेरे
दुख के दरन सुख करन बिसाल हैं।
मेरो ध्यान मेरो ज्ञान मेरे बेद औ पुरान
बिबिध प्रमान मेरे एक नन्दलाल हैं॥
'हरीचन्द' और सों न काम सपनेहूं मोहिं
मेरे सरबस धन जसुदा के बाल हैं।
मेरी रति मेरी मति मेरे पति मेरे प्रान
मेरे जग माहिं सबै केवल गुपाल हैं॥24॥

सकल की मूलमयी वेदन की भेदमयी
ग्रन्थन की तत्त्वमयी वादन के जाल की।
मन बुद्धि सीमामयी सृष्टिहु की आदिमयी
देवन की पूजामयी जीवमयी काल की॥
ध्यानमयी ज्ञानमयी सोभामयी सुखमयी
गोपी गोप गाय ब्रज भागमयी भाल की।

भक्त अनुरागमयी राधिका सुहागमयी
प्राणमयी प्रेममयी मूरति गोपाल की ॥25॥

पाहि पाहि प्रभु अन्तरजामी।
तुमसों छिपी न कछु करुनानिधि कहा कहौं खग गामी ॥
तुम्हरो कहत सबै मोहिं मोहन जदपि पतित मैं नामी।
ताकी लाज राखि 'हरीचन्दहि' बखसौ चरन गुलामी ॥26॥

कहा कहौं कछु कहि न रही।
बिधि तैं अब लौं पंडित कवियन रचि पचि सबहिं कही ॥
महा अधम हम दीनबन्धु तुम सब समरथ अघ हारी।
कहनो यहै अनेकन बिधि सों युक्त अनेक बिचारी ॥
नेति नेति जेहि बेद पुकारन तासों बाद बढ़ाई।
फल कछु नाहिं उलटि खीझन भय यामैं कह चतुराई ॥
सब जानत सब करन जोग तुम नेकु जु पै इत हेरौ।
लखि सरनागत पतित दीन 'हरिचन्द' सीस कर फेरौ ॥27॥

मिटत नहिं या मन के अभिलाख।
पुजवत एक सबै बिधि तन तैं होत और तन लाख ॥
दिन प्रति एक मनोरथ बाढ़त तृष्णा उठत अपार।
घृत जिमि अग्नि सिद्धि तिमि जग मैं होत एक तै चार ॥
जोग ज्ञान जप तीरथ आदिक साधन तें नहीं जात।
'हरीचन्द' बिनु कृष्ण कृपा रस पाएं नहिंन अघात ॥28॥

अहो हरि हम बढ़ि बढ़ि कै अघ कीन्हें॥
लोक बेद निन्दत जेहि अनुदिन ते हम हठि सिर लीन्हें ॥
जामैं जान्यौ दोष अधिक अति सो कीनो चित लाई।
तुमसों बिमुख होन की कीन्हीं लाखन खोज उपाई ॥
जान्यौ जिन्हें प्रतच्छ भयंकर नरक गमन को हेतू।
तेइ आचरन किए नितही नित कहौं कहा खग केतू ॥
नाम रूप अपराध अनेकन जानि जानि बिस्तारे।
थके बेद जम अघहू थाके पै हम अजहुं न हारे ॥
बहुत कहां लौं कहौं प्रानपति सुनत सुनत अकुलैहो।
तुमरो नाम बेंच अघ करने यह हमही मैं पैहो ॥

तुमरे बिरद पनो सों मेरो पतित पनो अधिकाई।
'हरीचन्द' तारे इतने पै पावन पतित कन्हाई ॥29॥

नेह हरि सों नीको लागै।
सदा एक रस रहत निरन्तर छिन छिन अति रस पागै ॥
नहिं बियोग भय नहिं हिंसा जहं सतत मधुर ह्वै जागै।
'हरीचन्द' तेहि तजि मूरख क्यों जगत जाल अनुरागै ॥30॥

प्रभु मोहिं नाहिं नैकहू आस।
सब विधि मैं तजिबेही लायक यह जिय दृढ़ विश्वास ॥
शास्त्रन के अघ की जु कहानी तिनकी नहिं कछु बात।
करुनामय को करनिहु सों मैं दंडहि जोग लखात ॥
जिन दोसन सों सकुल दुसासन को तुम कीन्हो नास।
ते तिनहूं सों बढ़ि मेरे मैं करत एकत्रहि बास ॥
शूद्र तपी सुनि बध्यो जाहि तुम तपत जदपि सो सांच।
महानीच हम भंड तपस्वी सो रहिहैं किमि बांच ॥
मिथ्या अपजस सुनि सुनीच मुख तजी सिया सी नारि।
सत्य सत्य हम महाकलंकिहि तजिहौ क्यौं न मुरारि ॥
जिन कर्मन सों असुर सकुल बारम्बार संहारे।
ते अध कौन नहीं है हम मैं भाखहु नन्ददुलारे ॥
हां जो पै मरजाद मिटावहु करुना नदी बढ़ाई।
तो या महापतित 'हरिचन्दहिं' सकहु नाथ अपनाई ॥31॥

प्रेम मैं मीन मेष कछु नाहीं।
अति ही सरल पन्थ यह सूधो छल नहिं जाके माहीं ॥
हिंसा द्वेष ईरखा मत्सर मद स्वारथ की बातैं।
कबहूं याके निकट न आवैं छल प्रपंच की घातैं ॥
सहज सुभाविक रहनि प्रेम की पीतम सुख सुखकारी।
अपुनो कोटि कोटि सुख पिय के तनिकहि पर बलिहारी ॥
जहं न ज्ञान अभिमान नेम ब्रत बिषय बासना आवै।
रीझ खीज दोऊ पीतम की मन आनन्द बढ़ावै ॥
परमारथ स्वारथ दोउ पीतम और जगत नहिं जानै।
'हरीचन्द' यह प्रेम रीति कोउ बिरले ही पहिचानै ॥32॥

तुम जो करत दीनन सों मोहन सो को और करै।
महापतित जन वेद विनिन्दित को तिन को उधरै॥
सब विधि हीनन सों करि नेहहि कौन दया बितरै।
'हरीचन्द' की बांह पकरि कै को भव पार करै॥33॥

गोपालहि रुचत सहज ब्यौहार।
निहछल बिनु प्रपंच निरकृत्रिम सब विधि बिना बिकार॥
सहज प्रेम पुनि नेम सहजही सहज भजन रस रीति।
सहज मिलनि बोलनि चलनि सब सहजहि प्रीति प्रतीति॥
हाव भाव चितवनि कटाक्ष अनुराग सहज जो होय।
भावै सोई मेरे हरि को करौ कोटि कछु कोय॥
पूजा दान नेम ब्रत के पाखंड न हरि को भावैं।
बादि रसिकता ज्ञान ध्यान जौ हरि पद नेह न लावैं॥
तासों सहज प्रेम पथ बल्लभ सहजहि प्रगटि चलायो।
'हरीचन्द' को सहजहि निज करि निज जस सहज गंवायो॥34॥

प्रभु हो अपुनो बिरुद सम्हारो।
जथा जोग फल देन जनन की यह थल बानि बिसारो॥
न्यासी नाम छांड़ि करुनानिधि दया निधान कहाओ।
मेटि परम मरजाद श्रुतिन की कृपा समुद्र कहाओ॥
अपुनी ओर निहार सांवरे बिरदहु राखहु थापी।
जामैं निबहि जांहि कोऊ बिधि 'हरिचन्दहु' से पापी॥35॥

महिमा मेरे गोविन्दजू की कही कौन पैं जाई।
परम उदार चतुर चिन्तामनि जानि सिरोमनि राई॥
सेवा तनिक बहुत करि मानत ऐसे दीनदयाला।
तुलसी दलहि मेरु करि समझत ऐसो कौन कृपाला॥
निज जन के अपराध कोटि सत तृनहू सों लघु मानै।
करनी लखत न कबहुं भक्त की अपुनो करिकै जानै॥
दीन सुदामा अजामेल गज गनिका याके साखी।
बारम्बार पुरान बेद कथि सोइ मुनिवर बहु भाखी॥
कहं लौं कहौं कहत नहिं आवै करत नाथ जोइ जोई।
'हरीचन्द' से कलि के खल पैं कृपा तुमहिं सों होई॥36॥

ऐसे तुमही सों निबहै।
ऐसे अधमन को करुनानिधि तुम बिनु कौन चहै॥
मेटि सकल मरजाद श्रुतिन की पतितन को अपनाओ।
तिनके दोस कोटि सब भूलो नित नित दया बढ़ाओ॥
बहुत कहां लौं कहौं और सों कबहुं न यह बनि आई।
'हरीचन्द' तुमसों स्वामी नहिं तो वादिहि सब काई॥37॥

वह अपनी नाथ दयालुता तुम्हें याद हो कि न याद हो।
वह जो कौल भक्तों से था किया तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
सुनि गज की जैसे ही आपदा न बिलम्ब छिन का सहा गया।
वहीं दौड़े उठ के पियादे पा तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
वह जो चाहा लोगों ने द्रौपदी की कि शर्म उसकी सभा में लें।
वह बढ़ाया वस्त्र को तुमने जा तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
वह अजामिल एक जो पापी था लिया नाम मरने पै बेटे का।
वह नरक से उसको बचा दिया तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
वह जो गीध था गनिका व थी व जो व्याध था व मलाह था।
इन्हें तुमने ऊंचों की गति दिया तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
खाना भील के वे जूठे फल कहीं साग दास के घर पै चल।
यूंही लाख किस्से कहूं मैं क्या तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
जिन बानरों में न रूप था न तो गुनहि था न तो जात थी।
उन्हें भाइयों का सा मानना तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
वे जो गोपी गोप थे ब्रज के सब उन्हें इतना चाहा कि क्या कहूं।
रहे उनके उलटे रिनी सदा तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
कहो गोपियों से कहा था क्या करो याद गीता की भी जरा।
यानी वादा भक्त उधार का तुम्हें याद हो कि न याद हो॥
या तुम्हारा ही 'हरिचन्द' है गो फसाद में जग के बन्द है।
न है दास जन्मों का आपका तुम्हें याद हो कि न याद हो॥38॥

मजा कहीं नहिं पाया जग में नाहक रहा भुलाया।
छिन के सुख की लालच जित तित स्वान लार टपकाया॥
यह जग में जिसको अपना कर झूठा भरम बढ़ाया।
तिन स्वारथ फंसि सूकर कूकर सब दुतकार बताया॥
अपना अपना अपना करके बहुत बढ़ाई माया।
अन्त सबै तजि दीनो मल सम जिनको अति अपनाया॥

सांचे मीत श्यासुन्दर सों छिनहुं न नेह बढ़ाया।
'हरीचन्द' मल मूत क़ीट बनि नर जीवनहि गंवाया॥39॥

तुझ पर काल अचानक टूटैगा।
गाफिल मत हो लवा बाज ज्यौं हंसी खेल में लूटैगा॥
कब आवैगा कौन राह से प्रान कौन बिधि छूटैगा।
यह नहिं जानि परैगी बीचहि यह तन दरपन फूटैगा॥
तब न बचावेगा कोई जब काल दंड सिर कूटैगा।
'हरीचन्द' एक वही बचैगा जो हरिपद रस घूंटैगा॥40॥

जीव तू महा अधम निर्लज्ज।
अब तो लाजु कछुक सिर गरज्यो आइ काल को बज्ज॥
फूलि न जौ तू ह्वै गयो राजा बाबू अमला जज्ज।
सब बकरी ही से मरि जैहैं लै दिन चार गरज्ज॥
विष से विषयन को तजियै तौ डूबन ही के कज्ज।
'हरीचन्द' हरि चरन अमृत सर तजि जग छीलर मज्ज॥41॥

हरि माया भठियारी ने क्या अजब सराय बसाई है।
जिनमें आकर बसते ही सब जग की मति बौराई है॥
होके मुसाफिर सब ने जिसमें घर सी नेंव जमाई है।
भांग पड़ी कुएं में जिसने पिया बना सौदाई है॥
सौदा बना भूर का लड्डू देखत मति ललचाई है।
खाया जिसने वह पछताया यह भी अजब मिठाई है॥
एक एक कर छोड़ रहे हैं नित नित खेप लदाई है।
जो बचते सो यही सोचते उनकी सदा रहाई है॥
अजब भंवर है जिसमें पड़कर सब दुनिया चकराई है।
'हरीचन्द' भगवन्त भजन बिनु इससे नहीं रिहाई है॥42॥

डंका कूच का बज रहा मुसाफिर जागो रे भाई।
देखो लाद चले सब पन्थी तुम क्यौं रहे भुलाई॥
जब चलना ही निहचै है तो ले किन माल लदाई।
'हरीचन्द' हरि पद बिनु नहिं तो रहि जैहो मुंह बाई॥43॥

मृत्यु नगाड़ा बाजि रहा है सुन रे तू गाफ़िल सब छन।
गगन भुवन भरि पूरि रहा गम्भीर नाद अनहद घन घन॥

उनपति पहिले से बजता था बजता है औ बाजैगा।
इसी शब्द में गुन लै होंगे सदा एक यह राजैगा॥
यह जग के सामान बीच ही भए बीच मिट जावैंगे।
परस रूप रस गन्ध अन्त में शब्दहि माहि समावैंगे॥
काल रूप सच्चिदानन्द घन सांचो कृष्ण अकेला है।
'हरीचन्द' जो और है कुछ वह चार दिनों का मेला है॥44॥

जग की लात करोरन खाया।
मन से अब तो लाजु बेहाया॥
अपना अपना करके पाली देह रहा बौराया।
इन्द्रिन को परितोष करन हित अघ भर पेट कमाया॥
स्वारथ लोभी जग आगे दुःख रोया लाज गंवाया।
लाज गई औ धरम डुबाया हाथ कछू नहिं आया॥
सांचे मीत पतित पावन भरि करन दीन पर दाया।
अरे मूढ़ 'हरीचन्द' भागु चलु अब तौ उनकी छाया॥45॥

यारो इक दिन मौत जरूर।
फिर क्यौं इतने गाफ़िल होकर बने नशे में चूर॥
यही चुड़ैलें तुम्हें खाएंगी जिन्हें समझते हूर।
माया मोह जाल की फांसी इससे भागो दूर॥
जान बूझकर धोखा खाना है यह कौन शऊर।
आम कहां से खाओगे जब बोते गए बबूर॥
राजा रंक सभी दुनिया के छोटे बड़े मजूर।
जो मांगो बांधित को मारै वही सूर भर पूर॥
झूठा झगड़ा झूठा टंटा झूठा सभी गरूर।
'हरीचन्द' हरि प्रेम बिना सब अन्त धूर का धूर॥46॥

यारो यह नहिं सच्चा धरम।
छू छू कर या नाक मूंद कर जो कि बढ़ाया भरम॥
बन्धन ही में डालैंगे यह बुरे भले सब करम।
प्रान नहीं सुधरा तौ कोरा बैठे धोओ धरम॥
झूठे साधन छोड़ो जी से दीन बनो तुम परम।
'हरीचन्द' हरि सरन गहो इक यही धरम का मरम॥47॥

चेत चेत रे सोवनवाले सिर पर चोर खड़ा है।
सारी बैस बीत गई अब भी मद में चूर पड़ा है॥
सही अपमान स्वान सम निरलज जग के द्वार अड़ा है।
जरा याद उस समय की भी कर सबसे जौन कड़ा है॥
देखु न पाप नरक में तेरा जीवन जनम सड़ा है।
'हरीचन्द' अब तौ हरि पद भजु क्यों जग कींच गड़ा है ॥48॥

क्यों बे क्या करने जग में तू आया था क्या करता है।
गरभ बास की भूल गया सुध मरनहार पर मरता है॥
खाना पीना सोना रोना और विषय में भूला है।
यह तो सुअर में भी हैं तू मानुस बनि क्या फूला है॥
एक बात पशुओं से बढ़कर तुझमें पाई जाती है।
तू ज्ञानी हो पापी है वहां पाप गन्ध नहिं आती है॥
जो विशेष था तुझ में पशु से उसे भूल तू बैठा है।
तो क्यौं नाहक हम मनुष्य हैं इस गरूर में ऐंठा है॥
जान बूझ अनजान बना है देखो नहिं पतियाता है।
'हरीचन्द' अब भी हरि पद भज क्यौं अवसरहि गंवाता है ॥49॥

अपने को तू समझ जरा क्या भीतर है क्या भूला है!
तेरा असिल रूप क्या है तू जिसके ऊपर फूला है॥
हड्डी चमड़ी लहू मांस चरबी से देह बनाई है।
भीतर देखो तो घिन आवै ऊपर से चिकनाई है॥
लार पीप मल मूत पित्त कफ नकटी खूंट औ पोटा है।
नीली पीली नस कीड़ों से भरा पेट का लोटा है॥
तनिक कहीं खुल जाय तो थू थू कर सब नाक सिकोड़ैगा।
जरा गलै या पचै मरै तो देख सभी मुंह मोड़ैगा॥
भरी पेट में मल की गठरी ऊपर न्हाइ सुधरता है।
तिसको छू कर वायु चलै तो नाक बन्द सब करता है॥
मल से उपजा मल में लिपटा मति मलीन तू घूरा है।
इस शरीर पर इतना फूला रे अन्धे मगरूरा है॥
जिसके छुटते ही तू गदा मिलने ही से सजता है।
'हरीचन्द' उस परमातम को, गदहे क्यौं नहीं भजता है ॥50॥

[सन 1881 ई. में प्रकाशित]

राजभक्ति की कविताएं

स्वर्गवासी श्री अलवरत वर्णन अन्तर्लापिका

छप्पय

बस हित सानुस्वार देववाणी मधि का है?
अद्यहि भाषा माहिं कहा सब भाखन चाहै?
को तुव हास्यौ सदा? दान तुम नितहिं करत किमि?
का तुव मीठे सुनत? कहा सोहत नागिन जिमि?
महरानी तुम कहं का कहत? अरि सिर पै तुम का धरत?
का जल की सोभा? कौन तुव सैन सदा निज भुज करत ॥1॥

तुम स्वनारि मैं कहा? कौन रच्छा तुव करई?
का करि कै तुव सैन सत्रु को बल परिहरई?
कैसो तुव जन हियो? ततो बाचक का भासा?
तुव अरि सिर नित कहा? कौन जल बरसत खासा?
तुव पग संगर में का करत? कौन प्रथम पाताल कहि?
आमोदित कासों तुव बसन? का ह्वै पर दल परत महि ॥2॥

तुव धन कासों है बढ़ि? को पुनि देश जवन को?
कौन मुखर? तुम करत कहा अरि देखि भवन को?
तरु की सोभा कहा? होत तृन से, कह तुव अरि?
पर सों कायर कहा न? तुम किमि चलत सैन दरि?
तोहिं बान चलावन की सदा कहा परी पर फौज लखि?
कह बाजि उठत घन गाजि जिमि साजत तोहिं रन लखि हरखि ॥3॥

[यथा=अलं, अव, अर, अत इत्यादि क्रम से छत्तीसों प्रश्नों के उत्तर केवल 'अलवरत' इन पांच ही अक्षर में निकलते हैं]

कह सितार को सार? सत्रु के किमि मन तेरे?
काकी मार प्रहार सीम अरि हनै घनेरे?
का तुम सैनहिं देत सदा उनतिसएं ही दिन?
कहा कहत स्वीकार समय कछु अवसर के छिन?
को महरानी को पति परम सोभित स्वर्गहि ह्वै रह्यो?
अलवरत एक छत्तीस इन प्रश्नन को उत्तर कह्यो॥4॥

[14 दिसम्बर सन 1861 ई. को क्वीन विक्टोरिया के पति प्रिंस एलबर्ट की मृत्यु हुई थी। यह कविता उसी समय लिखी गई थी।—सम्पादक]

श्री राजकुमार शुभागमन वर्णन

स्वागत स्वागत धन्य तुम भावी राजधिराज।
भई सनाथा भूमि यह परसि चरन तुव आज ॥1॥
"राजकुंअर आओ इते दरसाओ मुख चन्द।
बरसाओ हम पर सुधा बाढ़्यौ परम अनन्द ॥2॥
नैन बिछाए आपु हित आवहु या मग होय।
कमल पांवड़े ये किए अति कोमल पग जोय" ॥3॥
सांचहु भारत में बढ़्यौ अचरज सहित अनन्द।
निरखत पच्छिम सों उदित आज अपूरब चन्द ॥4॥
दुष्ट नृपति बल दल दली दीना भारत भूमि।
लहिहै आजु अनन्द अति तुव पद पंकज चूमि ॥5॥
विकसित कीरति कैरवी रिपु बिरही अति छीन।
उडुगन सम नृप और सब लखियत तेज बिहीन ॥6॥
स्रवत सुधा सम बचन मधु पोखत औषधिराज।
त्रासत चोर कुमित्र खल नन्दत प्रजा समाज ॥7॥
चित चकोर हरखित भए सेवक कुमद अनन्द।
मिट्यौ दीनता तम सबै लखि भूपति मुख चंद ॥8॥
मन मयूर हरखित भए गए दुरित दव दूरि।
राजकुंअर नव घन सरस भारत जीवन मूरि ॥9॥
हृदय कमल प्रफुलित भए दुरे दुखद खल चोर।
पसर्‌यौ तेज जहान रबि भूपति आगम भोर ॥10॥
नन्दन पति प्यारी सची दंड बज्र गज जान।
मन्त्रीवर सुर सह लसत नृप सुत इन्द्र समान ॥11॥
भये लहलहे नर सबै उलस्यो प्रजा समाज।
बंदी पिक गावत सुजस राजकुंअर रितुराज ॥12॥

बिदलित रिपु गज सीस नित नख बल बुद्धि प्रभाव।
जन बन पथि सम अति प्रबल हरि भावी नर राव ॥13॥
मेलाहू सों बढ़ि सबै सज्यौ नगर को साज।
बुढ़वामंगल तुच्छ कह लखि नव मंगल आज ॥14॥
ललित अकासी धुज सजे परकासी आनन्द।
राका सी कासीपुरी लखि भूपति मुखचन्द ॥15॥
नौबत धुनि मंजीर सजि अंचल धुज फहराय।
कासी तुमहिं मिनार मिस टेरति हाथ उठाय ॥16॥
मरवट सथिये बसन धुज मौरी तोरन लाय।
दुलही सी कासीपुरी उलही नव बर पाय ॥17॥
जिमि रघुबर आए अवध जिमि रजनी लहि चन्द।
तिमि आगमन कुमार के कासी लह्यो अनन्द ॥18॥
मधुबन तजि फिर आइ हरि ब्रज निवसे मनु आज।
ऐसो अनुपम सुख लह्यो तुम कहं निरखि समाज ॥19॥

(षड्भिः कुलकम्)

जदपि न भोज न व्यास नहिं बालमीकि नहिं राम।
शाक्यसिंह 'हरीचन्द' बलि करन जुधिष्ठिर श्याम ॥20॥
जदपि न बिक्रम अकबरहु कालिदासहू नाहिं।
जदपि न सो विद्यादि गुन भारतवासी माहिं ॥21॥
प्रतिष्ठान साकेत पुनि दिल्ली मगध कनौज।
जदपि अबै उजरी परीं नगर सबै बिनु मौज ॥22॥
जदपि खंडहर सी भरी भारत भुव अति दीन।
खोइ रत्न सन्तान सब कृस तन दीन मलीन ॥23॥
तदपि तुमहिं लखि कै तुरत आनन्दित सब गात।
प्रान लहे तन सी अहो भारत भूमि दिखात ॥24॥
दाव जरे कहं वारि जिमि विरही कहं जिमि मीत।
रोगिहि अमृत पान जिमि तिमि एहि तोहि लहि प्रीत ॥25॥
घर घर में मनु सुत भयो घर घर मैं मनु व्याह।
घर घर बाढ़ी सम्पदा तुव आगम नर नाह ॥26॥
जैसे आतप तपित कों छाया सुखद गुनात।
जवन राज के अन्त तुव आगम तिमि दरसात ॥27॥
मसजिद लखि बिसुनाथ ढिग परे हिए जो घाव।
ता कहं मरहम सरिस यह तुव दरसन नर राव ॥28॥

कुंअर कहां हम लेहिं तोहिं ठौर न कहूं लखाय।
दृग मग ह्वै हमरे हिए बैठहु प्रिय तुम आय ॥29॥
कुंअर कहा आदर करैं देहिं कहा उपहार।
तुव मुख ससि आगे लसत तृन सम सब संसार ॥30॥
पै केवल अति सुद्ध जिय कहि यह देहिं असीस।
सानुज माता सहित तुम जीओ कोटि बरीस ॥31॥
जब लौं बानी वेद की जब लौं जग को जाल।
जब लौं नभ ससि सूर अरु तारागन की माल ॥32॥
जब लौं गंगा जमुन जल जब लौं भर्‌यौ नदीस।
जब लौं कवि कविता सुथित जब लौं भुव अहि सीस ॥33॥
जब लौं सुमन सुवास पर मत्त भंवर संचार।
जब लौं कामिनि नयन पर होहिं रसिक बलिहार ॥34॥
जब लौं तत्व सबै मिले गठे सबै परमानु।
जब लौं ईश्वर अस्तिता तब लौं तुम नरभानु ॥35॥
जिओ अचल लहि राज सुख नीरुज बिना विवाद।
उदय अस्त लौं मेदिनी पालहु लहि सुख स्वाद ॥36॥
पहरू कोउ न लखि परै होय अदालत बन्द।
ऐसो निरुपद्रव करौ राज कुंअर सुख कन्द ॥37॥
लोहा गृह के काम मैं कलह दम्पती माहिं।
बाद बुधनही मैं सदा तुव राजत रहि जाहिं ॥38॥
जाति एक सब नरन की जदपि बिबिध ब्यौहार।
तुमरे राजत लखि परै नेही सब संसार ॥39॥
रसना इक आसा अमित कहं लौं देहिं असीस।
रहौ सदा तुम छत्र ते होइ हमारे सीस ॥40॥
भ्रात मात सह सुतन जुत प्रिया सहित जुवराज।
जिओ जिओ जुग जुग जिओ भोगौ सब सुख साज ॥41॥

[सन 1857 में प्रिंस आव वेल्स (सम्राट एडवर्ड VII) के भारत आगमन पर यह कविता लिखी गई थी। इस कविता के अधिकांश दोहे बालाबोधिनी आषाढ़ संवत 1933 के अंक में छपे थे। 20 से 25 तक के दोहे हरिश्चन्द्रकला में प्रकाशित हुए थे। यहां बालाबोधिनी और हरिश्चन्द्रकला के सभी दोहे दिए गए हैं।]

श्री राजकुमार सुस्वागत

जाके दरस हित सदा नैना मरत पियास।
सो मुख चन्द बिलोकिहैं पूरी सब मन आस॥1॥
नैन बिछाए आपु हित आवहु या मग होय।
कमल पांवड़े ये किए अति कोमल पद जोय॥2॥

हे हे लेखनी, आज तुझे मानिनी बनना उचित नहीं है, क्योंकि भूमि के नायक ने चिर समय पीछे अपने प्यारी की सुधि ली है।

आज तू भी आगत पतिका बन और सोरह शृंगार कर के इस पतरूपी रंगशाला में ऐसी मनोहर और मदमाती गति से चल कि सब देखने वाले मोहित हो हो के मतवाले से झूमने लगें और ऐसी फूलों की झड़ी लगा जिस से महाराज कुमार के कोमल चरनों को यह पत्रिका एक फूल के पांवड़े सी बन जाय।

आज क्या कारण है कि उपवनों में कोकिल ने धूम सी मचा रखी है और भंवरे मदमाते होकर इधर से उधर दौड़े दौड़े फिरते हैं? वृक्षों को ऐसा कौन सा सुख हुआ है कि मतवालों की भांति झुक झुक के भूमि चूम रहे हैं और लता सब ऐसी क्यों प्रमुदित हैं कि कुलटा नायिका की भांति लाज छोड़ छोड़ के अपने नायक से लिपट रही हैं और फलों ने ऐसा क्या सुख पाया है कि स्थान छोड़ छोड़ के उमगे हुए पृथ्वी पर टपके पड़ते हैं और किस के आगे का समाचार सुन लिया है कि फूले नहीं समाते हैं। मालिनैं शृंगार करके किस के हेतु यह कोमल और अनेक रंग के फूलों की माला गूंथ रही हैं और यह ठंढी पौन किस के अंग को छू के आती है कि सब के मन की कली सी खिली जाती है। नदियों और सरोवरों के पानी क्यौं उछल उछल के अपना आनन्द प्रकाश कर रहे हैं और उन में कंवल की कलियां किस की स्तुति के हेतु हाथ बांधे खड़ी हैं। हंस और चकोर ऐसी कुलेल क्यौं करते हैं और वर्षा बिना मोर क्यौं नाच रहे हैं। पक्षी लोग बड़े उत्साह से किस के आने की बधाई गाते हैं और हिरन लोग अपने बड़े बड़े नेत्रों से किस के दर्शन की आशा में तृण छोड़ छोड़ के खड़े हो रहे हैं। खिड़कियों से स्त्री लोग किस के हेतु पुतली

सी एकाग्रचित्त हो रही हैं और मंगल का सब साज किस के हेतु सजा है। सुना है कि हम लोगों के महाराज कुमार आज इधर आने वाले हैं, फिर क्यों न इस भारतवर्ष के उद्यान में ऐसा आनन्द सागर उमगै। भारतवर्ष के निवासी लोगों को अब इस से विशेष और कौन आनन्द का दिन होगा और इस से बढ़ के अपने चित्त का उत्साह और अधीनता प्रगट करने का और कौन सा समय मिलेगा। कई सौ बरस से हम लोग चातक की भांति आसा लगाए थे कि वह भी कोई दिन ईश्वर दिखावैगा, जिस दिन हम अपने पालने वाले को इन नेत्रों से देखेंगे और अपना उत्साह और प्रीति प्रगट करेंगे। धन्य उस जगदीश्वर को जिस ने आज हमारे मनोर्थ पूर्ण करके हम को उस अपूर्ण निधि का दर्शन कराया जिस का दर्शन स्वप्न में भी दुर्लभ था। धन्य आज का दिन और धन्य यह घड़ी जिस में हमारे मनोर्थ के वृक्ष में फल लगा और राजकुंवर को हम लोगों ने अपने नेत्रों से देखा। इस समै हम लोग तन मन धन जो कुछ न्योछावर करैं थोड़ा है और जो आनन्द करैं सो बहुत नहीं है। ईश्वर करे जब तक फूलों में सुगंधि और चन्द्रमा में प्रकाश है और पद्मिनी नायक सूर्य्य जब तक उदयाचल पर उगता है और गंगा जमुना जब तक अमृत धारा बहती हैं तब तक इन के रूप-बल-तेज और राज्य की बृद्धि होय, जिस में हम लोग कल्प वृक्ष की छाया में सब मनोर्थ से पूर्ण हो कर सुखपूर्वक निवास करैं।

कवित्त

जनम लियो है महारानी कोख सागर तें
जामें तौ कलंक को न लेसहु लखायो है।
सुभट समूह साथ सोहत हैं तारागन
कुमुदहि तू न हिए हरख बढ़ायो है॥
चाहि रहे चाह सों चकोर ह्वै प्रजा के पुंज
बैरी तम निकर प्रकास तें नसायो है।
आनन्द असेस दीबे हेत हिन्द बीच आज
कुंवर प्रतापी नख तेस बनि आयो है॥1॥

कोकिल समान बोलि उठे हैं सुकवि सबै
कामदार भौंर से बधाई लै लै धाए हैं।
लागि उठी लाय बिरहीन की सी बैरिन कों
बौरि उठे हाकिम रसाल से सुहाए हैं॥
फूलि के सफल भे मनोरथ सबन ही के
नाचि उठे मोर से प्रजा के मन भाए हैं।
साजि कै समाज महारानी के कुंवर आजु
दीबे सुख साज रितुराज बनि आए हैं॥2॥

दोहा

अरी आज संभ्रम कहा जान परत कछु नाहिं।
बौरे से दौरे फिरत फूले अंगन माहिं ॥3॥
धावत इत उत प्रेम सों गावत हरख बढ़ाय।
आवत राजकुमार यह कहत सुनाय सुनाय ॥4॥
करत मनोरथ की लहर सागर मन समुदाय।
राजकुंवर मुख चन्द लखि, उमगि चल्यो अकुलाय ॥5॥

अध षटऋतु रूपक

वसन्त

आनन्द सों बौरी प्रजा, धाये मधुप समाज।
मन मयूर हरखित भए, राजकुंवर रितुराज ॥6॥

ग्रीष्म

तपत तरनि तिमि तेज अति, सोखत बैरि अपार।
जीवन में जीवन करत, ग्रीषम राजकुमार ॥7॥

वर्षा

प्रजा कृषक हरखित करत, बरसत सुख जल धार।
उमगावत मन नदिन कों, पावस राजकुमार ॥8॥

शरद

फूले सब जन मन कमल, नभ सम निरमल देस।
बिकसित जस की कैरवी, आया सरद नरेस ॥9॥

हेमन्त

मुरझावत रिपु बनज बन, अरिन कंपावत गात।
राजकुंवर हेमन्त बनि, आवत आज लखात ॥10॥

शिशिर

पीरे मुख बैरी परै, पिकन बधाई दीन।
सीरे उर सब जन भए, सिसिर कुमार नवीन ॥11॥

विनय

विनवत जुग प्रफुलित जलज, करि कलि कैक समान।
भुजा भुजा. की छांह मैं, देहु अभय पद दान ॥12॥

[ड्यूक ऑव एडिनबरा के सन 1869 ई. में भारत आगमन पर यह स्वागत पत्र लिखा गया था]

AN OFFERING OF FLOWERS

सुमनोञ्जलिः

श्रीमन्महाराजकुमार ड्यूक ऑफ एडिनबरा चरणकमले समर्पितः

To
HIS ROYAL HIGHNESS, THE DUKE OF EDINBURGH,
K.G., K.T., G.C.M.G., K.G.C.S.I.,

"किमासनन्ते गरुड़ासवाय किमूभूषणऽकौस्तुभभूषणाय।
लक्ष्मीकलत्राय किमस्ति देयं वागीशकिन्ते वचनीयमस्ति"

(निबन्धे)

By
HARISH CHANDRA

सन 1870 ई.

PREFACE*

The short stay of H.R.H. the Duke of Edinburgh at Benares prevented me from personally presenting his this 'Offering of flowers' on the occasion of his visit to this city. With the co-operation of some of my esteemed friends, I convened a meeting at my house on the 20th January and invited many respectable and learned Pundits and Gentlemen to attend it. The meeting was formally opened by me by reading the biography of the Royal Prince in Hindi, and in conclusion requesting the gentlemen present on the occasion to adopt suitable measures for the address. The Pundits of the city expressed their great satisfaction, and read individually some Shlokas (verses) Sanskrit expressing their heartfelt joy on the advent of the Royal Prince to this city. The verses are entered systematically into this book. The meeting then broke. The gentlemen present on the occasion evinced great joy and loyalty to the Royal Prince for which this small book containing the expressions of their sincere loyalty, is most respectfully dedicated to his Gracious feet.

Benares
10th March 1870

Harischandra.

Names of the gentle-men present on the occasion of the meeting held for presenting an address to H.R.H. the Duke of Edinburgh.

H.R.H. the Duke of Edinburgh.
Prof. Shri Bapu Deva Shastri F.R.A.S. and fellow Calcutta University

Shri Narayan Kavi.
Shri Hanuman Kavi.
Shri Hari Bajpai.

* इस सुमनोञ्जलि में सर्वश्री बापूदेव, राजाराम, बेचनराम, बस्तीराम बालशास्त्री, गोविन्ददेव, शीतल प्रसाद, ताराचरण, गंगाधर शास्त्री, रमापति, नृसिंह शास्त्री, ढुंढिराज, विश्वनाथ, विनायक शास्त्री और रामकृष्ण शास्त्री के संस्कृत श्लोक हैं। और नारायण और हनुमान कवि की हिन्दी कविताएं हैं।

Shri Raja Ram Shastri	Rai Narsingh Das
Shri Basti Ram Shastri	Rai Jaya Krishna Das
Shri Govind Deva Shastri	Rai Lakshmi Chandra
Shri Bal Govind	Rai Murari Das
Shri Seetal Prasad	Rai Bal Krishna Das
Shri Bechan Ram	Rai Radha Krishna Das
Shri Krishna Shastri	Babu Vishweshwar Das
Shri Dhundhi Raj Dharmadhikari	Babu Madho Das
Shri Ramapati Dube	Babu Madhusudan Das
Shri Ram Krishna Pattburdhana	Babu Gokul Chandra
Shri Shiva Ram Govind Ranade	Babu Shama Das
	Babu Loka Natha Moitre
	Munshi Sankata Prasad
	Molvi Asharaf Ali Khan
	Babu Balgovinda

श्रीः

स्वस्तिश्रीमन्महामहिमानिजप्रतापदावानलसमूलचर्वितसर्वोर्वीपत्यखर्व महाटवीवर्गायाः समस्त सामन्तचक्रचूडामणिशरच्चन्द्रचन्द्रिकाल्हादित पादकुमुदाया अपूर्वविद्योद्योतखद्योतति रस्कृताज्ञजनमानसवितकार्याः श्री ५मद्विजयिनीदेव्याः सततपरिशीलितविविधविद्या विलासः शान्त्यादिसुन्दरगुणगणैरूपशोभमानोनन्दनन्दनइवानन्दनिकरः नन्दनाधिपतिः श्रीमान् ड्यूकाभिधानोनन्दनोनन्दनवननिभानन्दवननिवासिनांमन्दाकिनीतीरवासिनां जनानां मानसान्यानन्दयितुमिव श्रीविश्वेशपुरीमाजगाम। ततस्तदागमनसमुत्पादितानन्दकन्द-कदम्बाडकरितमहोत्सवप्रोत्साहितमानसेन मया ततन्माहितशास्त्रप्रवीणतासमा सादितविविधबिरुदावलीसंमानितानेकविद्वज्जनसमाजविराजिता विविधगुणि गणागणितगाणितिकशोभमाना स्वस्वकुलोचितसदाचारप्रचारसंपादितधनधान्यवदान्य-धन्यधनिकसमलंकृता सभा सभाजिता। तस्यां च प्रथमं परमप्राचीनसमीचीन समय-समुचितेतिहासविचारोविद्वदोचरीभूय परमां चित्वमत्कृतिमावहति स्म, ततः श्रीमन्महाराज्ञीतनयप्रचलित कीर्तिकलानिधिवर्द्धितापूर्वदर्शनसंजातकौतुकाब्धिविदुषां मानसेवकाशमप्राप्तय काव्यव्याजेन प्रकाशमानोनिखिलजनमनः संधानानन्दयांचकार। तृतीयमागे च तस्यां विविधपरिश्रमहरः सकलजनमनोनुरंजनकरोवाद्यवादन प्रचारस्तामलंचकार।

हत्थं च सभासदां परमप्रमदप्रदायी यः कतिपयकालकलाकदम्बो व्यत्यैत्तत्सं बन्धीनि पंडितवरपरिकल्पितकाव्यसुमनांस्येकीकृत्य तदञ्जलिं श्री५युतमहाराज्ञीकुमार चरणारविन्दयोः समर्पयितुमुत्सहते।

श्रीहरिश्चन्द्रगुप्तः

काशी में ग्रहण के हित महाराज कुमार के आने के हेतु

कवित्त

वाको जन्म जल याको रानी कूख सागर तें
वह तो कलंकी यामें छींटहू न आई है।
वह नित छटै यह बाढ़े दिन दिन
यह बिरही दुखद यह जग सुखदाई है।
जानि अधिकाई सब भांति राजपुत्र ही मैं
गहन के मिस यह मति उपजाई है।
देखि आजु उदित प्रकासमान भूमि चन्द
नभ ससि लाजि मुख कालिमा लगाई है।

[रचनाकाल—सन् 1870 ई.]

प्रिंस ऑफ वेल्स के पीड़ित होने पर कविता

जय जय जगदाधार प्रभु, जग व्यापक जगदीस।
जय जय प्रनतारति हरन, जय सहस्र पद सीस ॥1॥
करुना वरुनालय जयति, जय जय परम कृपाल।
सुद्ध सच्चिदानन्द घन; जय कालहु के काल ॥2॥
सब समर्थ जय जयति प्रभु, पूर्ण ब्रह्म भगवान।
जयति दयामय दीन प्रिय, क्षमा सिन्धु जन जान ॥3॥
हम हैं भारत की प्रजा, सब विधि हीन मलीन।
तुम सों यह बिनती करत, दया करहु लखि दीन ॥4॥
हाथ जोर सिर नाइ कै, दांत तरे तृन राखि।
परम नम्र ह्वै कहत हैं, दीन बचन अति माखि ॥5॥
विनवत हाथ उठाय कै, दीजै श्री भगवान।
जुबराजहिं गत रुज करौ, देहु अभय को दान ॥6॥
तिनके दुख सों सब दुखी, नर नारिन के बृन्द।
तासों तुरतहि रोग हरि, तिन कहं करहु अनन्द ॥7॥
जिनकी माता सब प्रजा गन की जीवन प्रान।
तिनहिं निरोगी कीजिए, यह बिनवत भगवान ॥8॥
बेग सुनैं हम कान सों, प्रिंस भए आनन्द।
परम दीन ह्वै जोरि कर, यह बिनवत हरिचन्द ॥9॥

[नवम्बर 1871 ई. में प्रिंस ऑफ वेल्स टाइफायड ज्वर से पीड़ित हो गए थे। भारतेन्दु ने यह कविता उसी समय लिखी थी।]

मुंह दिखावनी

[राजकुमार श्री ड्यूक ऑफ एडिनबरा की नवबधू को]

आजु अतिहि आनन्द भयो बाढ़्यो परम उछाह।
राज दुलारी सों सुनत राजकुंवर को व्याह ॥1॥
बसे राज घर सुख भयो मिटे सकल दुःख दुन्द।
मेरी बहू सुलच्छिनी प्रजन दियो आनन्द ॥2॥
द्वार बंधाई तोरनै मनिगन मुकता माल।
धाई धाई फिरत हैं कहत बधाई बाल ॥3॥
विद्या लक्ष्मी भूमि अरु तुव प्यारी तरवारि।
राज कुंवर! ये सौत लखि मोहीं हारि निहारि ॥4॥
"देह दुलहिया की बढ़ैं ज्यौं ज्यौं जोवन जोति।
त्यौं त्यौं लखि सौतें सबै बदन मलिन दुति होति" ॥5॥
मानौ मुख दिखरावनी दुलहिन करि अनुराग।
सास सदन मन ललनहूं सौतिन दियो सुहाग ॥6॥
महारानी विक्टोरिया! धन धन तुमरो भाग।
लख्यौ वधू मुख चंद तुम पूर्यौ भाग सुहाग ॥7॥
रूस रूस सब के हिये भय अति ही हो जौन।
वधू! तुम्हारे ब्याह सों उड़्यौ फूस सो तौन ॥8॥
धन यह संबत मास पख धन तिथि धन यह बार।
धन्य घरी छिन लगन जेहिं ब्याहे राजकुमार ॥9॥
आए मिलि सब प्रजा गन नजर देन तुव धाम।
ठाढ़े सनमुख देखिए नवत जुहारत नाम ॥10॥
कोउ मनि मानिक मुकुत कोउ कोऊ गल को हार।
कनक रौप्य महि फूल फल लै लै करत जुहार ॥11॥
तब हम भारत की प्रजा मिलिकै सहिन उछाह।
लाए 'आशा' दासिका लीजै एहि नर नाह ॥12॥

सेवा मैं एहि राखियो नवल बधू के नाथ।
यहू भाग निज मानिकै छनक न तजिहै साथ ॥13॥
रूस मिले सों रेल के आगम गमन प्रचार।
घन जन बल व्यवहारने छोड़ी यह सुकुमार ॥14॥
तासों तुम्हरे कर कमल सौंपत एहि नर नाह।
जब लौं जीवें कीजियौ तब लौं कुंवर! निबाह ॥15॥
यह पाली सब प्रजन अति करि बहु लाह उमाह।
अति सुकुमारी लाड़िली सौंपत तोहि नर नाह ॥16॥
यह बाहर कहुं नहिं भई सही न गरमी सीत।
आदर दै कै राखियो करियो नित चित प्रीत ॥17॥
जौ यासौं जिय नहिं रमै वा कछु जिय अकुलाय।
सौति बधू वा एहि लखै तौ हम कहत उपाय ॥18॥
जब हम सब मिलि एक मत ह्वै तोहिं करहिं प्रनाम।
फेरि दीजियो तब हमैं दै कछु और इनाम ॥19॥
जब लौं धरनी सेस सिर जब लौं सूरज चन्द।
तब लौं जननी सह जियो राजकुंवर सानन्द ॥20॥

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के फरवरी सन 1874 ई. के अंक में प्रकाशित]

भारत भिक्षा

अहो आज का सुनि परत भारत भूमि मंझार।
चहूं ओर आनन्द धुनि कहा होत बहु बार॥1॥
ब्रिटिश सुशासित भूमि मैं आनन्द उमगे जात।
सबै कहत जय आज क्यौं यह नहिं जान्यो जात॥2॥
ब्रिटिश राज चिन्हन सजी नगरन अटा अटारि।
धुजा पताका फरहरहिं सहसन आज संवारि॥3॥
गंग जमुन गोदावरी पथ ह्वै ह्वै बहु जान।
ख्यौं सब आवत हैं सजे देव विमान समान॥4॥
घर बाहर इत उत सबै सजे वसन मनि साज।
चातक और चकोर से खरे अरे क्यौं आज॥5॥

शाखा

आवत मारत आज कुंअर बृटनहि सुखदानी।
सुनहु न गगनहिं भेदि होत जै जै धुनि बानी॥6॥
जै जै जै बिजयिनी जयति भारत महरानी।
जै राजागन मुकुट मनी धन बल गुन खानी॥7॥
जाकी कृपा कटाक्ष चहत सिगरे राजा गन।
जा पद भारत भुवन लुठत ह्वै बस कम्पित मन॥8॥
आवत सोई बृटन कुंअर जल पथ सुनि एहि छन।
ठाढ़ो भारत मग में निरखत प्रेम पुलक तन॥9॥

पूर्न कोरस

मृदंगादि बाजे बजाओ बजाओ।
सितारादि यन्त्रै सुनाओ सुनाओ॥

अरे ताल दै लै बढ़ाओ बढ़ाओ।
बधाई सबै धाइ गाओ सुनाओ॥
कहां हैं रबानी मृदंगी सितारी।
कहां हैं गवैये कहां नृत्यकारी।
कहां आज मौलाबकस वाजपेई।
कहां आज हैं क्षेत्रमोहन गुसाईं॥
कहां भाट नाटकपती स्वांगधारी।
कहां नट गुनी चट करैं सब तयारी।
कहो रागिनी आज भारी जमावैं।
मिले एक लै मैं सु गावैं बजावैं॥
कहां भांड़ कत्थक छिपे हैं बुलाओ।
मुबारक कहाओ बधाई गवाओ॥
कहां हैं सबै सुन्दरी वार नारी।
कहो पेशवाजैं सजैं आज भारी।
लगै दून मैं आज आवाज प्यारी।
सरंगी बजे राग रंगी संवारी॥
छिड़ै भैरवी सारंगौ सिन्ध काफी।
जमै जोगिया पूरिया औ धनाश्री।
रहै कान्हरा देस सोरठ बिहागा।
कलिंगा किदारा परज आदि रागा॥
मिले तान लै राग रंगै जमाओ।
मिले मान संगीत भावै दिखाओ।
रहै लाग डांटो उरप तिर्प संगा।
रहै तत्थेई तत्थेई नृत्य रंगा॥
दिखाओ कुमारै कला आज धाए।
बड़े भाग सों पाहुने गेह आए॥10॥

आरम्भ

कहां सबै राजा कुंवर और अमीर नवाब।
आज राज दरबार में हाजिर होहु सिताब॥11॥
सिरन झुकाइ सलाम करि मुजरा करहु जुहारि।
जटितहु जूतन त्यागि कै स्वच्छ बूट पग धारि॥12॥
जानु सुपानि नवाइ कै पद पै धरि उसनीस।
चूमि चूमि वर अभय प्रद कर जुग नावहु सीस॥13॥

परम माक्ष फल राज पद परसन जीवन माहिं।
बृटन देवता राज सुत पद परसहु चित चाहि॥14॥
कित हुलकर कित सेंधिया कित बेगम भूपाल।
कित काशीपति कित रहे सिक्ख राज पटियाल॥15॥
कित लायल ईजानगर मानी नृप मेवार।
कितै जोधपुर जैपुरी त्रावंकोर कछार॥16॥
जाट भरतपुर धौलपुर रानी कित तुम जाम।
कित मुहम्मदिन के पती दक्षिन राज निजाम॥17॥
धाओ धाओ बेग सब पहिरि पहिरि पौसाक।
पगरी मोती माल गल साजि साजि इक ताक॥18॥
गले बांधि इस्टार सब जटित हीर मनि कोर।
धावहु धावहु दौरि कै कलकत्ता की ओर॥19॥
चढ़ि तुरन्त बग्गीन पर धावहु पाछे लागि।
उडुपति संग उडुगन सरिस नृप सुख सोभा पागि॥20॥
राजभेंट सबही करौ अहो अमीर नवाब।
हाजिर ह्वै झुकि झुकि करौ सबै सलाम अदाब॥21॥

शाखा

राजसिंह छूटे सबै करि निज देस उजार।
सेवत हित नृप बर कुंअर धाए बांधि कतार॥22॥
तजि अफगानिस्तान को धाए पुष्ट पठान।
हिमगिरि को दै पीठ किय कश्मीरेस पयान॥23॥
नाभा पटियाला अमृतसर जम्बू अस्थान।
कच्छ सिन्धु गुजरात मेवाड़रु राजपुतान॥24॥
कोल्हापुर ईजानगर काशी अरु इन्दौर।
धाए नृप एक साथ सब करि सूनो निज ठौर॥25॥
लखि कुल दीपक राज सुत धाए भूप पतंग।
रुके न गिरिविर नगर नद समुद जमुन जल गंग॥26॥
कहां पांडु जिन हस्तिनापुर मधि कीनौ जाग।
राजसूय सांचो लखैं बृटन रचित बल आग॥27॥

पूर्ण कोरस

अति सुन्दर मोहनी सजायो।
आज लगत कलकता सुहायो॥

द्वार द्वार पर वन्दन माला।
रंग रंग बसन फूल दल जाला॥28॥
कदली खम्भ पात थरहरहीं।
पद भय हिल हिलि मनु मन हरहीं॥
फर फर फहरत धुजा पताका।
चम चम चमकत कलस वलाका॥29॥
अटा अटारी बहार मोखन।
छज्जै छातन गोख झरोखन॥
दीपहि दीपक परत लखाई।
मनु नभ तें तारावलि आई॥30॥
दिन को रवि अकास लखि लज्जित।
मनहुं हीर गिरि खंडव सज्जित॥
छुटत अतसबाजी रंग रंगी।
गगन प्रकट मनु अनल फिरंगी॥31॥
नव तारे प्रगटहिं नसि जाहीं।
उड़त बान इमि गगन लखाहीं॥
गंज सितारनि की छबि भारी।
नभ मनु तेजोमय फुलवारी॥32॥
धन कलकत्ता कलि रजधानी।
जेहि लखि कै सुरपुरी लजानी॥
चलत कुंअर चढ़ि चपल तुरंगनि।
संग सोभित दल बल चतुरंगनि॥33॥
नृप गन धावत पाछे पाछे।
अश्व चढ़े मनि काछे आछे॥
ताजन पर कलंगी थरहरई।
नृपगन दल दल सोभा करई॥34॥
चलहिं नगर दरसन हित धाई।
झमक झमक बाजने बजाई॥
बजत बृटिस भेरी घहराई।
कादर मन सुनि सुनि थहराई॥35॥
रूल बृटानिय रूल दि बेबस।
ताल तरङ्ग बजत अति रन रस॥

आरम्भ

उठहु उठहु भारत जननि लेहु कुंअर भरि गोद।
आज जगे तुव भाग फिर मानहुं मन अति मोद॥36॥
करि आदर मृदु बैन कहि बहु बिधि देहु असीस।
चिर दिन लौं सिसु मुख लख्यौ नहिं तुम सोइ अवनीस॥37॥
सेज छांड़ि माता उठहु उदित अरुन तुव देस।
मिटे अमंगल तिमिर सब राजकुमार प्रबेस॥38॥
मति रोओ रोओ न तुम जननी व्याकुल होय।
उठहु उठहु धीरज धरहु लेहु कुंअर मुख जोय॥39॥
तुम दुखिया बहु दिनन की सदा अन्य आधीन।
सदा और के आसरे रहो दीन मन खीन॥40॥
तुम अबला हत भागिनी सदा सनाथ दयाल।
जोग भजन भूली रहत सूधे जिय की बाल॥41॥
सो दुःख तुमरो देखि महरानी करुना धारि।
निज प्रानोपम पुत्र तुव ढिग पठयो मनुहारि॥42॥
रिपु पद के बहु चिन्ह सब कुंअरहिं देहु गिनाय।
काढ़ि करेजो आपनो देहु न सुतहिं दिखाय॥43॥
सदा अनादर जो सह्यो सह्यो कठिन रिपु लात।
सो छत देहु दिखाय अब करहु कुंअर सों बात॥44॥
उठहु फेर भारत जननि ह्वै प्रसन्न इक बार।
लेहु गोद करि नृप कुंअर भयो प्रात उंजियार॥45॥

शाखा

सुनत सेज तजि भारत माई।
उठी तुरन्तहि जिय अकुलाई॥
निविड़ केस दोउ कर निरुआरी।
पीत बदन की क्रांति पसारी॥46॥
भरे नेत्र अंसुअन जल धारा।
लै उसास यह बचन उचारा॥
क्यों आवत इत नृपति कुमारा।
भारत में छायो अंधियारा॥47॥
कहा यहां अब लखिबे जोगू।
अब नाहिंन इत वे सब लोगू॥

जिन के भय कम्पत संसारा।
सब जग जिन को तेज पसारा॥48॥
रहे शास्त्र के जब आलोचन।
रहे सबै जब इत षट दरसन॥
भारत बिधि बिद्या बहु जोगू।
नहिं अब इत केवल है सोगू॥49॥
सो अमूल्य अब लोग इतै नहिं।
कहा कुंअर लखिहैं भारत महिं॥
रहै जबै मनि कीट सकुंडल।
रह्यो दंड जब प्रबल अखंडल॥50॥
रह्यो रुधिर जब आरज सीसा।
ज्वलित अनल समान अवनीसा॥
साहस बल इन सम कोउ नाहीं।
जबै रह्यौ महि मंडल माहीं॥51॥
जब मोहिं ये कहि जननि पुकारै।
दसहू दिसि धुनि गरज न पारै॥
तब मैं रही जगत की माता।
अब मेरी जग मैं कह बाता॥52॥
लखिहैं का कुमार अब धाई।
गोद बैठि हंसिहैं इत आई॥
जब पुकारिहैं कहि मोहिं माता।
आनन्द सों भरिहौं सब गाता॥53॥
युरप अमरिका इहिहि सिहाहीं।
भारत भाग सरिस कोउ नाहीं॥
पूर्व सखी मम रोम पिआरी।
मरिकै बांचि उठी फिरि बारी॥54॥
ग्रीसहु पुनि निज प्रानन पायो।
हाय अकेली हमहिं बनायो॥
भग्न दंड कम्पित कर धारी।
कब लौं ठाढ़ी रहौं दुखारी॥55॥
भग्न सकल भूषन तन साजी।
दास जननि कहवैहौं लाजी॥
मेरे भागन जो तन हारे।
थाप्यो पद मम सीस उघारे॥56॥

सुनि बोली आरत जननि आये कहा कुमार।
आये किन आओ निकट पुत्र जननि अंकवार॥57॥
रहत निरन्तर अन्तरहि कठिन पराजय पीर।
आवो सुत मम हृदय लगि सीतल करहु सरीर॥58॥

लेहु माय कहि मोहिं पुकारी।
सोइ भावन जिमि निज महतारी॥
सत संबत लौं रह्यौं अधूरी।
करौ न आज भाव सोइ पूरी॥59॥
अतिहि अकिंचन भारत बासा।
अतिहि छीन हिन्दुन की आसा॥
भूलि बृटिश बल धारि सनेहू।
भारत सुतन गोद करि लेहु॥60॥
कहि कृष्ण इन्हें मति तुच्छ करौ।
नहि कीटहु तुच्छ बिचार धरौ॥
इनहूं कहं जीवन देह दया।
इनहूं कहं ज्ञान सनेह मया॥61॥
इनहूं कहं लाज तृषा ममता।
इनहूं कहं क्रोध क्षुधा समता॥
इनहूं तन सोनित हाड़ तुचा।
इनहूं कहं आखिर ईस रचा॥62॥
कबहुं कबहुं अबहूं सोई उदय होत चित आस।
इनसों करहु न कुंअर तुम कबहूं जीय उदास॥63॥
सोई परम पवित्र भुव आये अहो कुमार।
ताहि न समझहु तुच्छ तुम सो संबंध विचार॥64॥
पालत पच्छिहु जो कुंअर करि पिंजरन महं बन्द।
ताहू कहं सुख देत नर जामें रहै अनन्द॥65॥
सोई सुख लहि घरहु में गावत बिबिध बिहंग।
जतनहिं सों बस होत हैं बन के मत्त मतंग॥66॥
कोकिल स्वर सब जग सुखी बायस शब्द उदास।
यह जग कों कह देत है वह कह लेत निकास॥67॥
केवल यह भाखै मधुर वह कठोर रव नित्त।
तासों जग चाहै सबै मधुर सरल बंस चित्त॥68॥

ह्व तुव जननी की निज दासी।
दासी सुत मम भूमि निवासी॥
तिनको सब दुःख कुंअर छुड़ावो।
दासी की सब आस पुरावो॥69॥
मेटहु भय कर अभय दिखाई।
हरहु बिपति बच मधुर सुनाई॥
बृटिश सिंह के बदन कराला।
लखि न सकत भयभीत भुआला॥70॥
फाटत हिय जिय थर थर कंपत।
तेज देखिकै दृग जुग झम्पत॥
कहि न सकत मन को दुःख भारी।
झरत नैन जुग अबिरल बारी॥71॥
सौदागर मेलुआ जहाजी।
गोरा धरमपती जग काजी॥
सबहिं राज सम पूजन करहीं।
सबको मुख देखत ही डरहीं॥72॥
तेज चंड सो हरहु कुमारा।
पोंछहु मम दुःख को जल धारा॥
लै भारत वासी मम सुत ढिग।
बैठहु छिनक लखहु छबि भरि दृग॥73॥
लखहु लखहु सुत आनन्द भारी।
कैसो छायो भुवन मंझारी॥
तुमहिं देखि सब पुलकित गाता।
गद्‌गद गल कहि सकहि न बाता॥74॥
कहहि धन्य यह रैन धन्य दिन।
धन धन घरी आज धन पल छिन॥
प्रेम अश्रु जल बहहि नैन तें।
जिअहु कुंअर सब कहहिं बैन तें॥75॥
फिरहु कुंअर जब जननी पासा।
कहियो पूरहिं मम मन आसा॥
मिथ्या नहिं कछु याके माहीं।
राजभक्त भारत सम नाहीं॥76॥
लेहिं प्रात उठिकै तुव नामा।
करहिं चित्र तव देखि प्रनामा॥

तुमरे सुख सों सब सुख पावैं।
छल तजि सदा तुवहि गुन गावैं॥77॥

यह कहि भारत नैन भरि आंचर बदन छिपाय।
दै असीस जिय सों नृपहि भई अदृश्य सुहाय॥78॥
बजे बृटिश डंका सघन गहगह शब्द अपार।
जय रानी विक्टोरिया जै जुवराज कुमार॥79॥

पूर्ण कोरस

उदयो भानु है आजु या देस माहीं।
रह्यो दुःख को लेसहू सेस नाहीं॥
महाराज अलवर्त्त या भूमि आये।
अरे लोग धावो बजावो बधाये॥80॥
छुटीं तोप फहरीं धुजा गरजे गहकि निसान।
भुव मंडल खलभल भयो राजकुमार प्रयान॥81॥

[यह कविता सन 1875 ई. की हरिश्चन्द्र चन्द्रिका (खंड 2, संख्या 8-12) में छपी है। सम्पादक की नोट के अनुसार इस पर बाबू हेमचन्द बनर्जी की कविता की छाया है। इस कविता के कुछ अंश और विजयिनी विजय पताका या वैजयन्ती के कुछ अंश समान हैं। यहां उन अंशों को निकाल दिया गया है जो वैजयन्ती में मिलते हैं।]

मानसोपायन

अग्रजोपम स्नेह पूजास्पद प्रिय कुमार,

जब आप से कुछ भी कहने की इच्छा करते हैं तो चित्त में कैसे बिबिध भाव उत्पन्न होते हैं। कभी भारतवर्ष के पुरावृत्त के प्रारम्भ काल से आज तक जो बड़े बड़े दृश्य यहां बीते हैं और जो महा युद्ध, महा शोभा और महा दुर्दशा भारतवर्ष की हुई है, उन के चित्र नेत्र के सामने लिख जाते हैं। कभी हिन्दुओं की दीन दशा पर करुणा उत्पन्न होती है, कभी स्नेह कहता है कि हां यही अवसर है, खूब जी खोल कर जो कुछ हृदय में बहुत काल से भाव और उद्गार संचित हैं, उन को प्रकाश करो। पर साथ ही राजभक्ति और आपका प्रताप कहता है कि खबरदार हद से आगे न बढ़ना, जो कुछ बिनती करना बड़ी नम्रता और प्रमाण के साथ। इधर नई रोशनी के शिक्षित युवक कहते हैं--'दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो'। सुनते सुनते जी थक गया, कोई मस्तिष्क की बात कहो। उधर प्राचीन लोग कहते हैं हमारे यहां तो 'सर्व्वदिवमयो नृपः' लिखा ही है जितना बन सकै इन का आदर करो। कितने यहां के निवासी ऐसे मूढ़ हैं कि इन बातों को अब तक जानते ही नहीं। जानें कहां से हजारों बरस से राज सुख से वंचित हैं। आज तक ऐसा शुभ संयोग आया ही न था कि आप सा सुखद स्वामी इन के नेत्र गोचर हों। इसी से तो आप के आगमन से हम लोगों को क्या आनन्द हुआ है, वह कौन जान सकता है। प्रिय! हम सब स्वभावसिद्ध राजभक्त हैं। बिचारे छोटे पद के अंगरेज़ों को हमारे चित्त की क्या खबर है, ये अपनी ही तीन छटांक पकाने जानते हैं। अतएव दोनों प्रजा एक रस नहीं हो जाती; आप दूर बसे, हमारा जी कोई देखनेवाला नहीं, बस छुट्टी हुई। आप के आगमन के केवल स्मरण से हृदय गद्गद और नेत्र अश्रुपूर्ण हमीं लोगों के हो जाते हैं और सहज में आप पर प्राण न्यौछावर करने वाले हमीं लोग हैं, क्यौंकि राजभक्ति भरतखंड की मिट्टी का सहज गुण और कर्त्तव्य धर्म्म है, पर कोई कलेजा खोल कर देखनेवाला नहीं। जाने दो इन पचड़ों से क्या काम। जब आप का आगमन सुना तभी से आप के यश रूपी कीर्तिस्तम्भ को आप के शुभागमन के स्मरणार्थ स्थापन करने की इच्छा थी, पर आधि व्याधि से वह सुयोग तब न बना। यद्यपि कविता कलाप तो उसी समय समाचार पत्रों में सूचना देकर एकत्र किया था, परन्तु उनका प्रकाश न भया

था सो अब जब कि हम दोनों की अवलम्ब अम्ब श्रीमती महारानी ने भारत राजराजेश्वरी का पद ग्रहण किया और इस महत् मान से भारतवर्ष को अपनी अपार कृपा से सहज कृतकृत्य किया तो इसी शुभ मंगल अवसर पर यह पुस्तक प्रकाश कर के हम भी आप के कोमल चरणों में समर्पित करते हैं, कृपापूर्व्वक स्वीकार कीजिए और इस को कविता नहीं वरञ्च अपनी प्रजा के चित्त के पूर्ण उद्‌गार और समुच्छ्वास समझिए। जिस तरह आप और अनेक कौतुक देखते हैं, कृपापूर्वक इस प्रजा के चित्त रूपी आतशी शीशे से (क्यौंकि यह आप के वियोग और अपनी दुर्दशा से संतप्त हो रहा है) बनी हुई सैरबीन की भी सैर कीजिए और उस परिश्रम को क्षमा कीजिए जो इस के पढ़ने में हो। क्यौंकि हम ने तो चाहा कि थोड़ा ही लिखैं और यह बहुत थोड़ा ही है पर आपको श्रम देने को बहुत है।

[जनवरी सन 1877 ई.]

हरिश्चन्द्र

आओ आओ हे जुवराज।
धन धन भाग हमारे जागे पूरे सब मन काज॥
कहं हम कहं तुम कहं यह धन दिन कहं यह सुभ संयोग।
कहं हतभाग भूमि भारत की कहं तुम से नृप लोग॥
बहुत दिनन की सूखी, डाढ़ी, दीना भारत भूमि।
लहि है अमृत वृष्टि सो आनन्द तुव पद पंकज चूमि॥
जेहि दलमल्यौ प्रबल दल लैकै बहु बिधि जवन नरेस।
नास्यौ धरम करम सबहिन के मारि उजार्‌यौ देस॥
पृथीराज के मरें लख्यौ नहिं सो सुख कबहूं नैन।
तरसत प्रजा सुनन को नित ही निज स्वामी के बैन॥
जदपि जवनगन राज कियो इतही बसिकै सह साज।
पै तिनको निज करि नहिं जान्यौ कबहूं हिन्दु समाज॥
अकबर करिकै बुद्धिमता कछु सो मेट्यौ सन्देह।
सोउ दारा सिकोह लौं निबही औरंग डारी खेह॥
औरहु औरंगजेब दियो दुःख सब बिधि धरम नसाय।
निज कुल की मरजाद मान बल बुधिहू साथ घटाय॥
ता दिन सों दुरलभ राजा सुख इनहिं इकन्त निवास।
राजभक्ति उत्साहादिक को इन कहं नहिं अभ्यास॥
जदपि राज तुव कुल को इत बहु दिन सों बरंसत छेम।
तदपि राज दरसन बिनु नहिं नृप प्रजा माहिं कछु प्रेम॥

सो अभाव सब तुव आवन सों मिट्यौ आज महराज।
पूर्‌यौ प्रेम देस देसन में प्रमुदित प्रजा समाज॥
आवहु प्रिय नैनन मग बैठो हिय मैं लेहुं छिपाय।
जाहु न फिरि तजि भारत को तुम हम सों नेह लगाय॥

गुजराती भाषा
(गरबी हरिश्चन्द्रकृत)

आवो आवो भारत राज भारत जोवाने।
दई दरसन दुःख एनूं जनम जनमनो खोवाने॥
ज्यम चन्द्रोदक जोई चकोर जिय राचे रे।
ज्यम नव घन आतां लखी मोर बन नाचे रे॥
तेहूं भारतवासी जनो तवागम चाहे जी।
लखि मुख ससि राजकुमार मुदित मन माहे जी॥
आवो आवो प्यारा राजकुमार नई दऊं जावाने।
बाला भारत मां सुख बसो सनेह बधावाने॥
नई भियूं प्रानप्रिय आजे अरज करूं बोलीने।
देऊं आज लखाड़ी तमने हिरदो खोलीने॥
म्हारा भारतवासी अनाथ नाथ बने नाथे जी।
तेथी कोंवर बिराजे अइज अम्हारे साथे जी॥
ज्यारे जवन जलधि जले प्रथीराज रवि नास्यौ रे।
आजे त्यार थकी नहीं भारत तेज प्रकास्यौ रे॥
ते तुव पद नख ससि किरिणे बाणो वायो जी।
फरो फस्यो भाग्य भारत नां आनन्द छायो जी॥
बाला दीठ्यौ नव मुखचन्द कामणगारा नैणावे।
वारी श्रवण पड्या श्रवणे तब अमृत वैणावे॥
आजे उमग्यौ आनन्द रस सुख चारे पासे छायो छे।
तेथी तब जस परम पवित्र कविये गायो छे॥

सूचना—मानसोपायन संग्रह है। इसमें निम्नलिखित सज्जनों की कविता प्रकाशित हुई थी—

श्री बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन हिन्दी 2 सवैया 24 दोहे-सोरठे
श्री रामराज हिन्दी 19 दोहे-सोरठे
श्री कल्लूजी हिन्दी 3 दोहे-सोरठे
श्रीः लालबिहारी शुक्ल हिन्दी 2 कवित्त

श्री नारायण कवि हिन्दी 1 कुंडलिया 7 दोहे-सोरठे

श्री लोकनाथ शर्मा हिन्दी 10 दोहे-सोरठे

श्री कमला प्रसाद मुं. हिन्दी 1 दो. 7 कवित्त, छप्पय, सवैया

श्री सन्त लाल हिन्दी 9 छप्पय

श्री ब्रजचन्द्र हिन्दी 10 दोहे

श्री सन्तोष सिंह शर्मा पंजाबी 24 दोहे, 5 कवित्त

श्री दामोदर शास्त्री महाराष्ट्री 7 पद

पं. बापूदेव शास्त्री, पं. सखाराम भट्ट, पं. वेंकटेश शास्त्री, पं. विष्णुदत्त, पं. राजाराम गोरे, पं. कैलाशचन्द्र शिरोमणि, पं. बालकृष्ण भट्ट, पं. गदाधर शर्मा मालवीय, पं. आबा शास्त्री हल्दीकर, पं. बिहारी शर्मा चतुर्वेदी, पं. गोपाल शर्मा, पं. लक्ष्मीनाथ द्रविड़, पं. रामचन्द्र शास्त्री, पं. रामशरण त्रिपाठी, पं. रामचन्द्र, पं. अनन्तराम भट्ट, पं. चित्रधर मैथिल, पं. गोविन्द शर्मा, पं. माधव राम, पं. भवानीप्रसाद, पं. रामप्रसाद मिश्र, पं. गोविन्द मिश्र, पं. श्रीधर मैथिल, पं. शालिग्राम, पं. हरिनाथ द्विवेदी, गोस्वामी रामगोपाल शर्मा, पं. ईश्वरदत्त, पं. दामोदर शास्त्री, पं. रामकृष्ण पटवर्धन, पं. कान्तानाथ भट्ट, पं. शिवनारायण शर्मा ओझा, पं. विश्वनाथ शर्मा, पं. गोविन्द भरद्वाज, पं. राम ब्रह्म शास्त्री, पं. विश्वनाथ शास्त्री, पं. परमेश्वर मैथिल, नारायण पंडित, पं. विजयनाथ, पं. नन्दकुमार शर्मा, पं. सोहन शर्मा, पं. भद्दू शास्त्री अष्टपुत्र, पं. विश्वेश्वरनाथ, पं. उदयानन्द शर्मा, पं. राजेश्वर द्रविड़, पं. केशव शास्त्री पर्वतीय, पं. काशीनाथ भट्ट, पं. बापू शर्मा, पं. शीतला प्रसाद, पं. गणेशदत्त, पं. बस्तीराम द्विवेदी, पं. दामोदर भरद्वाज, पं. शिवकुमार मिश्र, पं. गंगाधर शास्त्री तैलंग, पं. रामकृष्ण पटवर्धन, पं. राजाराम मिश्र, पं. सरयूप्रसाद, पं. शीतलाप्रसाद त्रिपाठी, श्री मकरध्वज सिंह, पं. कन्हैयालाल पांडेय, पं. बेचनराम त्रिपाठी, पं. राधाकृष्ण, पं. कालीप्रसाद शिरोमणि, पं. लक्ष्मीनाथ कवि, पं. माधोदास और पं. राधाकृष्ण ने संस्कृत में श्लोक लिखे थे, जो 31 (इकतीस) पृष्ठों में छपे थे।

इसके अनन्तर सोलह पृष्ठों में तालिब, अहकर, सन्तलाल हसन, नज्म, अमीर और ज़िया की उर्दू, 52 पृष्ठों में बंगला, 4 पृष्ठों में अंग्रेजी और 8 पृष्ठों में तैलगू आदि भाषाओं की कविताएं उक्त अवसर के लिए लिखी हुई संगृहीत हैं। सन 1876 ई. में प्रिंस आव वेल्स ने काशी में अस्पताल की नींव डाली थी। उस पर तीन तारीखें भी उर्दू में हैं और अमीर ने बाबू हरिश्चन्द्र की प्रशंसा भी मुसद्दस के अन्त में की है।

[प्रिंस ऑफ वेल्स ने जिस अस्पताल की नींव डाली थी उसका नाम किंग एडवर्ड हास्पिटल रखा गया था। यही अस्पताल आगे चलकर शिवप्रसाद गुप्त अस्पताल के नाम से जाना गया। आजकल यह अस्पताल बनारस का जिला अस्पताल है।]

मनोमुकुल माला

सन 1877 ई.

मनोमुकुल माला

अर्थात्

राजराजेश्वरी आर्य्येश्वरी भारताधीश्वरी श्री 108 विजयिनी देवी के चरण तामरस में हरिश्चन्द्र द्वारा समर्पित वाक्य पुष्पोहार।

अथ इंगलैंडी पारसीक वर्ण चित्रिता
राजराजेश्वरी आशीः।

Gवहु Eस अCस बल हरहु प्रजन की Pr।
सरU जमुना गंग मैं जब लौं थिर जग नीर ॥1॥
J Kवल तुव दास हैं नासहु तिनकी R।
बढै सY तेज निज Tको अचल लिलार ॥2॥
भारत के Aकत्र सब Vr सदा बल Pन।
Bसहु बिस्वा ते रहैं तुमरे नितहि अधीन ॥3॥*

---

* जीवहु ईस असीस बल हरहु प्रजन की पीर।
सरयू जमुना गंग जब लैं थिर जग नीर॥
जे केवल तुव दास हैं नासहु तिनकी आर।
बढ़ै सवाई तेज नित टीको अचल लिलार॥
भारत के एकत्र सब वीर सदा बल पीन।
बीसहु बिस्वा ते रहैं तुमरे नितहि अधीन॥

چر ش حر सबै تر बिना कل ।
गलै د नहि सत्रु को तुव सानामुख गुन धाम ॥1॥
अمई कीरति छई रहै अج हराज ।
بر بر बरनत सबै ے कबि यातें आज ॥2॥
थाپ थिर करि राज गन अपने अपने ठौर ।
तासों तुम سहिं भई महरानी जग और ॥3॥*

---

* चेरे से हेरे सबै तेरे बिना कलाम।
गलै दाल नहिं सत्रु की तुव सनमुख गुनधाम ॥
अमीमई कीरति छई रहै अजी महराज।
बेर बेर बरनत सबै ये कवि यातें आज ॥
थापे थिर करि राज गन अपने अपने ठौर।
तासों तुम सी नहिं भई महरानी जग और ॥

अथ अङ्कमयी
राजराजेश्वरी स्तुति

करि वि4 देख्यौ बहुत जग बिन 2 स न1।
तुम बिनु हे विक्टोरिये नित 900 पथ टेक ॥1॥
ह 3 तुम पर सैन लै 80 कहत करि 100 ह।
पै बिन 7 प्रताप बल सत्रु मरोरे भौंह ॥2॥
सो 13 ते लोग सब बिल17 त सचैन।
अ 11 ती जागती पै सब 6 न दिन रैन ॥3॥
सखि तुव मुख 26 सि सबै कै 16 त अनन्द।
निहचै 27 की तुम मैं परम अमन्द ॥4॥
जिमि 52 के पद तरें 14 लोक लखात।
तिमि भुव तुव अधिकार मोहिं बिस्वे 20 जमात ॥5॥
61 खल नहिं राज मैं 25 बन की बाय।
तासों गायो सुजस तुव कवि 6 पद हरखाय ॥6॥
किये 100000000000 बल 1000000000
के तनिकहिं भौंह मरोर।
40 की नहिं अरिन की सैन सैन लखि तोर ॥7॥
तुव पद 1000000000000000 प्रताप को
करत सुकवि पि 10000000।
करत 10000000 बहु 100000 करि
होत तऊ अति थोर ॥8॥
तुम 31ब मैं बड़ी तातें बिरच्यौ छन्द।
तुव जस परिमल3 लहि अंक चित्र हरीचन्द ॥9॥*

[रचनाकाल सन 1877 ई.]

---

* करि विचार देख्यौ बहुत जग बिनु दोस न एक।
तुम विन हे विक्टोरिये नित नव सों पथ टेक॥
हती न तुम पर सैन लै असी कहत करि सौह।
पै बिनसात प्रताप बल सत्रु मरोरै भौंह॥
सोते रहते लोग सब बिलसत रहत सचैन।
अग्या रहती जागती पै सब छन दिन रैन॥
लखि तुव मुख छबि ससि सबै कैसो रहत अनन्द।
निहचै सत्ता ईस की तुम मैं परम अमन्द॥
जिमि बावन के पद तरैं चौदह लोक लखात।
तिमि भुव तुव अधिकार मोहिं बिस्वे बीस जनात॥
इक सठ खल नहिं राज में पची सबन की बाय।
तासों गायौ सुजस तुव कवि षट् पद हरखाय॥
किये खरब बल अरब के तनिकहिं भौंह मरोर।
चालि सकी नहिं अरिन की सैन सैन लखि तोर॥
तुव पद पद्म प्रताप को करत सुकवि पिक रोर।
करत कोटि बहु लक्ष करि होत तऊ अति थोर॥
तुम इक ती सब में बड़ी ताते बिरच्यौ छन्द।
तुव जस परिमल पौन लहि अंक चित्र हरीचन्द॥

भाषा सहज

धन्य धन्य दिन आजु को धन धन भारत भाग।
अतिहि बढ़ायो सहज निज दोऊ दिसि अनुराग॥1॥
आजु मान अति ही लह्यो आरज भारत देस।
भारत की राजेश्वरी भए अनन्द बिसेस॥2॥
प्रथम शमीरामा* भई दूजी भई न और।
सो पूजी तुम बिजयिनी महरानी बनि ठौर॥3॥
विजय मित्र जय विजयपति अजय कृष्ण भगवान।
करहिं बिजयिनी विजय नित दिन दिन सह कल्यान॥4॥
नारी दुर्गा रूप सब†राजा कृष्ण समान‡।
शक्ति शक्तिमत तुम दोऊ यासों अतिहि प्रधान॥5॥
और देश के नृप सबै कहवावत महराज।
सो मेटी जिय सत्य तुम ह्वै कै राजधिराज॥6॥
होइ भारताधीश्वरी आरज स्वामिनि आज।
तुम द्वै + आरज जाति कहं मिलयो धन यह राज॥7॥

रंग चित्र

...दुति करि बैरि झट...मुख मसि लाय।
...पीरजन...लित...हि इत पठवाय॥1॥×

---

* पद्मपुराण में भारत को जीतने वाली शमीरामा नामक देवी का विजयदशमी के दिन शमी वृक्ष में पूजन का विधान है, जिसको इतिहास में Queen Semiremis कहते हैं।

† स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु दुर्गा पाठ।

‡ नाराणां च नराधिपः—श्री गीता।

+ हिन्दू और अंगरेज।

× (पीरे) दुति करि बैरि झट (कारे) मुख मसि लाय।
(हरे) पीर जन (नील) लित (लाल) हि इत पठवाय॥

श्री राज राजेश्वरी स्तुति

श्रीमत्सर्वगुणाम्बुधेर्जनमनो वाणी विदूराकृते–
नित्यानन्दघनस्य पूर्ण करुणाऽऽसारैर्जनान् सिंचतः।
शक्तिः श्रीपरमेश्वरस्य जनताभाग्यैरवाप्तोदया–
साम्राज्यैकनिकेतनं विजयिनी देवी वरो बृध्यते ॥1॥

नानाद्वीप निवासिनो नृपतयः स्वैरुत्त माङ्गैर्नतै–
रादेशाक्षरमालिकां यदुदितां मालाभिवाबिभ्रति।
यत्कीर्तिः शरदिंदुसुन्दरचिर्व्याप्नोति कृत्स्नां महीं।
सेयं सर्व जनातिगस्वविभवा कासां गिरां गोचरां ॥2॥

एषा यद्यपि सार्वभौमपदवीं प्राप्ता प्रतापैर्निजै–
र्वैरिव्रातमहीधराशनि - समैर्भूपालनैकव्रतैः।
आर्यावर्त जमर्त्य भाग्य निवहैर्भूयोऽधुनोदित्वरैः
स्वीकृत्या जनयन्मुदं मनसिनः साऽऽर्येश्वरीति प्रथाम् ॥3॥

कर्णाकर्णिकया गते श्रुतिपथं वार्ताऽमृतेऽस्मिन्वयं
विन्दामो यममन्दमात्तपुलका आनंदथुं संततम्।
अप्राप्यातितनौ तनाववसरं तेनेव संचोदिताः
श्रीमत्याः परमेश्वरार्च्चिरतरं संप्रार्थयामः शिवम् ॥4॥

दीनानाथ जनावनोद्यतमना मानादिनानाविध–
श्रीमत्सर्वगुणावनिर्नयघना संमोदयित्री बुधान्।
जीयादुज्ज्वल कीर्तिरार्तिशमिनी मूर्तिः परस्ये शितुः
पुत्रैरात्मसमैः समं विजयिनी देवी सहस्रं समाः ॥5॥

[सन 1877 ई.]

गजल

उसको शाहनशही हर बार मुबारक होवे।
क़ैसरे हिन्द का दरबार मुबारक होवे॥
बाद मुद्दत के हैं देहली के फिरे दिन या रब।
तख्त ताऊस तिलाकार मुबारक होवे॥
बाग़वां फूलों से आबाद रहे सहने चमन।
बुलबुलो गुलशने बेखार मुबारक होवे॥
एक इस्तूद में हैं शेख़ो बिरहमन दोनों।
सिजदः इनको उन्हें जुन्नार मुबारक होवे॥
मुज़दऐ दिल कि फिर आई है गुलिस्तां में बहार।
मैकशो खानये खुम्मार मुबारक होवे॥
दोस्तों के लिए शादी हो अदू को गम हो।
ख़ार उनको इन्हें गुलज़ार मुबारक होवे॥
ज़मज़मों ने तेरे बस कर दिए लब बन्द 'रसा'।
यह मुबारक तेरी गुफ्तार मुबारक होवे॥

[सन 1876 ई.]

भारत वीरत्व

सन 1878 ई.

भारत वीरत्व

अहो आज का सुनि परत भारत भूमि मंझार।
चहूं ओर तें घोर धुनि कहां होत बहु बार ॥1॥
बृटिश सुशासित भूमि मैं रन रस उमगे गात।
सबै कहत जय आज क्यौं यह नहिं जान्यो जात ॥2॥

शाखा

जितन हेतु अफगान चढ़त भारत महरानी।
सुनहु न गगनहिं भेदि होत जै जै धुनि बानी ॥3॥
जै जै जै बिजयिनी जयति भारत सुखदानी।
जै राजागन मुकुटमनी धन बल गुन खानी ॥4॥
सोई बृटिश अधीश चढ़त अफगान जुद्ध हित।
देखहु उमड़्यौ सैन समुद उमड़्यौ सब जित तित ॥5॥

पूर्ण कोरस

अरे ताल दें लै बढ़ाओ बढ़ाओ।
सबै धाइ कै राग मारू सुनाओ ॥6॥

आरम्भ

कहां सबै राजा कुंअर और अमीर नवाब।
कहौ आज मिल सैन में हाजिर होहु सिताब ॥7॥
धाओ धाओ बेग सब पकरि पकरि तरवार।
लरन हेत निज सत्रु सों चलहु सिन्धु के पार ॥8॥
चढ़ि तुरंग नव चलहु सब निज पति पाछे लागि।
उडुपति संग उडुगन सरिस नृप सुख सोभा पागि ॥9॥

याद करहु निज बीरता सुमिरहु कुल मरजाद।
रन कंकन कर बांधि कै लरहु सुभट रन स्वाद ॥10॥
बज्यो बृटिश डंका अबै गहगह गरजि निसान।
कंपे थरथर भूमि गिरि नदी नगर असमान ॥11॥

शाखा

राज सिंह छूटे सबै करि निज देश उजार।
लरन हेत अफगान सों धाए बांधि कतार ॥12॥

पूर्ण कोरस

सुन्दर सैना सिबिर सजायो।
मनहु बीर रस सदन सुहायो ॥
छुटत तोप चहुं दिसि अति जंगी।
रूप धरे मनु अनल फिरंगी ॥13॥
हा हा कोई ऐसो इतै ना दिखावै।
अबै भूमि के जो कलंकै मिटावै ॥
चलै संग मैं युद्ध को स्वाद चाखै।
अबै देस की लाज को जाइ राखै ॥14॥
कहां हाय ते बीर भारी नसाए।
कितै दर्प तें हाय मेरे बिलाए ॥
रहे बीर जे सूरता पूर भारे।
भए हाथ तेई अबै कूर कारे ॥15॥
तब इन ही की जगत बड़ाई।
रही सबै जग कीरति छाई॥
तित ही सब ऐसो कोउ नाहीं।
लरै छिनहुं जो संगत माहीं ॥16॥
प्रगट बीरता देहि दिखाई।
छन महं काबुल लेइ छुड़ाई॥
फूस हृदय पत्री पर बरबस।
लिखै लोह लेखनि भारत जस ॥17॥

आरम्भ

परिकर कटि कसि उठौ धनुष पै धरि सर साधौ।
केसरिया बाना सजि कर रन कंकन बांधौ ॥18॥

जासु राज सुख बस्यौ सदा भारत भय त्यागी।
जासु बुद्धि नित प्रजा पुंज रंजन महं पागी ॥19॥
जो न प्रजा तिय दिसि सपनेहूं चित्त चलावैं।
जो न प्रजा के धर्म्महि हठ करि कबहुं नसावैं ॥20॥
बांधि सेतु जिन सुरत किए दुस्तर नद नारे।
रची सड़क बेधड़क पथिक हित सुख बिस्तारे ॥21॥
ग्राम ग्राम प्रति प्रबल पाहरू दिए बिठाई।
जिन के भय सों चोर बृन्द सब रहे दुराई ॥22॥
नृप कुल दत्तक प्रथा कृपा करि निज थिर राखी।
भूमि कोष की लोभ तज्यौ जिन जग करि साखी ॥23॥
करि वारड कानून अनेकन कुलहि बचायो।
विद्या दान महान नगर प्रति नगर चलायो ॥24॥
सब ही बिधि हित कियो बिबिध बिधि नीति सिखाई।
अभय बांह की छांह, सबहिं सुख दियो सोआई ॥25॥
जिनके राज अनेक भांति सुख किए सदाहीं।
समरभूमि तिन सों छिपनो कछु उत्तम नाहीं ॥26॥
जिन जवनन तुम धरन नारि धन तीनहुं लीनो।
तिनहूं के हित आरजगन निज जसु तजि दीनो ॥27॥
मानसिंह बंगाल लरे परतापसिंह संग।
रामसिंह आसाम विजय किए जिय उछाह रंग ॥28॥
छत्रसाल हाड़ा जूझ्यौ दारा हितकारी।
नृप भगवान सुदास करी सैना रखवारी ॥29॥
तो इनके हित क्यौं न उठहिं सब बीर बहादुर।
पकरि पकरि तरवार लरहिं बनि युद्ध चक्रधुर ॥30॥

शाखा

सुनत उठे सब बीरबर कर महं धारि कृपान।
सजि सजि सहित उमंग किय पेशावरहि पयान ॥31॥
चली सैन भूपाल की बेगम प्रेषित धाइ।
अलवर सों बहु ऊंट चढ़ि चले बीर चित चाइ ॥32॥
सैन सस्त्र धन कोष सब अर्पन कियो निजाम।
दियो बहावलपूर पति सैन सहित निज धाम ॥33॥
बीस सहस्र सिपाह हिय जम्बूपति सह चाह।
सैन सहित रन हित चढ़्यौ आपुहि नाभा नाह ॥34॥

मंडी जींद सुकेत पटिआला चम्बाधीस।
टोंक सेन्धिया बहुरि करपूरथला अवनीस ॥35॥
जोधपुराधिप अनुज पुनि टोंक चचा सह साज।
नाहन मालर कोटला फरिदकोट के राज ॥36॥
साजि साजि निज सेन सब जिय मैं भरे उछाह।
उठि कै रन हित चलत भे भारत के नर नाह ॥37॥
'डिसलायल' हिंदुन कहत कहां मूढ़ ते लोग।
दृग भर निरखहिं आज ते राजभक्ति संजोग ॥38॥
निरभय पग आगेहिं परत मुख तें भाखत मार।
चले बीर सब लरन हित पच्छिम दिसि इक बार ॥39॥

पूर्ण कोरस

छुटी तोप फहरी धुजा गरजे गहकि निसान।
भुव मंडल खलभल भयो भारत सैन पयान ॥40॥

[यह कविता हरिश्चन्द्र चन्द्रिका के अक्टूबर सन 1878 ई. के अंक में प्रकाशित हुई है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रन्थावली और समग्र के सम्पादकों ने यह लक्षित कर लिया था कि 'विजयिनी विजय पताका या वैजयन्ती', 'भारत भिक्षा' और 'इस कविता' के कुछ अंश समान हैं। पुनरावृत्ति न हो, इसलिए उन लोगों ने समान अंशों को सम्पादित कर निकाल दिया था। यहां कविता के उसी पाठ को जस का तस रख दिया गया है।]

विजय वल्लरी

सन 1881 ई.

विजय वल्लरी

अहो आज आनन्द का भारत भूमि मंझार।
सबकै हिय अति हर्ष क्यौं बाढ़्यौ परम अपार॥1॥
आर्य्य गनन कों का मिल्यौ जो अति प्रफुलित गात।
सबै कहत जै आजु क्यौं यह नहिं जान्यौ जात॥2॥
सबके मन सन्तोष अति सबके मन आनन्द।
सबही प्रमुदित देखियत ज्यों चकोर लहि चन्द॥3॥
कहा भूमि कर उठि गयौ कै टिक्कस भो माफ।
जनसाधारन कों भयो किधौं सिविल पथ साफ॥4॥
नाटक अरु उपदेश पुनि समाचार के पत्र।
कारामुक्त भए कहा जो अनन्द अति अत्र॥5॥
कै प्रतच्छ गो-बधन की जवनन छांड़ी बानि।
जो सब आर्य्य प्रसन्न अति मन महं मंगल मानि॥6॥
कहा तुम्हैं नहिं खबर खबर जय की इत आई।
जीति देस गन्धार सत्रु सब दिए भगाई॥7॥
सब औगुन की खानि अयूब भज्यौ असु लैकै।
प्रविसी सैना नगर माहिं जय डंका दैकै॥8॥
मेरठ कारागार बस्यो याकूब अभागो।
और सबै बर्बर दल इत उत बल हत भागो॥9॥
गो भक्षक रक्षक बनि अंगरेजन फल पायो।
तासों करि अति क्रोध सत्रुगन मारि भगायो॥10॥
पंचम पांडव जिमि सकुनी गन्धार पछार्‍यौ।
बृटिश रिषभ तिमि खरज काबुली मध्यम मार्‍यौ॥11॥
रूम रूस उर सूल दियो ईरान दबायो।
बृटिश सिंह को अटल तेज करि प्रगट दिखायो॥12॥

प्रथम जबै काबुलपति कछु अभिमान जनायो।
तबै बृटिश हरि गरजि कोपि वापैं चढ़ि धायो ॥13॥
शेर अली भजि मांद समाधि प्रबेस कियो तब।
ठहरि सकत कहुं अली रंग नायक उमड़े जब॥14॥
रूस हूंस दै घूस प्रथम तेहि आस बढ़ाई।
धोखा दैकै अन्त घूस बनि पोंछ दबाई॥15॥
खैबर दर अरगला कठिन गिरि सरित करारे।
शत्रु हृदय यह तोड़ि तोड़ि रिजु कीन्हें सारे॥16॥
काबुल का बल करै बृटिश हरि गरजि चढ़ै जब।
बन गरजे केहरी भजहिं झट खर खच्चर सब॥17॥
नीति विरुद्ध सदैव दूत बध के अघ साने।
रूस कुमति फंसि हूस आप सों आप नसाने॥18॥
सिंह चिन्ह को भुजा चढ़ी बाला हिसार पर।
जय देवी बिजयिनी सोर भो काबुल घर घर॥19॥
पुनि परतिज्ञा चेति सत्य सो बदन न मोड़्यो।
खल दल बल दलमलि तृन सम अफगानहिं छोड़्यो॥20॥
नृप अबदुल रहमान कियो आदेश सुनाई।
शुद्ध, सत्य अरु दान वीरता तृतिय दिखाई॥21॥
तजि कुदेस निज सैन सहित सब सेनापतिगन।
भारत में फिर आय बसे जय कहत मुदित मन॥22॥
ताही को उत्साह बढ़्यौ यह चहुं दिसि भारी।
जय जय बोलत मुदित फिरत इत उत नर नारी॥23॥
नहिं नहिं यह कारन नहीं अहै और ही बात।
जो भारतवासी सबै प्रमुदित अतिहिं लखात॥24॥
काबुल सों इनको कहा हिये हरख की आस।
से तो निज धन नास सों रन सों और उदास॥25॥
ये तो समुझत व्यर्थ सब यह रोटी उतपात।
भारत कोष बिनास कों हिय अति ही अकुलात॥26॥
ईति भीति दुष्काल सों पीड़ित कर को सोग।
ताहू पै धन नास की यह बिनु काज कुयोग॥27॥
स्ट्रेची डिजरैली लिटन चितय नीति के जाल।
फंसि भारत जरजर भयो काबुल युद्ध अकाल॥28॥
सबहिं भांति नृप भक्त जे भारतवासी लोक।
शस्त्र और मुद्रण विषय करी तिनहुं को लोक॥29॥

सुजस मिलै अंगरेज कों होय रूस की रोक।
बढ़ै बृटिश वाणिज्य पै हम कों केवल सोक॥30॥
भारत राज मंझार जौ कहुं काबुल मिलि जाइ।
जज्ज कलक्टर होइहैं हिन्दू नहिं तित धाइ॥31॥
ये तो केवल मरन हित द्रव्य देन हित हीन।
तासों काबुल युद्ध सों ये जिय सदा मलीन॥32॥
इनके जिय के हरख को औरहि कारन कोय।
जो ये सब दुःख भूलि कै रहे अनन्दित होय॥33॥
अब जानी हम बात जौन अति आनन्दकारी।
जासों प्रमुदित भये सबै भारत नर नारी॥34॥
नृप रहमान अयूब दोऊ मिलि कलह मचाई।
अन्त प्रबल ह्वै लिए अयूब गन्धार छुड़ाई॥35॥
आदि बंस नव बंस दोऊ काबुल अधिकारी।
जाहि जातिगन चहैं करैं निज नृप बलधारी॥36॥
यामें हमरो कहा कउन उन सों मम नाता।
भार पड़ैं मिलि लड़ैं भिड़ैं झगड़ैं सब भ्राता॥37॥
दृढ़ करि भारत सीम बसैं अंगरेज सुखारे।
भारत असु बसु हरित करहिं सब आर्य्य दुखारे॥38॥
सत्रु सत्रु लड़वाइ दूर रहि लखिय तमासा।
प्रबल देखिए जाहि ताहि मिलि दीजै आसा॥39॥
लिबरल दल बुद्धि भौन शान्तिप्रिय अति उदार चित।
पिछली चूक सुधारि अबै करिहै भारत हित॥40॥
खुलिहै 'लोन' न युद्ध बिना लगिहैं नहिं टिक्कस।
रहिहै प्रजा अनन्द सहित बढ़िहै मन्त्री जस॥41॥
यहै सोचि आनन्द भरे भारतवासी जन।
प्रमुदित इत उत फिरहिं आज रच्छित लखि निज धन॥42॥

[रचनाकाल—सन 1881 ई.]

विजयिनी विजय पताका या वैजयन्ती

सन 1882 ई.

PREFATORY NOTE

A special meeting of the Benares institute was held on the 22nd September, 1882 at 6 P.M. in the Town Hall to express our joy at the recent success of the Indian army in Egypt. Almost all the raises, Civil, Revenue and Judicial officers, Pandits, Professors, Members of Municipal and District Committees and Scholars were present, The Hall was full and many were obliged to hear the recital from the verandah. The Honorable Raja Siva Prasad C.S.I. was unanimously voted to the chair.

Babu Harischandra read an excellent poem in Hindi on the subject. The opening stanzas of the poem explain the cause of India's unusual cheerfulness. It is the signal success of the Indian army in Egypt. A vivid contrast is drawn between the past and present conditions of India and the victory of British nation in Egypt descrisbed.

The gentlemen present expressed their unqualified applause at the recital and the hall resounded with cheers. The Honorable Raja Siva Prasad C.S.I. then described the importance of Egypt as a highway to India and said that the British conquest has been extremely rapid. He thanked Babu Harischandra for his excellent poem.

Mr. Bullock, the Collector warmly thanked Raja Siva Prasad and Babu Harischandra for sentiments of loyalty to the British Government, expressed by the people of Benares.

H.H. the Maharaja of Benares was unavoidably detained at Ram Nagar on account of some religious ceremony but he has expressed his full sympathy with the object of the meeting.

विजयिनी विजय पताका या वैजयन्ती

कहो कहा यह सुनि पर्‌यौ जाको सबहिं उछाह।
हरखित आरज मात्र भे जिय बढ़ाइ अति चाह॥1॥
फरकि उठीं सब की भुजा खरकि उठी तलवार।
क्यों आपुहि ऊंचे भए आर्य्य मोंछ के बार॥2॥
जे आरजगन आजु लौं रहे नवाए माथ।
तेहू सिर ऊंचो किए क्यों दिखात इक साथ॥3॥
क्यों पताक लहरन लगीं फहरन लगे निसान।
क्यों बाजन बजिबे लगे घहरि घहरि इक तान॥4॥
क्यों दुन्दुभि हुंकार सों छायो पूरि अकास।
क्यों कम्पित करि पवन गति छई नफीरी आस॥5॥
बृटिश सुशासित भूमि मैं रन रस उमगे गात।
सबै कहत जय आजु क्यों यह नहिं जानौ जात॥6॥
छुटत तोप गम्भीर रव बज्रनाद सम जोर।
गिरि कम्पत थर थर खरे सुनि धर धर धर सोर॥7॥
विन्ध्य हिमालय नील गिरि सिखरन चढ़े निसान।
फहरत 'रूल ब्रिटानिया' कहि कहि मेघ समान॥8॥
अटल कटक लौं आजु क्यौं सगरो आरज देस।
अति आनन्द मैं भरि रह्यौ मनु दुःख को नहिं लेस॥9॥
क्यों अजीव भारत भयो आजु सजीव लखात।
क्यौं मसान भुव आजु बनि रंगभूमि सरसात॥10॥
सहसन बरसन सों सुन्यौ जो सपनेहु नहिं कान।
जो जय भारत शब्द क्यों पूर्‌यौ आजु जहान॥11॥

शाखा

कहा तुम्हैं नहिं खबर खबर जय की इत आई।
जीति मिसर मैं शत्रु सैन सब दई भगाई ॥12॥

तडित तार के द्वार मिल्यौ सुभ समाचार यह।
भारत सेना कियो घोर संग्राम मिश्र मह॥13॥
जेनरल मकफरसन आदिक जे सेनापति गन।
तिन लै भारत सैन कियो भारी अति ही रन॥14॥
बोलि भारती सैन दई आयसु उठि धाओ।
अभिमानी अरबी बेगहि बेगहि गहि लाओ॥15॥
सुनि कै सबही परम बीरता आजु दिखाई।
शत्रु गगन सों सनमुख भारी करी लराई॥16॥
छिन मैं शत्रु भगाइ गह्यौ अरबी पासा कहं।
तीन सहस रन बीर करे बंधुआ संगर महं॥17॥
आरजगन को नाम आजु सब ही रखि लीनो।
पुनि भारत को सीस जगत महं उन्नत कीनो॥18॥

आरम्भ

कित अरजुन, कित भीम, कित करन नकुल सहदेव।
कित बिराट, अभिमन्यु कित द्रुपद सल्य नरदेव॥19॥
कित पुरु, रघु, अज, यदु कितै परशुराम अभिराम।
कित रावन, सुग्रीव कित हनूमान गुनधाम॥20॥
कित भीषम, कित द्रोन, कित सात्यकि अति रनधीर।
कित पोलस, कित चन्द्र, कित पृथ्वीराज, हम्मीर॥21॥
कित सकारि विक्रम, कितै समरसिंह नरपाल।
कित अन्तिम नर वीर रन जीतसिंह भूपाल॥22॥
कहहु लखहिं सब आइ निज संतति को उत्साह।
सजे साज रन को खरे मरन हेत करि चाह॥23॥
स्वामिभक्तिकिरतज्ञता दरसावन हित आज।
छांड़ि प्रान देखहिं खरो आरज बंस समाज॥24॥
तुमरी कीरति कुल कथा सांची करबे हेतु।
लखहु लखहु नृप गन सबै फहरावत जय केतु॥25॥
मेटहु जिय के सल्य सब सफल करहु निज नैन।
लखहु न अरबी सों लरन ठाढ़ी आरज सैन॥26॥

शाखा

सुनत बीर इक वृद्ध नरन के सम्मुख आयो।
श्वेत सिंह जिमि गुहा छांड़ि बाहर दरसायो॥27॥

सुभ्र मोछ फहरात सुजस की मनहुं पताका।
सेत केस सिर लसत मनहुं थिर भई बलाका॥28॥
अरुन बदन ढिग सेत केस सुन्दर दरसायो।
वीर रसहिं मनु घेरि रह्यो रस सान्त सुहायो॥29॥
रवि ससि मिलि इक ठौर उदित सी कांति पसारे।
पीन हृदय आजानु बाहु स्वेताम्बर धारे॥30॥
कटि पैं भाथा कन्ध धनुष कर मैं करवाला।
परी पीठ पै ढाल गुलाबी नैन बिसाला॥31॥
सिंह ठवनि निरभय चितवनि चितवत समुहाई।
तन दुति फैली छूटि परत धरनी पर आई॥32॥
नभ मधि ठाढ़े होइ कही यह घन सम बानी।
अति गम्भीर कछु करुना कछुक बोर रस सानी॥33॥

कोरस

क्यौं बहरावत झूठ मोहिं और बढ़ावत सोग।
अब भारत मैं नाहिं वे रहे बीर जे लोग॥34॥
जो भारत जग मैं रह्यौ सब सों उत्तम देस।
वाही भारत मैं रह्यौ अब नहिं सुख को लेस॥35॥
याही भुव मैं होत हैं हीरक, आम, कपास।
इतहीं हिमगिरि, गंग जल, काव्य गीत परकास॥36॥
याही भारत देस मैं रहे कृष्ण मुनि व्यास।
जिनके भारत गान सों भारत बदन प्रकास॥37॥
जासु काव्य सों जगत मधि ऊंचो भारत सीस।
जासु राज बल धर्म की तृषा करहिं अवनीस॥38॥
सोई व्यास अरु राम के बंस सबै सन्तान।
अब लौं ये भारत भरे नहिं गुन रूप समान॥39॥
कोटि कोटि ऋषि पुन्य तन, कोटि कोटि नृप सूर।
कोटि कोटि बुध, मधुर, कवि मिले यहां की धूर॥40॥

आरम्भ

हाय वहै भारत भुव भारी।
सब ही बिधि तें भई दुखारी।
रोम, ग्रीस पुनि निज बल पायो।
सब बिधि भारत दुखित बनायो॥41॥

अति निरबली स्याम जापाना।
हाय न भारत तिन्हुं समाना।
हाय रोम तू अति बड़ भागी।
बरबर तोहिं नास्यो जय लागी ॥42॥
तोड़े कीरति खम्भ अनेकन।
ढाहे गढ़ बहु करि जय टेकन।
सबै चिन्ह तुव धूर मिलाए।
मन्दिर महलनि तोरि गिराए ॥43॥
कछु न बची तुव भूमि निसानी।
सो बरु मेरे मन अति मानी।
पै भारतभुव जीवन हारे।
थाप्यौ पद या सीस उघारे ॥44॥
तोर्‌यो दुर्गन, महल ढहायो।
तिनही मैं निज गेह बनायो।
ते कलंक सब भारत केरे।
ठाढ़े अजहूं लखो घनेरे ॥45॥
हाय पंचनद, हा पानीपत।
अजहुं रहे तुम धरनि बिराजत।
हाय चितौर निलज तू भारी।
अजहुं खरो भारतहि मंझारी ॥46॥
जा दिन तुव अधिकार नसायो।
ताही दिन किन धरनि समायो।
रह्यो कलंक न भारत नामा।
क्यों रे तू बाराणसि धामा ॥47॥
इनके भय कम्पत संसारा।
सब जग इनको तेज पसारा।
इनके तनिकहि भौंह हिलाए।
थर थर कंपत नृप भय पाए ॥48॥
इनके जय की उज्जल गाथा।
गावत सब जग के रुचि साथा।
भारत किरिन जगत उंजियारा।
भारत जीव जियत संसारा ॥49॥
भारत भुज बल लहि जग रच्छित।
भारत विद्या सों जग सिच्छित।

रहे जबै मनि क्रीट सुकुंडल।
रह्यो दंड जय प्रबल अखंडल ॥50॥
रह्यौ रुधिर जब आरज सीसा।
ज्वलित अनल समान अवनीसा।
साहस बल इन सम कोउ नाहीं।
जबै रह्यौ महि मंडल माहीं ॥51॥
तब इनहीं की जगत बढ़ाई।
रही सबै जग कीरति छाई।
तितही अब ऐसो कोउ नाहीं।
लरैं छिनहुं जो संगर माहीं ॥52॥
प्रगट वीरता देह दिखाई।
छन महं मिसरहिं लेइ छुड़ाई।
निज भुज बल विक्रम जग मोड़े।
भारत जस धुज अविचल गाड़ै ॥53॥
यवन हृदय पत्री पर बरबस।
लिखै लोह लेखनि भारत जस।
पुनि भारत जस करि विस्तारा।
मम मुख फेर करै उंजियारा ॥54॥

शाखा

हाय!
सोई भारत भूमि भई सब भांति दुखारी।
रह्यौ न एकहु बीर सहस्रन कोस मंझारी॥55॥
होत सिंह को नाद जौन भारत बन नाहीं।
तहं अब ससक सियार स्वान खर आदि लखाहीं॥56॥
जहं झूसी उज्जैन अवध कन्नौज रहे वर।
तहं अब रोवत सिवा चहूं दिसि लखियत खंडहर॥57॥
धन विद्या बल मान वीरता कीरति छाई।
रही जहां तित केवल अब दीनता लखाई॥58॥

कोरस

अरे बीर इक बेर उठहु सब फिर कित सोए।
लेहु करन करवालि काढ़ि रन रंग समोए॥59॥

चलहु वीर उठि तुरत सबै जय ध्वजहि उड़ाओ।
लेहु म्यान सों खंग खींचि रन रंग जमाओ॥60॥
परिकर कटि कसि उठौ बंदूकहि भरि भरि साधौ।
सजौ जुद्ध बानो सब ही रन कंकन बांधौ॥61॥
का अरबी को वेग कहो वाको बल भारी।
सिंह जगे कहुं स्वान ठहरिहैं समर मंझारी॥62॥
पद तल इन कहं दलहु कीट तृन सरिस नीच चय।
तनिकहु संक न करहु धर्म जिय जय तित निश्चय॥63॥
जिन बिनहीं अपराध अनेकन कुल संहारे।
दूत पादरी बनिक आदि बिन दोसहि मारे॥64॥
प्रथम जुद्ध परिहार कियो विश्वास दिवाई।
पुनि धोखा दै एकाएकी करी लराई॥65॥
इनको तुरतहि हतौ मिलैं रन कै घर माहीं।
इन छलियन सों पाप किएहू पुन्य सदाहीं॥66॥
उठहु वीर तरवार खींचि माड़हु घन संगर।
लोह लेखनी लिखहु आर्य बल जवन हृदय पर॥67॥
मारू बाजे बजैं कहो धौंसा घहराहीं।
उड़हि पताका सत्रु हृदय लखि लखि थहराहीं॥68॥
चारन बोलहिं विजय सुजस बन्दी गुन गावैं।
छुटहि तोप घनघोर सबै बन्दूक चलावैं॥69॥
चमकहिं अस भाले दमकहिं ठनकहिं तन बखतर।
हींसहिं हय झमकहिं रथ अज चिक्करहिं समर थर॥70॥
नासहु अरबी शत्रु गनन कहं करि छन महं छय।
करहु सबहि विजयिनी राज महं भारत की जय॥71॥

आरम्भ

सुनत उठे सब बीर बर कर महं धारि कृपान।
कियो सबन मिलि जुद्ध हित धारि उमंग पयान॥72॥
पहिरि जिरह कटि कसि सबै तौलत चले कृपान।
लै बन्दूक साधत चले लच्छ बीर बलवान॥73॥
निरभय पग आगहिं परत मुख तें भाखत मार।
चले बीर सब लरन हित मिसरिन सों इकवार॥74॥
चंद्र सूर्य बंसी जिते प्रमर, अनल, चौहान।
घोड़न चढ़ि आए सबै छत्री बीर सुजान॥75॥

सुमिरि सुमिरि छत्री सब निज पुरुषन की बात।
धाए ऐंठत मोछ निज उमगि बीर रस गात॥76॥
उमगी भारत सैन जब समुद सरिस घनघोर।
तब मिसरी चीनी कहा का सैन्धव को जोर॥77॥
बजी बृटिश रन दुन्दुभी गरजे गहकि निसान।
कंपे थर थर भूमि गिरि नदी नगर असमान॥78॥

शाखा

दमामा सनाई बजाओ बजाओ।
अरे राग मारू सुनाओ सुनाओ॥
सबै फौज आगे बढ़ाओ बढ़ाओ।
अरे जै पताका उड़ाओ उड़ाओ॥
कहां बीर हौ वेग धाओ सुधाओ।
अरे वीरता को दिखाओ दिखाओ॥
अरे म्यान सों शस्त्र खोलो सु खोलो।
अरे मार मारौ धरौ मार बोलो॥
अरे शत्रु को सीस काटो सु काटो।
अरे कायरै दौरि डांटो सु डांटो॥
निसाना सबै लै लगाओ लगाओ।
अरे लै बन्दूकै चलाओ चलाओ॥
सबै युद्ध भारी मंचाओ मचाओ।
अरे शत्रु सेनै भगाओ भगाओ॥79॥

कोरस

भगी शत्रु की सैन रह्यौ कहुं नाहिं ठिकाना।
कै जमपुर कै गिरि बन कबुरन कियो पयाना॥80॥
सुख सों बस्यौ खदीव प्रजागन अति सुख पायो।
ब्रिटिश क्रोध को फल सब कहं परतच्छ लखायो॥81॥
मथ्यौ समुद्रहि जिन ब्रिटानिया निज कटाक्ष बल।
जग महं जिनको निरभय बिचरत कठिन प्रबल दल॥82॥
जिन भारत महं आइ तोप बल दह्यौ वज्र कहं।
अग्नि वान जयपत्र लिख्यो जिन भारत अंग महं॥83॥

कठिन छत्रियन जीति लए जिन बहु गढ़ सहजहि।
सिक्खन दीनी हार लियो मुलतान तनिक चहि॥84॥
तर्जनि अग्र हिलाइ लखनऊ छिन महं लीनो।
तनिक दृष्टि की कोर सकल राजन बस कीनो॥85॥
कठिन सिपाही द्रोह अनल जा जल बल नासी।
जिन भय सिर न हिलाइ सकत कहुं भारतवासी॥86॥
जासु सैन बल देखि रूस समयहि जिय हार्‍यौ।
बरलिन सन्धिहि मानि कोऊ विधि समयहि टार्‍यौ॥87॥
सहजहि निज बस कीनी जिन सिप्रस को टापू।
छाइ दियो सब नृपनन पै निज प्रबल प्रतापू॥88॥
काबुल अरु कन्धार कठिन महं हलचल पार्‍यौ।
शेरअली याकूब अयूबहि सहज उखार्‍यौ॥89॥
खैबर दर अरगला कठिन गिरि सरित करारे।
सत्रु हृदय सह तोड़ि तोड़ि रिजु कीन्हे सारे॥90॥
रूम रूस उर सूल दियो ईरान दबायो।
बृटिश सिंह को अटल तेज करि प्रगट दिखायो॥91॥
सिंह चिन्ह की धुजा चढ़ी बाला हिसार पर।
जय देवी विजयिनी सोर भो काबुल घर घर॥92॥
ताके आगे कहा मिसिर का अरबी को बल।
इन सों सपनहु वैर किए पावे परतछ फल॥93॥
बज्यो ब्रिटिश डंका गहकि धुनि छाई चहुं ओर।
जयति राजराजेश्वरी कियो सबनि मिलि सोर॥94॥

[मिस्र के विद्रोह को दबाकर अंगरेजों ने सन 1882 ई. में वहां अपनी सत्ता स्थापित की थी। विद्रोह को दबाने में भारतीय सेना अंगरेजों की ओर से लड़ी थी। युद्ध में अंगरेजों के विजयी होने पर भारत में भी विजयोत्सव मनाया गया था। इसी सन्दर्भ में बनारस के टाउन हाल में 22 सितम्बर, सन 1882 ई. को 'बनारस इंस्टीट्यूट' की एक विशेष सभा हुई थी। इसी सभा में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने यह कविता पढ़ी थी। इसी वर्ष की 'कविवचन सुधा' खंड-14 सं. 9 में यह कविता प्रकाशित हुई है।]

जातीय संगीत

सन 1884 ई.

जातीय संगीत

प्रभु रच्छहु दयाल महारानी।
बहु दिन जिए प्रजा सुखदानी।
हे प्रभु रच्छहु श्री महरानी।
सब दिसि में तिनकी जय होई।
रहै प्रसन्न सकल भय खोई।
राज करै बहु दिन लौं सोई।
हे प्रभु रच्छहु श्री महरानी ॥1॥

उठहु उठहु प्रभु त्रिभुवन राई।
तिनके अरिन देहु अकुलाई।
रन महं तिनहिं गिरावहु मारी।
सब सुख दारिद दूर बहाओ।
विद्या और कला फैलाओ।
हमरे घर महं शान्ति बसाओ।
देहु असीस हमैं सुखकारी ॥2॥

प्रभु निज अनगन सुभग असीसा।
बरसहु सदा विजयिनी सीसा।
देहु निरुजता जस अधिकारा।
देहु राजसुत, कै अधिकारी।
करहिं राज को संभ्रम भारी।
निकट दूर के सब नर नारी।
करहिं नाम आदर विस्तारा ॥3॥

रच्छहु निज भुज तर सह साजा।
सब समर्थ राजन के राजा।
अलख राज कर सब बल खानी।
बिनय सुनहु बिनवत सब कोई।
पूरब सों पच्छिम लौं जोई।
राजभक्त गन इक मन होई।
हे प्रभु रच्छहु श्री महरानी ॥4॥

(युद्ध के समय योधागण के गाने को)

उठहु उठहु प्रभु त्रिभुअन राई।
तिनके शत्रु देहु छितराई।
रन महं तिनहिं गिरावहु मारी।
स्वामिनि स्वत्व हेतु जे बीरा।
लड़हिं हरहु तिनकी सब पीरा।
यह बिनवत हम तुव पद तीरा।
हे प्रभु जग स्वामी सुखकारी ॥5॥

(अकाल और उपद्रव के समय गाने को)

उठहु उठहु प्रभु! त्रिभुवन राई।
कठिन काल में होहु सहाई।
देहु हमहिं अवलम्बन भारी।
अभय हाथ मम सीस फिराओ।
मुरझी भुव पर सुख बरसाओ।
पिता बिपति सों हमहिं बचाओ।
आइ सरन तुव रहे पुकारी ॥6॥

[रचनाकाल—सन 1884 ई.]

रिपनाष्टक

सन 1884 ई.

रिपनाष्टक

जय जय रिपन उदार जयति भारत हितकारी।
जयति सत्य पथ पथिक जयति जन शोक बिदारी॥
जय मुद्रा स्वाधीन करन सालम दुःख नाशन।
भृत्य वृत्ति प्रद जय पीड़ित जन दया प्रकाशन॥
जय प्रजा राज्यस्थापन करन हरन दीन भारत विपद।
जय भारतवासिहि देन नव महा न्यायपति प्रथम पद॥1॥

जय जय हिन्दू उन्नति पथ अवरोध मुक्त कर।
जय कर बन्धन मन्थर कर जय जयति गुणाकर॥
जय जन सिच्छन हेत समिति सिच्छा संस्थापक।
जय जय सेतासेत बरन सम सम्मत मापक॥
जय राज्य धुरन्धर धीर जय भारत शिल्पोन्नति करन।
जय परम प्रजावत्सल सदा सत्य प्रिय जय श्री रिपन॥2॥

राजतन्त्र के पंडित तुम जानत प्रयोग खट।
स्तम्भन कीनो राज बाक्य करि अटल नीति अट॥
जन दुःख मारन उच्चाटन द्वैविद्ध भाव जग।
विद्वेषण स्वारथी मिलित दल मद्ध न्याय मग॥
आकर्षण मन सब जनन को निज उदार गुण प्रगट कर।
जय मोहन मन्त्र समान निज वाक्य विमोहित देशवर॥3॥

जय भारत नव उदित रिपन चंद्रमा मनोहर।
शुक्ल कृष्ण सम तेज तदपि जस अपजस विधि पर॥
जस चन्द्रिका विकासि प्रकास्यौ उन्नति मारग।
वाक्य अमृत बरसाइ किए आह्लादित नर जग॥

ससअंक बंगविल सो लसत जन मन मुकुद प्रफुल्लतर।
सत्ताइस रैन प्रकास सम सत्ताइस शुभ कर्म कर ॥4॥

जय तीरथपति रिपन प्रजा अघ शोक विनाशक।
गंग जमुन सम मिलित तदपि जान्हवि मरजादक ॥
अक्षय वट सम अचल कीर्त्ति थापक मन पावन।
गुप्त सरस्वति प्रगट कमीशन मिस दरसावन ॥
कलि कलुष प्रजागत भीति कों सब बिधि मेटन नाम रट।
जय तारन तरन प्रयाग सम जस चहुं दिसि सब पै प्रगट ॥5॥

जदपि वाहु बल क्लाइव जीत्यौ सगरो भारत।
जदपि और लाटनहू को जन नाम उचारत ॥
जदपि हेसटिंग्ज आदि साथ धन लै गए भारी।
जदपि लिटन दरबार कियो सजि बड़ी तयारी ॥
पै हम हिन्दुन के हीय की भक्ति न काहू संग गई।
सो केवल तुमने संग रिपन छाया सी साथिन भई ॥6॥

शिवि दधीच हरीचन्द कर्ण बलि नृपति युधिष्ठिर।
जिमि हम इनके नाम प्रात उठि सुमिरत हैं चिर ॥
तिमि तुमहू कहं नितहिं सुमिरिहैं तुव गुन गाई।
यासों बढ़ि अनुराग कहो का सकत दिखाई ॥
हम राजभक्ति को बीज जो अब लौं उर अन्तर धर्‌यौ।
निज न्याय नीर सों सौच कै तुम बामैं अंकुर कर्‌यौ ॥7॥

निज सुनाम के बरन किए तुम सकल सबहि विधि।
रिपु सब किए उदास दई हिय राजभक्ति सिधि ॥
महरानी को पन राख्यौ निज नवल रीति बल।
परि मध न्याय तुला के नप राख्यौ सम दुहुं दल ॥
सब प्रजापुंज सिर आपकौ रिन रहिहैं यह सर्व छन।
तुम नाम देव सम नित जपत रहिहैं हम हे श्री रिपन ॥8॥

[रिपन का पूरा नाम जॉर्ज फ्रेडरिक सैमुअल राबिन्सन था। इन्हें मारविनस ऑफ रिपन कहा जाता था। इनका जन्म सन 1827 ई. में लन्दन में हुआ था। ये सन 1861 ई. से सन 1865 ई. तक भारत के सचिव रहे। अन्य कई पदों को सुशोभित करने के बाद सन 1880 ई. में ये भारत के वायसराय हुए। अपने कार्यों से इन्हें भारत में विशेष सम्मान मिला था। सन 1884 ई. में ये विलायत लौट गए। इस कविता का रचनाकाल सन 1884 ई. है।]

अन्य विषय की कविताएँ

संस्कृत लावनी

सन 1874 ई.

संस्कृत लावनी

कुंजं कुंजं सखि सत्वरं।
चल चल दयितः प्रतीक्षते त्वां तनोति बहु आदरं ॥धृ.॥2
सर्वा अपि संगताः।
नो दृष्ट्वा त्वां तासु प्रियसखिहरिणाऽहं प्रेषिता॥2
मानं त्यज वल्लभे।
नास्ति श्री हरिसदृशो दयितो वच्मि इदं ते शुभे॥
गतिर्भिन्ना।
परिधेहि निचोलं लघु।
जायते बिलम्बो बहु।
सुंदरि त्वरां त्वं कुरु।
श्री हरि मानसे वृणु।
चलचल शीघ्रं नोचेत्सर्वा निष्यन्ति हि सुन्दरं॥2
अन्यद्वन मन्दिरं चलचल दयितः॥1॥
शृगु वेणुनादमागतं।
त्वदर्थमेव श्रीहरिरेषः समानयत्स्त्रीशतं॥
त्वय्येव हरिं सद्रतं।
तवैवार्थमिह प्रमदाशतकं प्रियेण विनियोजितं॥
शृण्वन्यभृतां संरुतं।
आकरायन्ति सर्वे समाप्यहरिणोमधुरं मतं॥
विभिन्न गतिः।
दिशति ते प्रियतमसंदेशं ॥
गृहीत्वा मदनः पिकवेशं।
जनयति मनसि स्वावेशं ॥
समुत्साहयतेरतिलेशं।

न कुरु विलम्बं क्षणमपि मत्वा दुर्ल्लभमौल्याकारं॥
शृणु वचनं मे हितभरं।
चलचल दयितः॥2॥

सूर्य्योप्यरस्तंगतः।
गोपिगोपयितुमभिसरणं तव अन्धकारइहततः॥
दृश्यते पश्यनोमुखं।
कस्यापिहि जीवस्य प्रणयिन्यभिसरणेतत्सुखं॥
व्रजव्रजेन्द्रकुलनन्दनं।
करोति यत्स्मृतिरपि सखि सकलव्याधेः सुनिकन्दनं गतिः॥
चन्द्रमुखि चन्द्रंखे समुदितं॥
करैस्त्वामालम्बितुमुद्यतं।
आलि अवलोक्य तारावृतं॥
भाति विष्टपं चन्द्रिकायुतं।
चकोरायितश्चन्द्रस्त्यक्त्वा स्थलमपि रत्नाकरं॥
मुखं ते द्रष्टुं सखिसुन्दरं।
चलचल ॥3॥

परित्यज चंचलमंजीरं।
अवगुंठ्य चन्द्राननमिह सखि धेहि नीलचीरं॥
रमय रसिकेश्वरमाभीरं।
युवतीशतसंग्रामसुरतरतमचलमेकवीरं॥
भयं त्यज हृदि धारय धीरं।
शोभयस्वमुखकान्तिविराजितरवितनया तीरं॥गतिः॥
मुञ्चमानं मानय वचनं॥
विलम्बं मा कुरु कुरु गमनं।
प्रियां के प्रिये रचय शयनं॥
सुतनुतनु सुखमयमालिजनं।
दासौ दामोदर हरिचन्दौ प्रार्थयतस्ते वरं॥
वरय राधे त्वं राधावरं।
चलचल दयितः प्रतीक्षते त्वां तनोति बहु आदरं॥4॥

श्रीकृष्णार्णपणमस्तु

राधे मुरवैरिणं। व्रज सुरकान्तानितान्त दुर्लभशरीरपरिरम्भणं॥धृ॥ सुधांशुसुभगानने।

तथ्यमुच्यते पथ्यमवेहि प्रकामजनरंजने॥ रीतिरियं स्त्रीजने। नहि सखि दृष्टा कुत्रचिदपि मे दुराग्रहालम्बने॥ त्वमत्र तावत्क्षणे। अहितं वा हितमुक्तं व्यक्तं शोधय नयधीषणे। वद तथाहि परभृत्स्वने॥ यथा सर्वथानन्दिष्यति ते सखासुधावर्णने॥ गतिः॥ अद्यापि किमिति चिन्तने॥ मनो हरिणलोचने। व्यापार नीतिशोधने॥ उत्तिष्ठ एहि ऽानने॥ एवं व्यक्तिः सुलभा नहि या करोति असुतारणं॥1॥राधे.॥ तव विप्रलंभ साहसं। लोकदृशामधुयद्वत्तद्वद्विषकुम्भे पायसं॥ ज्ञातमतो मानसं। निवर्त्तयास्माद्वयवसायात्तव वन्दे पदसारसं॥ एहीति पीतवाससं॥ यत्वं वदसि प्रलोभ्य तद्वत्किं सुखमिह राजसं॥ तद्रतन्नविगलद्रम। यदजनि पूर्वं तादृशमपि तन्मनोजगतिं, लालसं॥ गतिः॥ अतिकैतवरसचेतसं। तं गन्तु मयोवक्षसं॥ हूज्जातअतिलालसं। सददर्श प्राणसाध्वसं॥गन्तव्यश्चेद्गच्छतु तिष्ठतु तवात्र किं कारणं॥2॥राधे.॥ परमस्ति नायिकाशतं। एकात्वमेव नायास्यसि यदि न तस्य किंचितगतं॥ ज्ञातं तव हृद्गतं। पूर्णमदेनाघूर्णित नयने न दृश्यते तव हितं॥ ममापि अतिसम्मतं। लोक विनिन्द्यम्। माध्यमिकत्वं त्वदर्थमंगीकृतं॥ तत्फलं सम्यगर्पितं। तनुरपि मन्तुर्नहि ते कठिने ममैव मप्रस्तुतं॥ गतिः॥ अस्तु च वाग्विस्तृतं। यत्कृतं साधु तत्कृतं॥ अलमिहनौ संगतं॥ कुर्वितः स्वमतिनिश्चितं। नत्वा चरणं याचे कुरु मे पराधसं धारणं॥3॥राधे.॥ तादृशतद्वाक्शरं। श्रुत्वा कृत्वा सस्मितमाननमधोगमितकातरं॥ हितमितमिततिद्गिरं। मृद्वभिनयतोभिपद्यवचसा प्रगृह्य विनयोत्करं॥ उत्थाय चाथ सत्वरं। विगलितमानं धृत्वा हस्त प्रियसख्याः सादरं॥ परिधाय नूतनाम्बरं। नानालंकृतिरुचिरं बपुरपि विधाय रससागरं॥ गतिः॥ आलक्ष्य कामसुन्दरं। श्रीनाथमिष्ट शंकरं॥ आलिंग्य हर्षनिर्भरं। आनन्दसान्द्रयन्तरं॥ उभयोरिवतत्सस्रीव मेने हरिरपि सुखपूरणं॥4॥राधे.॥

श्रीकृष्णाय नमः।

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के फरवरी 1874 अंक में प्रकाशित]

बसन्त होली

सन 1874 ई.

बसन्त होली

जोर भयो तन काम को आयो प्रगट बसन्त।
बाढ़्यौ तन मैं अति बिरह भो सब सुख को अन्त॥1॥
चैन मिटायो नारि को मैन सैन निज साज।
याद परी सुख दैन की रैन कठिन भई आज ॥2॥
परम सुहावन से भए सबै बिरिछ बन बाग।
त्रिविध पवन लहरत चलत दहकावत उर आग ॥3॥
कोइल अरु पपिहा गनन रटि रटि खायो प्रान।
सोवन निसि नहिं देत हैं तलपत होत बिहान ॥4॥
है न सरन त्रिभुवन कहूं कहु बिरहिन कित जाय।
साथी दुःख को जगत मैं कोऊ नाहिं लखाय ॥5॥
रहे पथिक तुम कित विलम वेग आइ सुख देहु।
हम तुम बिनु व्याकुल भईं धाइ भुजन भरि लेहु ॥6॥
मारत मैन मरोरि कै दाहत हैं रितुराज।
रहि न सकत बिन मिलौ कित गहरत बिन काज ॥7॥
गमन कियो मोहिं छोड़ि कै प्रान पियारे हाय।
दरकत छतिया नाह बिन कीजै कौन उपाय ॥8॥
हा! पिय प्यारे प्रानपति प्राननाथ पिय हाय।
मूरति मोहन मैन के दूर बसे कित जाय ॥9॥
रहत सदा रोवत परी फिर फिर लेत उसास।
खरी जरी बिनु नाथ के मरी दरस के प्यास ॥10॥
चूमि चूमि धीरज धरत तुव भूषन अरु चित्र।
तिनहीं को गर लाइकै सोइ रहत निज मित्र ॥11॥
यार तुम्हारे बिनु कुसुम भए बिष बुझे बान।
चौदिसि टेसू फूलि कै दाहत हैं मम प्रान ॥12॥

परी सेज सफरी सरिस करवट लै पछतात।
टप टप टपकत नैन जल मुरि मुरि पछरा खात ॥13॥
निसि कारी सांपिन भई डसत उलटि फिरि जात।
पटकि पटकि पाटी करन रोइ रोइ अकुलात ॥14॥
टरै न छाती सों दुसह दुःख नहिं आयो कन्त।
गमन कियो केहि देस कों बीती हाय बसन्त ॥15॥
वारों तन मन आपुनौ दुहुं कर लेहुं बलाय।
रति रंजन 'हरिचन्द' पिय जो मोहिं देहु मिलाय ॥16॥

[हरिश्चन्द्र मैगजीन के फरवरी 1874 अंक में प्रकाशित]

प्रात समीरन

सन 1874 ई.

प्रात समीरन

मन्द मन्द आवै देखो प्रात समीरन
करत सुगन्ध चारों, ओर विकीरन।
गात सिहरात तन लगत सीतल
रैन निद्रालस जन सुखद चंचल॥
नेत्र सीस सीरे होत सुख पावै गात
आवत सुगन्ध लिए पवन प्रभात।
वियोगिनी विदारन मन्द मन्द गौन
बन गुहा बास करै सिंह प्रात पौन॥
नाचत आवत पात पात हिहिनात
तुरग चलत चाल पवन प्रभात।
आवै गुंजरत रस फूलन को लेत
प्रात को पवन भौंर सोभा अति देत।
सौरभ सुमद धारा ऊंचौ किए मस्त
गज सो आवत चल्यौ पवन प्रसस्त॥
फुलावत हिय कंज जीवन सुखद
सज्जन सो प्रात पवन सोहै बिना मद।
दिसा प्राची लाल करै कुमुदी लजाय
होरी को खिलार सो पवन सुख पाय॥
भौंर शिष्य मन्त्र पढ़े धर्म्म कर्म्म वन्त
प्रात को समीर आवै साधु को महन्त।
सौरभ को दान देत मुदित करत
दाता बन्यो प्रात पौन देखो री चलत॥
पातन कंपावै लेत पराग खिराज
आवत गुमान भज्यौ समीरन राज।
गावैं भौंर गूंजि पात खरक मृदंग
गुनी को अखारो लिए प्रात पौन संग॥

प्रात समीरन

मन्द मन्द आवै देखो प्रात समीरन
करत सुगन्ध चारों, ओर विकीरन।
गात सिहरात तन लगत सीतल
रैन निद्रालस जन सुखद चंचल॥
नेत्र सीस सीरे होत सुख पावै गात
आवत सुगन्ध लिए पवन प्रभात।
वियोगिनी विदारन मन्द मन्द गौन
बन गुहा बास करै सिंह प्रात पौन॥
नाचत आवत पात पात हिहिनात
तुरग चलत चाल पवन प्रभात।
आवै गुंजरत रस फूलन को लेत
प्रात को पवन भौंर सोभा अति देत।
सौरभ सुमद धारा ऊंचौ किए मस्त
गज सो आवत चल्यौ पवन प्रसस्त॥
फुलावत हिय कंज जीवन सुखद
सज्जन सो प्रात पवन सोहै बिना मद।
दिसा प्राची लाल करै कुमुदी लजाय
होरी को खिलार सो पवन सुख पाय॥
भौंर शिष्य मन्त्र पढ़ै धर्म्म कर्म्म वन्त
प्रात को समीर आवै साधु को महन्त।
सौरभ को दान देत मुदित करत
दाता बन्यो प्रात पौन देखो री चलत॥
पातन कंपावै लेत पराग खिराज
आवत गुमान भज्यौ समीरन राज।
गावैं भौंर गूंजि पात खरक मृदंग
गुनी को अखारो लिए प्रात पौन संग॥

काम में चैतन्य करै देत है जगाय
मित्र उपदेस बन्यो भोर पौन आय।
पराग को मौर दिए पच्छी बोल बाज
ब्याहन आवत प्रात पौन चल्यौ आज॥
आप देत थपकी गुलाब चुटका
बालक खिलावै देखो प्रात की बयार।
जगावत जीव जग करत चैतन्य
प्रान तत्व सम प्रात आवे धन्य धन्य॥
गुटकत पच्छी धुनि उड़े सुख होत
प्रात पौन आवै वन्यो सुन्दर कपोत।
नव मुकुलित पद्म पराग के बोझ
भारवाही पौन चलि सकत न सोझ॥
छुअत सीतल सबै होत गात आत
स्नेही के परस सप्त पवन प्रभात॥
लिए जात्री फूल गन्ध चलै तेज धाय
रेल रेल आवै लखि रेल प्रात वाय॥
विविध उपमा धुनि सौरभ को भौन
उड़त अकास कवि मन किधौं पौन।
अंग सिहरात छूए उड़त अंचल
कामिनी को पति प्रात पवन चंचल॥
प्रात समीरन सोभा कही नहिं जाय
जगत उद्योगी करै आलस नसाय।
जागै नारी नर लगै निज निज काम
पंछी चहचह बोलैं ललित ललाम॥
कोई भजै राम राम कोई गंगा न्हाय
कोई सजि वस्त्र अंग काज हेत जाय।
चटकै गुलाब फूल कमल खिलत
कोई मुख बन्द करैं परन हिलत॥
गावत प्रभाती बाजै मन्द मन्द ढोल
कहूं करैं द्विजगन जय जय बोल।
बजै सहनाई कहूं दूर सों सुनाय
भैरवी की तान लेत चित्त को चुराय॥
उड़त कपोत कहूं काग करै रोर
चुहू चुहू चिरैयन कीनो अति सोर।

बोलैं तम चोर कहूं ऊंचो करि माथ
अल्ला अकबर करैं मुल्ला साथ साथ॥
बुझी लालटेन लिए झुकि रहे माथ
पहरू लटकि रहे लम्बो किए हाथ॥
स्वान सोये जहां तहां छिपि रहे चोर
गऊ पास बच्छन अहीर देत छोर॥
दही फल फूल लिए ऊंचे बोलैं बोल
आवत ग्रामीन जन चले टोल टोल।
सड़क सफाई होत करि छिड़काव
बग्गी बैठि हवा खाते आवैं उमराव॥
काज़ व्यग्र लोग धाए कंधन हिलाय
से कटि चुस्त बने पगड़ी सजाय।
सोई वृत्ति जागीं सब नरन के चित्त
बुरी भली सबै करैं लीक जौन नित्त॥
चले मनसूबा लोक थोकन के जौन
मार पीट दान धर्म काम काज भौन।
व्यास बैठे घाट घाट खोलि कै पुरान
ब्राह्मन पुकारै लगे हाय हाय दान॥
अरुन किरिन छाई दिसा भई लाल
घाट नीर चमकन लागे तौन काल।
दीप जोति उडुगन सह मन्द मन्द
मिलत चकई चका करत अनन्द॥
प्रलय पीछे सृष्टि सम जगत लखाय
मानो मोह बीत्यौं भयो ज्ञानोदय आय।
प्रात पौन लागे जाग्यौ कवि 'हरीचन्द'
ताकी स्तुति करि कहौ यह बंग छन्द॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका खंड 2, संख्या 1, अक्टूबर सन 1874 ई. में प्रकाशित]

[यह कविता बंगला छन्द 'पयार' में लिखी गई है।]

बकरी बिलाप

सन 1874 ई.

बकरी बिलाप

सरद निसा निरमल दिसा गरद रहित नभ स्वच्छ।
सब के मन आनन्द बढ़्यौ लखि आगम दिन अच्छ ॥1॥
पितृ पक्ष को जानि कै ब्राह्मन-मन सानन्द।
निरखहिं आश्विन मास सब ज्यौं चकोर गन चन्द ॥2॥
लखि आगम नवरात को सब को मन हुलसात।
लखन राम लीला ललित सजि सजि सबही जात ॥3॥
छुट्टी भई अदालतन आफिस सब भए बन्द।
फिरे पथिक सब भवन निज धरि धरि हिए अनन्द ॥4॥
बंगालिन के हूं भयो घर घर महा उछाह।
देवी पूजा की बढ़ी चित्त चौगुनी चाह ॥5॥
नाच लखन मद पान को मिल्यो आइ सुभ जोग।
दुरगा के परसाद सों मिलिहैं सब ही भोग ॥6॥
कोउ गावत कोऊ हंसत मंगल करन बिचार।
आगतपतिका बनि रहीं परदेसिन की नारि ॥7॥
ऐसे आनन्द के समय बकरी अति अकुलाय।
निज सिसु गन लै गोद में करत दीन बनि हाय ॥8॥
घोर सरद सांपिनि समै मोसो दुखिया कौन।
जाके सुत सब नासिहैं बलिदायक अघ भौन ॥9॥
माता को सुत सो नहीं प्यारो जग में कोय।
ताकैं परम वियोग में क्यों न मरैं हम रोय ॥10॥
जिनके सिसु ह्वै कै मरें ते जानहिं यह पीर।
बांझ गरभ की बेदना जानै कहा सरीर ॥11॥
अपने बच्चन देखि कै हरो हमारो सोग।
मेरो दुःख अनुभव करौ तुमहु कुटुम्बी लोग ॥12॥

दूध देत नित तृन चरत करत ना कछू बिगार।
ताहू पैं मम यह दसा रे निर्दय करतार ॥13॥
पुत्र सोगिनी ही रह्यौ जो पै करनो मोहिं।
तौ रे बिधि मम रचन सों कहा सिरान्यौ तोहिं ॥14॥
रे रे बिधि सब बिधि अबिधि आजु अबिधि तैं कीन।
बधि बधि कै मेरे सुअन महा सोक मोहिं दीन ॥15॥
सुरति करत जिय अति जरत मरत रोय करि हाय।
बलि यह बलिजा नाम सौ हीयो उलटत जाय ॥16॥
सुख गद्गद तन स्वेद कन कंठहु रुंध्यो जात।
उलट्यो परत करेजवा जिय अतिही अकुलात ॥17॥
कहां जायं कासों कहैं कोउ न गुनिबे जोग।
खांव खांव करि धाय सब हमहिं लगावत भोग ॥18॥
जदपि नारि दुःख जानहीं मेरो सहित बिवेक।
पै ते पति मति मैं रंगीं बरजहिं तिन्हैं न नेक ॥19॥
मानुष जन सों कठिन कोउ जन्तु नाहिं जग बीच।
बिकल छोड़ि मोहिं पुत्र लै हनत हाय सब नीच ॥20॥
बृथा जवन कौं दूसहीं करि बैदिक अभिमान।
जो हत्यारो सोइ जवन मेरे एक समान ॥21॥
धिक् धिक् ऐसे धरम जो हिंसा करत विधान।
धिक् धिक् ऐसो स्वर्ग जौ बध करि मिलत महान ॥22॥
शास्त्रन को सिद्धान्त यह पुण्य सु पर उपकार।
पर पीड़न सों पाप कछु बढ़ि के नहिं संसार ॥23॥
जज्ञन में जप जज्ञ बढ़ि अरु सुभ सात्विक धर्म।
सब धर्मन सों श्रेष्ठ है परम अहिंसा धर्म ॥24॥
पूजा लै कहं तुष्ट नहिं धूप दीप फल अन्न।
जौ देबी बकरा बधे केवल होत प्रसन्न ॥25॥
हे बिस्वम्भर! जगत पति जग स्वामी जगदीस।
हम जग के बाहर कहा जो काटत मम सीस ॥26॥
जगन्मात! जगदम्बिके! जगत, जननि जग रानि।
तुव सन्मुख तुव सुतन को सिर काटत क्यौं जानि ॥27॥
क्यौं न खींचि के खड्ग तुम सिंहासन तें धाइ।
सिर काटत सुत बधिक कौ क्रोधित बलि ढिग आइ ॥28॥
त्राहि त्राहि तुमरी सरन मैं दुखिनी अति अम्ब।
अब लम्बोदर जननि बिनु मोकों नहिं अवलम्ब ॥29॥

निर अपराध गरीब हम सब बिधि बिना सहाय।
हे षटमुख गजमुख जननि तुम समझौ मम हाय ॥30॥
पुत्रवती बिनु जानई को सुत बिछुरन पीर।
यासों मोहिं अब दै अभय जननि धरावहु धीर ॥31॥
एहि बिधि बहु बिलपत परी बकरी अति आधीन।
हे करुना बरुनायतन द्रवहु ताहि लखि दीन ॥32॥

[कविवचन सुधा संख्या 2, अक्टूबर सन 1874 ई. में प्रकाशित]

बन्दर सभा

सन 1879 ई.

बन्दर सभा

(इन्दर सभा उरदू में एक प्रकार का नाटक है वा नाटकाभास है और यह बन्दर सभा उस का भी आभास है)

[आना राजा बन्दर का बीच सभा के]

सभा में दोस्तो बन्दर की आमद जामद है।
गधे औ फूलों के अफसर की आमद आमद है।
मरे जो घोड़े तो गदहा य बादशाह बना।
उसी मसीह के पैकर की आमद आमद है॥
व मोटा तन व थुंदला मू व कुच्ची आंख
व मोटे ओंठ मुछन्दर की आमद आमद है।
है खर्च खर्च तो आमद नहीं खर मुहरे की
उसी बिचारे नए खर की आमद आमद है॥1॥

[चौबोले जबानी राजा बन्दर के बीच अहवाल अपने के]

पाजी हूं मैं कौम का बन्दर मेरा नाम।
बिन फुजूल कूदे फिरे मुझे नहीं आराम॥
सुनो रे मेरे देव रे दिल को नहीं करार।
जल्दी मेरे वास्ते सभा करो तैयार॥
लाओ जन्नां को मेरे जल्दी जाकर ह्यां।
सिर मूड़ैं गारत करैं मुजरा करैं यहां॥2॥

[आना शुतुरमुर्ग परी का बीच सभा के]

आज महफिल में शुतुरमुर्ग परी आती है।
गोया महफिल से व लैली उतरी आती है॥

तेल औ पानी से पट्टी है संवारी सिर पर।
मुंह पै मांझा दिए जल्लादो जरी आती है॥
झूठे पट्टे की है मूबाफ पड़ी चोटी में।
देखते ही जिसे आंखों में तरी आती है॥
पान भी खाया है मिस्सी भी जमाई होगी।
हाथ में पायंचा लेकर निखरी आती है॥
मार सकते हैं परिन्दे भी नहीं पर जिस तक।
चिड़िया वाले के यहां अब व परी आती है॥
जाते ही लूट लूं क्या चीज़ खसोटूं क्या शै।
बस इसी फिक्र में वह सोच भरी आती है॥3॥

[ग़ज़ल जवानी शुतुरमुर्ग परी हसब हाल अपने के]

गाती हूं मैं औ नाच सदा काम है मेरा।
ए लोगो शुतुरमुर्ग परी नाम है मेरा॥
फन्दे से मेरे कोई निकलने नहीं पाता।
इस गुलशने आलम में बिछा दाम है मेरा॥
दो चार टके ही पै कभी रात गंवा दूं।
कारूं का खजाना कभी इनआम है मेरा॥
पहले जो मिले कोई तो जी उसका लुभाना।
बस कार यही तो सहरो शाम है मेरा॥
शुरफा व रुजला एक हैं दरबार में मेरे।
कुछ खास नहीं फैज तो इक आम है मेरा॥
बन जाएं जुगत् तब तो उन्हें मूड़ ही लेना।
खाली हीं तो कर देना धता काम है मेरा॥
जर मजहबो मिल्लत मेरा बन्दी हूं मैं जर की।
जर ही मेरा अल्लाह है जर राम है मेरा॥4॥

[छन्द जबानी शुतुरमुर्ग परी]

राजा बन्दर देस मैं रहें इलाही शाद।
जो मुझ सी नाचीज को किया सभा में याद॥
किया सभा में याद मुझे राजा ने आज।
दौलत माल खजाने की मैं हूं मुहताज॥
रुपया मिलना चाहिए तख्त न मुझको ताज।
जग में बात उस्ताद की बनी रहे महराज॥5॥

[ठुमरी जवानी शुतुरमुर्ग परी के]

आई हूं मैं सभा में छोड़ के घर।
लेना है मुझे इनआम में जर॥
दुनिया में है जो कुछ सब जर है।
बिन जर के आदमी बन्दर है॥
बन्दर जर हो तो इन्दर है।
जर ही के लिए कसबो हुनर है॥6॥

[ग़ज़ल शुतुरमुर्ग परी की बहा के मौसिम में]

आमद से बसन्तों के है गुलजार बसन्ती।
है फर्श बसन्ती दरो दीवार बसन्ती॥
आंखों में हिमाकत का कंवल जब से खिला है।
आते हैं नजर कूच ओ बाजार बसन्ती॥
अफयूं मदक चरस के व चंडू के बदौलत।
यारों के सदा रहते हैं रुखसार बसन्ती॥
दे जाम मये गुल के मये जाफरान के।
दो चार गुलाबी हों तो दो चार बसन्ती॥
तहवील जो खाली हों तो कुछ कर्ज मंगा लो।
जोड़ा हो परी जान का तय्यार बसन्ती॥7॥

[होली जवानी शुतुरमुर्ग परी के]

पा लागों कर जोरी भली कीनी तुम होरी।
फाग खेलि बहु रंग उड़ायो और धूर भरि झोरी॥
धूंधर करो भली हिलि मिलि कै अन्धाधुन्ध मचोरी।
न सूझत कछु चहुं ओरी॥
बने दीवारी के बबुआ घर लाइ भली विधि होरी।
लगी सलोनो हाथ चरहु अब दसमी चैन करो री॥
सबै तेहवार भयो री॥8॥

(फिर कभी)

[इन्दर सभा के तर्ज पर भारतेन्दु ने बन्दर सभा लिखना प्रारम्भ किया था। इस रचना का इतना ही अंश उपलब्ध है। यह हरिश्चन्द्र चन्द्रिका जुलाई सन 1879 ई. में प्रकाशित हुई थी।]

चतुरंग

बीस, तीस, चौबीस, सात, तेरह, उन्निस कहि।
चारुक, दस, पच्चीस, बयालिस, सत्तावन लहि॥
इक्कावन, छत्तिस, इक्किस, एकतिस, सोलह, खट।
बारह, द्वै, सत्रह; सत्ताइस, तैंतिस गिन झट॥
पच्चास, साठ, तैंतालिस, सैंतिस, चौवन, चौंसठ लहिय।
सैंतालिस, बासठ, छप्पन, उन्तालिस, पैंतालिस कहिय ॥1॥

पैंतिस, एकतालिस, अट्ठावन; बावन को गठ।
छियालिस, एकसठ, पचपन, चालिस, तेइस अठ॥
चौदह, उनतिस, चौवालिस, चौंतिस, उनचासो।
उनसठ, तिरपन, तिरसठ, अड़तालिस प्रकासो॥
अड़तिस, बत्तिस, 'हरिचन्द' पन्द्रह, सुपांच, बाईस लहि।
अट्ठाइस, ग्यारह, छबिस, नव, तीन, अठारह, एक कहि ॥2॥

चतुर जनन को खेल चारु चतुरंग नाम को।
तामैं चपल तुरंग चलत द्वय अर्द्ध धाम को॥
जिमि कोउ विज्ञ सवार बाजि चढ़ि व्यूह मांह धसि।
फेरै तेहि सब ठौर कठिन यद्यपि चाबुक कसि॥
तिमि चौंसठहू घर मैं फिरै बाजि अंक सब ये कहहु।
'हरिचन्द' रसिक जन जानि एहि नित चित परमानन्द लहहु ॥3॥

[3 अगस्त, सन 1872 ई. की 'कविवचन सुधा' में प्रकाशित। 'चतुरंग' एक प्रिय खेल था जिसे प्रायः राजपरिवार के या रईस लोग खेला करते थे। इस खेल में 64 घर होते थे जिन पर घोड़ा दौड़ाया जाता था। घोड़ा दौड़ाने के कुछ निश्चित नियम थे। ऊपर दिए गए इन तीनों छप्पयों को याद कर लेने से चतुरंग का खिलाड़ी सभी घरों में घोड़ा दौड़ा सकता था।—सम्पा.]

दशरथ विलाप

कहां हौ ए हमारे राम प्यारे।
किधर तुम छोड़ मुझको सिधारे?
बुढ़ापे में य दुख भी देखना था।
इसी के देखने को मैं बचा था।
छिपाई है कहां सुन्दर वह मूरत?
दिखा दो सांवली सी मुझको सूरत।
छिपे हो कौन से परदे में बेटा।
निकल आओ कि अब मरता है बुड्ढा।
बुढ़ापे पर दया मेरे जो करते।
तो बन की ओर क्यौं तुम पैर धरते।
किधर वह वन है जिस में राम प्यारा।
अजुध्या छाड़कर सूनी सिधारा।
गई संग में जनक की जो लली है।
इसी से और मुझको बे कली है।
कहेंगे क्या जनक यह हाल सुनकर।
कहां सीता कहां वन वह भयंकर।
गया लक्ष्मन भी उसके साथ ही साथ।
तड़फता रह गया मलते ही मैं हाथ।
मेरी आंखों की वह पुतली कहां है।
बुढ़ापे की मेरी लकड़ी कहां है।
कहां ढूंढू मुझे कोई बता दो।
मेरे बच्चों को बस मुझसे मिला दो।
लगी है आग छाती में हमारे।
बुझाओ कोई उनका हाल कह के।
मुझे सूना दिखता है जमाना।
कहीं भी अब नहीं मेरा ठिकाना।

अंधेरा हो गया घर हाय मेरा।
हुआ क्या मेरे हाथों का खिलौना।
मेरा धन लूटकर के कौन भागा।
भरे घर को मेरे किसने उजाड़ा।
हमारा बोलता तोता कहां है।
अरे वह राम सा बेटा कहां है।
कमर टूटी न बस अब उठ सकैंगे।
अरे बिन राम के रो रो मरैंगे।
कोई कुछ हाल तो आकर के कहता।
है किस वन में मेरा प्यारा कलेजा।
हवा और धूप में कुम्हला के थक कर।
कहीं साये में बैठे होंगे रघुवर।
जो डरती देख कर मिट्टी का चीता।
वह वन वन फिर रही है आज सीता।
कभी उतरीं न सेजों से जमीं पर।
वह फिरती है पियादे आज दर दर।
न निकली जान तक बे हया हूं।
भला मैं राम बिन क्यों जी रहा हूं।
मेरा है वज्र का लोगो कलेजा।
कि इस दुख पर नहीं अब भी य फटता।
मेरे जीने का दिन बस हाय बीता।
कहां हैं राम लछमन और सीता।
कहो मुखड़ा तो दिखला जायें प्यारे।
न रह जायें हवस जी में हमारे।
हमारे राम, मेरे राम, ये राम।
मेरे प्यारे, मेरे बच्चे, मेरे श्याम।
मेरे जीवन मेरे सर्बस मेरे प्रान।
हुए क्या हाय मेरे राम भगवान।
हमारे राम हा प्रानों से प्यारे।
यह कह दशरथ जी सुरपुर को सिधारे॥

[अयोध्याप्रसाद खत्री स्मारक ग्रंथ से साभार]

बसन्त

फागुन के दिन बीत चले अब ऋतु बसन्त आई,
बदला समा चली झोंके से झखी पुरवाई।
गर्मी के आगम दिखलाये रात लगी घटने,
कुहू कुहू कोइल पेड़ों पर बैठ लगी रटने।
पक चले धान, पान, पेंड, पीले, आम भी बौराने,
हुई पतझार, लगे कोपल पत्ते फिर आने।
ठंडा पानी लगा सुहाने, आलस तन आई,
फूले सिरिस फूल की खुशबू कोसों तक छाई
बागों में कचनार वनों में टेसू हैं फूले,
मदमाते भौंरे फूलों पर फिरते हैं भूले।
एक रंग पीली सरसों खेतों में लहराती,
बीच बीच में कली कुसुम की फूली छब पाती।
कहिं तीसी कहिं रहर, कहीं जौ, फूले मन भाये,
गेंदे बांध कतार बाग में नया रंग लाये।
फूले नारंगी, कोला[1], औ, मीठे नींबू की,
चारों तर्फ बाग में फैली लपट व खुशबू की।

[अयोध्याप्रसाद खत्री स्मारक ग्रंथ से साभार]

1. लन्दन प्रतिः—1—कौला।

बर्सात

सब को सुखदाई, अति मन भाई, सुन्दर वर्षा आई है,
दामिनी दमकती, चपल चमकती, नभ में अति छबि छाई है।
कासनी, चमेली, जूही, बेली, कदम बृक्ष में फूले हैं,
तितली संचारैं, कर गुंजारैं भौंरे जिन पर भूले हैं।
बादल रंग रंगी, सैनी जंगी, विजली तोप तुरंगी है,
बूदों की गोली, गर्जन बोली, बर्सा फौज फिरंगी है।
धूए से बादल, जल ही का बल, अनल बीजुली झेली है,
सीठी दे चलती, बेग उबलती, पावस रेला रेली है।
गरजन के तबले, मोर सरंगी, भेकताल धुनि जांची है,
बादल के कपड़े, वीजु रोसनी, वर्षा पातुर नाची है।
धर्म्मो को छोड़ो, गरज सुनाता, सुनता जो कि अधूरा है,
बपतिस्मा पानी दे क्रिस्तानी घन यह पादरी पूरा है।
बादल की पालैं, धुएं की जालैं छोड़े दौड़ा जाता है,
पावस नभ सागर, सब गुन आगर, जोर जहाज दिखाता है
घन उक्ति सुहाई, कबिमन भाई, अर्थ बीजुली भाती है,
जल रस बर्साती, सदा सुहाती, बर्सा कविता आती है।
रंग रंग के बादल जोड़ जोड़ दल चले गरजते आते हैं,
नारंगी पीले लाल औ' नीले, सावन सांझ दिखाते हैं।
कहीं कोयल बोलैं, करैं कलोलैं, कूकैं मोर सुहाये हैं,
टर्राते दादुर, बाक बहादुर, झींगुर झनक लगाये हैं,
गिर रहे करारे, नदी किनारे, जल का शोर सुनाता है,
खंडहर पै ठनकत, सांप खनकते सुन कर जी डर जाता है।
हुई रात अंधेरी बदली घेरी, हाथ से हाथ न दिखलाता,
घर से न निकलता, राह न चलता, कोई न मग आता जाता।

[अयोध्याप्रसाद खत्री स्मारक ग्रन्थ से साभार]

नए जमाने की मुकरी

सन 1884 ई.

नए जमाने की मुकरी

जब सभाविलास संगृहीत हुई थी, तब वैसा ही काल था कि (क्यौं सखि सज्जन ना सखि पंखा) इस चाल की मुकरी लोग पढ़ते पढ़ाते थे किन्तु अब काल बदल गया तो उस के साथ् मुकरियां भी बदल गईं। बानगी दस पांच देखिए–

सब गुरुजन को बुरो बतावै।
अपनी खिचड़ी अलग पकावै॥
भीतर तत्व न झूठो तेजी।
क्यों सखि सज्जन नहिं अंगरेजी॥1॥

तीन बुलाए तेरह आवैं।
निज निज बिपता रोइ सुनावैं॥
आंखौ फूटे भरा न पेट।
क्यों सखि सज्जन नहिं ग्रैजुएट॥2॥

सुन्दर बानी कहि समुझावै।
विधवागन सों नेह बढ़ावै॥
दयानिधान परम गुनआगर।
सखि सज्जन नहिं विद्यासागर॥3॥

सीटी देकर पास बुलावै।
रुपया ले तो निकट बिठावै॥
ले भागै मोहिं खेलहि खेल।
क्यों सखि सज्जन नहिं सखि रेल॥4॥

धन लेकर कछु काम न आव।
ऊंची नीची राह दिखाव॥
समय पड़े पर साधै गुंगी।
क्यों सखि सज्जन नहिं सखि चुंगी॥5॥

मतलब ही की बोलै बात
राखै सदा काम की घात॥

डोले पहिने सुन्दर समला।
क्यों सखि सज्जन नहिं सखि अमला ॥6॥
रूप दिखावत सरबस लूटै।
फंदे मैं जो पड़ै न छूटै॥
कपट कटारी जिय मैं हूलिस।
क्यों सखि सज्जन नहिं सखि पूलिस ॥7॥
भीतर भीतर सब रस चूसै।
हंसि हंसि कै तन मन धन मूसै ॥
जाहिर बातन में अति तेज।
क्यों सखि सज्जन नहिं अंगरेज ॥8॥
सतएं उठाएं मों घर आवै।
तरह तरह की बात सुनावै॥
घर बैठा ही जोड़ै तार।
क्यों सखि सज्जन नहिं अखबार ॥9॥
एक गरभ मैं सौ सौ पूत।
जनमावै ऐसा मजबूत॥
करै खटाखट काम सयाना।
सखि सज्जन नहिं छापाखाना ॥10॥
नई नई नित तान सुनावै।
अपने जाल में जगत फंसावै॥
नित नित हमैं करै बल सून।
क्यों सखि सज्जन नहिं कानून ॥11॥
इनकी उनकी खिदमत करो।
रुपया देते देते मरो॥
तब आवैं मोहिं करन खराब।
क्यों सखि सज्जन नहीं खिताब ॥12॥
लंगर छोड़ि खड़ा हो झूमै।
उलटी गति प्रतिकूलहि चूमै ॥
देस देस डोलै सजि साज।
क्यों सखि सज्जन नहीं जहाज ॥13॥
मुंह जब लागै तब नहिं छूटै।
जाति मान धन सब कुछ लूटै॥
पागल करि मोहिं करे खराब।
क्यों सखि सज्जन नहीं सराब ॥14॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका के खंड 11, सं. 1 में सन 1884 ई. में प्रकाशित]

हिन्दी की उन्नति पर व्याख्यान

सन 1877 ई.

हिन्दी की उन्नति पर व्याख्यान

अहो अहो मम प्रान प्रिय आर्य भ्रातृ गन आज।
धन्य दिवस जो यह जुड़ो हिन्दी हेतु समाज॥1॥
तामें आदर अति दिये मोहिं तुम निज जन जान।
जो बुलवायो मोहिं इत दर्शन हित सन्मान॥2॥
जदपि न मैं जानत कछू सब विधि सों अति दीन।
तदपि भ्रात निज जानिकै सबन कृपा अति कीन॥3॥
भारत में यह देस धनि जहां मिलत सब भ्रात।
निज भाषा हित कटि कसे हम कहं आज लखात॥4॥
निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल॥5॥
पढ़े संस्कृत जतन करि पंडित भे विख्यात।
पै निज भाषा ज्ञान बिन कहि न सकत एक बात॥6॥
पढ़े फारसी बहुत विध तौहू भये खराब।
पानी खटिया तर रहो पूत मरे बकि आब॥7॥
अंग्रेजी पढ़ि के जदपि सब गुन होत प्रवीन।
पै निज भाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन॥8॥
यह सब भाषा काम की जब लौं बाहर बास।
घर भीतर नहिं कर सकत इन सों बुद्धि प्रकास॥9॥
नारि पुत्र नहिं समझहीं कुछ इन भाषन माहिं।
तासों इन भाषन सों काम चलत कछु नाहिं॥10॥
उन्नति पूरी है तबहि जब घर उन्नति होय।
निज सरीर उन्नति किए रहत मूढ़ सब लोय॥11॥
पिता बिबिध भाषा पढ़े पुत्र न जानत एक।
तासों दोउन मध्य में रहत प्रेम अविवेक॥12॥

अंग्रेजी निज नारि को कोउ न सकत पढ़ाइ।
नारि पढ़े बिन एक हू काज न चलत लखाइ॥13॥
गुरु सिखवत बहु भांति लौं जदपि बालकन ज्ञान।
पै माता शिक्षा सरिस, होत तौन नहिं ज्ञान॥14॥
जब अति कोमल जिय रहत तब बालक तुतरात।
भूलत नहिं सो बात जो तबै सिखाई जात॥15॥
भूलि जात बहु बात जो जोबन सीखत लोय।
पै भूलत नहिं बालकन सीख्यो सुनो जो होय॥16॥
जिमि लै कांची मृत्तिका सब कछु सकत बनाय।
पै न पकाए पर चलत तामें कछू उपाय॥17॥
कांचे पर तासों बनत जो कछु सो रह जात।
चिन्ह सदा तिमि बाल सिसु शिक्षा नाहिं भुलात॥18॥
सो सिसु शिक्षा मातु बस जो करि पुत्रहि प्यार।
खान पान खेलन समय सकत सिखाय बिचार॥19॥
लाल पुत्र करि चूमि मुख बिबिध प्रकार खेलाइ।
माता सब कछु पुत्र को सहजहिं सकत दिखाइ॥20॥
सो माता हिन्दी बिना कछु नहिं जानत और।
तासों निज भाषा अहै, सबही की सिरमौर॥21॥
पढ़ो लिखो कोउ लाख बिध भाषा बहुत प्रकार।
पै जबही कछु सोचिहो निज भाषा अनुसार॥22॥
सुत सों तिय सों मीत सों भृत्यन सों दिन रात।
जो भाषा मधि कीजिये निज मन की बहु बात॥23॥
ता की उन्नति के किये सब विधि मिटत कलेस।
जामें सहजहि देस कौ इन सब को उपदेश॥24॥
जद्यपि बाहर के जनन गुन सों देत रिझाय।
पै निज घर के लोग कहं सकत नाहिं समझाय॥25॥
बाहर तो अति चतुर बनि कीनो जगत प्रबन्ध।
पै घर को व्यवहार सब रहत अन्ध को अन्ध॥26॥
कै पहिने पतलून कै भये मौलबी खास।
पै तिय सके रिझाय नहिं जो गृहस्थ सुख बास॥27॥
इनकी सो अति चतुरता तिनको नाहिं सुहात।
ताही सों प्राचीन कवि कही भली यह बात॥28॥
खसम जो पूजै देहरा भूत पूजनी जोय।
एकै घर में दो मता कुशल कहां से होय॥29॥

तासों जब सब होहिं घर विद्या बुद्धि निधान।
होइ सकत उन्नति तबै और उपाय न आन॥30॥
निज भाषा उन्नति बिना कबहुं न ह्वैहै सोय।
लाख अनेक उपाय यों भले करो किन कोय॥31॥
इक भाषा, इक जीव इक मति सब घर के लोग।
तबै बनत है सबन सों मिटत मूढ़ता सोग॥32॥
और एक अति लाभ यह यामें प्रगट लखात।
निज भाषा में कीजिये जो विद्या की बात॥33॥
तेहि सुनि पावैं लाभ सब बात सुनै जो कोय।
यह गुन भाषा और महं कबहूं नाहीं होय॥34॥
लखहु न अंगरेजन करी उन्नति भाषा मांहिं।
सब विद्या के ग्रन्थ अंगरेजिन मांह लखाहिं॥35॥
शब्द बहुत परदेस के उच्चारनहु न ठीक।
लिखत कछू पढ़ि जात कछु सब बिधि परम अलीक॥36॥
पै निज भाषा जानि तेहि तजत नहीं अंगरेज।
दिन दिन याही को करत उन्नति पै अति तेज॥37॥
बिबिध कला शिक्षा अमित ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देसन से लै करहु भाषा मांहिं प्रचार॥38॥
जहां जौन को गुन लह्यो लियो जहां सो तौन।
ताहीं सों अंगरेज अब सब बिद्या के भौन॥39॥
पढ़ि बिदेस भाषा लहत सकल बुद्धि को स्वाद।
पै कृतकृत्य न होत ये बिन कछु करि अनुवाद॥40॥
तुलसी कृत रामायनहु पढ़त जबै चित लाय।
तब ताको आसय लिखत भाषा मांहिं बनाय॥41॥
तासों सबहीं भांति है इनकी उन्नति आज।
एकहि भाषा मंह अहे जिनकी सकल समाज॥42॥
धर्म जुद्ध विद्या कला गीत काव्य अरु ज्ञान।
सबके समझन जोग है भाषा मांहिं समान॥43॥
भारत में सब भिन्न अति ताही सों उत्पात।
बिबिध देस मतहू बिबिध भाषा बिबिध लखात॥44॥
सौंप्यौं ब्राह्मन को धरम तेई जानत वेद।
तासों निज मत को लह्यो कोऊ कबहुं न भेद॥45॥

तिन जो भाष्यो सोइ कियो अनुचित जदपि लखात।
सपनहुं नहिं जानी कछू अपने मत की बात॥46॥
पढ़े संस्कृत बहुत बिध अंगरेजी हू आप।
भाषा चतुर नहीं भये हिय को मिट्यो न ताप॥47॥
तिमि जग शिष्टाचार सब मौलवियन आधीन।
तन सों सीखे बिनु रहत भये दीन के दीन॥48॥
बैठनि बोलनि उठनि पुनि हंसनि मिलनि बतरान।
बिन पारसी न आवही यह जिय निश्चय जान॥49॥
तिमि जग की विद्या सकल अंगरेजी आधीन।
सबै जानि ताके बिना रहै दीन के दीन॥50॥
करत बहुत बिधि चतुरई तऊ न कछू लखात।
नहिं कछु जानत तार में खबर कौन बिधि जात॥51॥
रेल चलत केहि भांति सों कल है काको नांव।
तोप चलावत किमि सबै जारि सकल जो गांव॥52॥
वस्त्र बनत केहि भांति सों कागज केहि बिधि होत।
काहि कबाइद कहत हैं बांधत किमि जल सोत॥53॥
तुरन्त फोटोग्राफ किमि छिन मंह छाया रूप।
होय मनुष्यहि क्यों भये हम गुलाम ये भूप॥54॥
यह सब अंगरेजी पढ़े बिनु नहिं जान्यो जात।
तासों याको भेद नहिं साधारनहिं लखात॥55॥
बिना पढ़े अब या समै चलै न कोउ बिधि काज।
दिन दिन छीजत जात है या सों आर्य्य समाज॥56॥
कल के कल बल छलन सों छले इते के लोग।
नित नित धन सों घटत हैं बाढ़त है दुःख सोग॥57॥
मारकीन मलमल बिना चलत कछू नहिं काम।
परदेसी जुलहान के मानहु भये गुलाम॥58॥
वस्त्र कांच कागज कलम चित्र खिलौने आदि।
आवत सब परदेस सों नितहि जहाजन लादि॥59॥
इत की रूई सींग अरु चरमहि तित लै जाय।
ताहि स्वच्छ करि वस्तु बहु भेजत इतहि बनाय॥60॥

तिनही को हम पाइकै साजत निज आमोद।
तिन बिन छिन तृन सकल सुख, स्वाद बिनोद प्रमोद॥61॥
कछु तो बेतन में गयो कछुक राज कर माहिं।
बाकी सब व्यौहार में गयो रह्यौ कछु नाहिं॥62॥
निरधन दिन दिन होत है भारत भुव सब भांति।
ताहि बचाइ न कोउ सकत निज भुज बुधि बल कांति॥63॥
यह सब कला अधीन है तामें इतै न ग्रन्थ।
तासों सूझत नाहिं कछु द्रव्य बचावन पन्थ॥64॥
अंगरेजी पहिले पढ़ै पुनि विलायतहि जाय।
या विद्या को भेद सब तो कछु ताहि लखाय॥65॥
सो तो केवल पढ़न में गई जवानी बीति।
तब आगे का करि सकत होइ बिरध गहि नीति॥66॥
तैसहि भोगत दंड बहु बिनु जाने कानून।
सहत पुलिस की ताड़ना देत एक करि दून॥67॥
पै सब बिद्या की कहूं होइ जु पै अनुवाद।
निज भाषा महं तो सबै याको लहै सवाद॥68॥
जानि सकैं सब कछु सबहि बिबिध कला के भेद।
बनै बस्तु कल की इतै मिटै दीनता भेद॥69॥
राजनीति समझैं सकल पावहिं तत्व बिचार।
पहिचानैं निज धरम को जानैं शिष्टाचार॥70॥
दूजे के नहिं बस रहैं सीखैं बिबिध विवेक।
होइ मुक्त दोउ जगत के भोगैं भोग अनेक॥71॥
तासों सब मिलि छांड़ि कै दूजे और उपाय।
उन्नति भाषा की करहु अहो भ्रात गन आय॥72॥
बच्यौ तनिकहू समय नहिं तासों करहु न देर।
औसर चूके व्यर्थ की सोच करहुगे फेर॥73॥
प्रचलित करहु जहान में निज भाषा करि जत्न।
राज काज दरबार में फैलावहु यह रत्न॥74॥
भाषा सोधहु आपनी होइ सबै एकत्र।
पढ़हु पढ़ावहु लिखहु मिलि छपवावहु कछु पत्र॥75॥
बैर बिरोधहि छोड़ि कै एक जीव सब होय।
करहु जतन उद्धार को मिलि भाई सब कोय॥76॥
आल्हा बिरहहु को भयो अंगरेजी अनुवाद।
यह लखि लाज न आवई तुमहिं न होत बिखाद॥77॥

अंगरेजी अरु फारसी अरबी संस्कृत ढेर।
खुले खजाने तिनहिं क्यों लूटत लावहु देर॥78॥
सबको सार निकाल कै पुस्तक रचहु बनाइ।
छोटी बड़ी अनेक बिध बिबिध विषय की लाइ॥ 79॥
मेटहु तम अज्ञान को सुखी होहु सब कोय।
बाल वृद्ध नर नारि सब बिद्या संजुत होय॥80॥
फूट बैर को दूरि करि बांधि कमर मजबूत।
भारत माता के बनो भ्राता पूत सपूत॥81॥
देव पितर सबही दुखी कष्टित भारत माय।
दीन दसा निज सुतन की तिनसों लखी न जाय॥82॥
कब लौं दुःख सहिहौ सबै रहिहौ बने गुलाम।
पाइ मूढ़ कालो अरध सिक्षित काफिर नाम॥83॥
बिना एक जिय के भये चलिहै अब नहिं काम।
तासो कोरो ज्ञान तजि उठहु छोड़ि बिसराम॥84॥
लखहु काल का जग करत सोवहु अब तुम नाहिं।
अब कैसो आयो समय होत कहा जग माहिं॥85॥
बढ़न चहत आगे सबै जग की जेती जाति।
बल बुधि धन विज्ञान में तुम कहं अबहूं राति॥86॥
लखहु एक कैसे सबै मुसलमान क्रिस्तान।
हाय फूट इक हमहिं में कारन परत न जान॥87॥
बैर फूट ही सों भयो सब भारत को नास।
तबहु न छांड़त याहि सब बंधे गोह के फांस॥88॥
छोड़हु स्वारथ बात सब उठहु एक चित होय।
मिलहु कमर कसि भ्रातगन पावहु सुख दुःख खोय॥89॥
बीती अब दुःख की निसा देखहु भयो प्रभात।
उठहु हाथ मुंह धोइ कै बांधहु परिकर भ्रात॥90॥
या दुःख सों मरनो भलो, धिग जीवन बिन मान।
तासों सब मिलि अब करहु बेगहि ज्ञान बिधान॥91॥
कोरी बातन काम कछु चलिहै नाहिंन मीत।
तासों उठि मिलि कै करहु बेग परस्पर प्रीत॥92॥
परदेसी की बुद्धि अरु वस्तुन की करि आस।
परबस ह्वै कब लौं कहो रहिहौ तुम ह्वै दास॥93॥

काम खिताब किताव सौं अब नहिं सरिहै मीत।
तासों उठहु सिताब अब छांड़ि सकल भय भीत॥94॥
निज भाषा, निज धरम निज मान करम व्यौहार।
सबै बढ़ावहु बेगि मिलि कहत पुकार पुकार ॥95॥
लखहु उदित पूरब भयो भारत भानु प्रकास।
उठहु खिलावहु हिय कमल करहु तिमिर दुःख नास॥96॥
करहु बिलम्ब न भ्रात अब उठहु मिटावहु सूल।
निज भाषा उन्नति करहु प्रथम जो सब को मूल ॥97॥
लहहु आर्य्य भ्राता सबै विद्या बल बुधि ज्ञान।
मेटि परस्पर द्रोह मिलि होहु सबै गुन खान॥98॥

[नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा पुस्तकाकार प्रकाशित। भारतेन्दु ने यह कविता जून सन 1877 ई. की हिन्दीवर्द्धिनी सभा में पढ़ा था जो हिन्दी प्रदीप खंड-1, संख्या 1-2 में प्रकाशित हुई थी। चूंकि यह कविता सभा में पढ़ी गई थी, इसलिए इसे व्याख्यान नाम दिया गया है।]

उर्दू का स्यापा

सन 1874 ई.

उर्दू का स्यापा

अलीगढ़ इंस्टीट्यूट गज़ट और बनारस अखबार के देखने से ज्ञात हुआ कि बीबी उर्दू मारी गई और परम अहिंसानिष्ठ होकर भी राजा शिवप्रसाद ने यह हिंसा की—हाय हाय! बड़ा अन्धेर हुआ मानो बीबी उर्दू अपने पति के साथ सती हो गई। यद्यपि हम देखते हैं कि अभी साढ़े तीन हाथ की ऊंटनी सी बीबी उर्दू पागुर करती जीती है, पर हमको उर्दू अखबारों की बात का पूरा विश्वास है। हमारी तो कहावत है—"एक मियां साहेब परदेस में सरिश्तेदारी पर नौकर थे। कुछ दिन पीछे घर का एक नौकर आया और कहा कि मियां साहब, आप की जोरू रांड़ हो गई। मियां साहब ने सुनते ही सिर पीटा, रोए गाए, बिछौने से अलग बैठे, सोग माना, लोग भी मातम पुरसी को आए इन में उन के चार पांच मित्रों ने पूछा कि मियां साहब आप बुद्धिमान हो के ऐसी बात मुंह से निकालते हैं, भला आप के जीते आप की जोरू कैसे रांड़ होगी? मियां साहब ने उत्तर दिया—भाई! बात तो सच है, खुदा ने हमें भी अकिल दी है, मैं भी समझता हूं कि मेरे जीते मेरी जोरू कैसे रांड़ होगी। पर नौकर पुराना है, झूठ कभी न बोलैगा।" जो हो "बहरहाल हमें उर्दू का वाजिब है" तो हम भी यह स्यापे का प्रकर्ण यहां सुनाते हैं।

हमारे पाठक लोगों को रुलाई न आवै तो हंसने की भी उन्हें सौगन्द है, क्यौंकि हांसा तमासा नहीं बीबी उर्दू तीन दिन की पट्ठी अभी जवान कट्ठी मरी है।

अरबी, फारसी, पशतो, पंजाबी इत्यादि कई भाषा खड़ी होकर पीटती हैं

है है उर्दू हाय हाय। कहां सिधारी हाय हाय॥
मेरी प्यारी हाय हाय। मुंशी मुल्ला हाय हाय॥
बल्ला बिल्ला हाय हाय। रोय पीटैं हाय हाय॥
टांग घसीटैं हाय हाय। सब छिन सोचैं हाय हाय॥
डाढ़ी नोचैं हाय हाय। दुनिया उलटी हाय हाय॥
रोजी बिलटी हाय हाय। सब मुखतारी हाय हाय॥
किसने मारी हाय हाय। खबर नवीसी हाय हाय॥

दांत पीसी हाय हाय। एडिटर पोशी हाय हाय॥
बात फरोशी हाय हाय। वह लस्सानी हाय हाय॥
चरब जुबानी हाय हाय। शोख बयानी हाय हाय॥
फिर नहिं आनी हाय हाय॥

[हरिश्चन्द्र चन्द्रिका के जून सन 1874 ई. के अंक में प्रकाशित]

स्फुट कविताएं

स्फुट कविताएं

दोहे और सोरठे

है इत लाल कपोल व्रत कठिन प्रेम की चाल।
मुख सों आह न भाखिहैं निज सुख करो हलाल ॥1॥
प्रेम बनिज कीन्हो हुतो नेह नफा जिय जान।
अब प्यारे जिय की परी प्रान पुंजी में हान ॥2॥
तेरोई दरसन चहैं निस दिन लोभी नैन।
श्रवन सुनो चाहत सदा सुन्दर रस मै बैन ॥3॥
डर न मरन विधि बिनय यह भूत मिलैं निज बास।
प्रिय हित वापी मुकुर मग बीजन अंगन अकास ॥4॥
तन तरु चढ़ि रस चूसि सब फूली फली न रीति।
प्रिय अकास वेली भई तुव निर्मूलक प्रीति ॥5॥
पिय पिय रटि पियरी भई पिय री मिले न आन।
लाल मिलन की लालसा लखि तन तजत न प्रान ॥6॥
मधुकर धुन गृह दम्पती पन कीने मुकताय।
रमा बिना यक बिन कहै गुन बेगुनी सहाय ॥7॥
चार चार षट षट दोऊ अस्टादस को सार।
एक सदा द्वै रूप धर जै जै नन्दकुमार ॥8॥
नीलम और पुखराज दोउ जद्यपि सुख 'हरीचन्द'।
पै जो पन्ना होइ तो बाढ़ै अधिक अनन्द ॥9॥
नीलम नीके रंग को हौं लाई हौं बाल।
कहुं न देय तो होय गो अति अद्भुत अहवाल ॥10॥

जद्यपि है बहु दाम को यह हीरा री माय।
बनै तबै जब नीलमनि निकट जड़्यो यह जाय ॥11॥
नैन नवल 'हरीचन्द' गुन लाल असित सित तीन।
त्रिविध सक्ति त्रैदेव कै तिरवेनी के मीन ॥12॥
कहन दीन के बैन देहु बिधाता एक बर।
नहिं लागै ये नैन कोऊ सों जग नरन में ॥13॥
प्रेम प्रीति को बिरवा चलेहु लगाय।
सींचन की सुध लीजो मुरझि न जाय ॥14॥

सवैया

अब और के प्रेम के फन्द परे हमें पूछत कौन, कहां तू रहै।
अहै मेरेइ भाग की बात अहो तुम सों न कछू 'हरीचन्द' कहै॥
यह कौन सी रीत अहै हरिजू तेहि मारत हौ तुमको जो चहै।
वह भूलि गयो जो कही तुमने हम तेरे अहैं तू हमारी अहै॥1॥

हम चाहत हैं तुमको जिउ से तुम नेकहु नाहिंनै बोलती हौ।
यह मानहु जो 'हरीचन्द' कहै केहि हेत महाविष घोलती हौ॥
तुम औरन सों नित चाह करौ हमसों हिअ गांठ न खोलती हौ।
इन नैन के डोर बंधी पुतरी तुम नाचत औ जग डोलती हौ॥2॥

जा मुख देखन को नितही रुख दूतिन दासिन को अवरेख्यो।
मानी मनौतीहू देवन की 'हरीचन्द' अनेकन जोतिस लेख्यो॥
सो निधि रूप अचानक ही मग में जमुना जल जात मैं देख्यो।
शोक को थोक मिट्यो सब आजु असोक की छांह सखी पिय पेख्यो॥3॥

रैन में ज्यौंही लगी झपकी त्रिजटे सपने सुख कौतुक देख्यो।
लै कपि भालु अनेकन साथ मैं तोरि गढ़ै चहुं ओर परेख्यो॥
रावन मारि बुलावन मो कहं सानुज मैं अबहीं अवरेख्यो।
सोक नसावत आवत आजु असोक की छांह सखी पिय पेख्यो॥4॥

सदा चार चवाइन के डर सों नहिं नैनहु साम्हे नचायो करैं।
निरलज्ज भई हम तो पै डरै तुमरो न चवाव चलायो करैं॥
'हरीचन्द' जू वा बदनामिन के डर तेरी गलीन न आयो करैं।
अपनी कुल कानिहुं सों बढ़िकै तुम्हरी कुल कानि बचायो करैं॥5॥

तजि कै सब काम को तेरे गलीन में रोजहि रोज तो फेरो करै।
तुव बाट बिलोकत ही 'हरीचन्द' जू बैठि के सांझ सबेरो करै॥
पै सही नहिं जान भई बहुतै सो कहां कह लौं जिय छोरो करै।
पिय प्यारे तिहारे लिये कब लौं अब दूतिन को मुख हेरो करै॥6॥

आइये मो घर प्रान पिया मुखचन्द दया करि कै दरसाइये।
प्याइये पानिय रूप सुधा को बिलोकि इतैं दृग प्यास बुझाइये॥
छाइये सीतलता हरीचन्द जू हा हा लगी हियरे की बुझाइये।
लाइये मोहि गरे हंसि कै उर ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये॥7॥

कोऊ कलंकिनि भाखत है कहि कामिनिहू कोऊ नाम धरैगो।
त्रासत हैं घर के सिगरे अब बाहरीहू तो चवाव करैगो॥
दूतिन की इनकी उनकी 'हरीचन्द' सबै सहते ही सरैगो।
तेरेई हेत सुन्यो न कहा कहा औरहू का सुनिबो न परैगो॥8॥

मन लागत जाको जबै जिहिसौं करि दाया तो सोऊ निभावत है।
यह रीति अनोखी तिहारी नई अपुनो जहां दूनो दुखावत है॥
'हरीचन्द जू' बानो न राखत आपुनो दासहू ह्वै दुःख पावत है।
तुम्हरे जन होइ कै भोगैं दुखै तुम्हें लाजहू हाय न आवत है॥9॥

देखत पीठि तिहारी रहैंगे न प्रान कबौं तन बीच नवारे।
आओ गरे लपटौ मिलि लेहु पिया 'हरीचन्द' जू नाथ हमारे॥
कौन कहै कहा होयगो पाछे बनै न बनै कछु मेरे सम्हारे।
जाइयो पाछे विदेस भले करि लेन दे भेंट सखीन सों प्यारे॥10॥

पीवै सदा अधरामृत स्याम को भागन याको सुजात कहा है।
बाजै जबै बन में सजनी 'हरीचन्द' तबै मुधि मूल वहां है॥
छूटै सबै धन धाम अली हिय व्याकुलता सुनि होत महा है।
बेनु के बंस भई बंसुरी जो अनर्थ करै तो अचर्ज कहां है॥11॥

लै बदनामी कलंकिनि होइ चवाइन को कब लौं मुख चाहिए।
सासु जेठानिन की इनकी उनकी कब लौं सहि कै जिय दाहिए॥
ताहू पै एती रुखाई पिया 'हरीचन्द', की हाय न क्यौंहूं सराहिए।
का करिए मरिए केहि भांतिन नेह को नातो कहां लौ निबाहिए॥12॥

लखिकै अपने घर को निज सेवक भी सबै हाथ सदा धरिहैं।
हल सों सब दूषन खैंचि झटै सब बैरिन मूसल सों मरिहैं॥
अनुजै प्रिय जो सो सदा उनको प्रिय कारज ताको न क्यौं सरिहैं।
जिनके रछपाल गोपाल धनी तिनको बलभद्र सुखी करिहैं ॥13॥

अब प्रीत करी तौ निबाह करौ अपने जन सों मुख मोरिए ना।
तुम तो सब जानत नेह मजा अब प्रीत कहूं फिर जोरिए ना॥
'हरीचन्द' कहै कर जोर यही यह आस लगी तेहि तोरिए ना।
इन नैनन माहं बसो नित ही तेहि आंसुन सों अब बोरिए ना ॥14॥

यह काल कराल अहै कलि को 'हरीचन्द' कों नेक सोहातो नहीं।
धन धाम अराम हराम करौ अपनो तो कोऊ दरसातो नहीं॥
चित चाहत है चित चाह करै पर वाको निबाह लखातो नहीं।
दिल चाहत है दिल देइबे को दिलदार तो कोऊ दिखातो नहीं ॥15॥

कवित्त

आजु बृषभानुराय पौरी होरी होय रही
दौरी किसोरी सबै जोबन चढ़ाई मैं।
खेलत गोपाल 'हरीचन्द' राधिका के साथ
बुक्का एक सोहत कपोल की लुनाई मैं॥
कैधौं भयो उदित मयंक नभ बीच कैधौं
हीरा जस्यो बीच नीलमनि की जराई मैं।
कैधौं पस्यो कालिन्दी के नीर छीर कैधौं
गरक सुगोरी भई स्याम सुन्दराई मैं॥1॥

गोपिन की बात कौं बखानौं कहा नन्दलाल
तेरो रूप रोम रोम जिनके समाय गो।
बिरह बिथा से सब व्याकुल रहत सदा
'हरीचन्द' हाल वाकी कौन पै कहाय गो॥
आंसुन की प्रलय पयोधि बूड़ि जैहै जबै
डूबि डूबि सब ब्रह्मंडहू बिलाय गो।
पौंड़त फिरौगे आप नीर बीच होय जब
बिरह उसासन तैं बट जरि जाय गो॥2॥

तेरेई बिरह कान्ह रावरे कला निधान
मार बान मारै सदा गोपिन के घट पै।
व्याकुल रहत ताते रैन दिन आप बिन
धूर छाय रही देखौ नागिन सी लट पै॥
'हरीचन्द' देखे बिनु आज सब ब्रज बाल
बैठि कै बिसूरतीं कलिंदी जू के तट पै।
होयगी प्रलय आज गोपिन के आंसुन तें
ताते ब्रज जाय बैठो झट बंसी बट पै॥3॥

गोपिन बियोग अब सही नहीं जात मोपै
कब लौं निठुर होय मैन बान मारौगे।
'हरीचन्द' आप सों पुकारे कहौं बार बार
बेगही कृपाल अबै गोकुल सिधारौगे॥
कहत निहोरि कर जोरि हम पूछैं जौन
राधा रौन ताको कौन उत्तर बिचारौगे।
आंसुन को नीर जबैं बाढ़ैगो समुद्र तबै
कच्छ रूप धारौगे मच्छ रूप धारौगे॥4॥

राधा श्याम सेवैं सदा बृन्दाबन वास करैं
रहैं निहचिन्त पद आस गुरुवर के।
चाहे धंन धाम न अराम सों है काम
'हरीचन्द जू' भरोसे रहैं नन्दराय घर के॥
एरे नीच धनी हमें तेज तू दिखावै कहा
गज परवाही नाहिं होहिं कबौं खर के।
होइ ले रसाल तू भलेई जंग जीव काज
आसी ना तिहारे ये निवासी कल्पतर के॥5॥

जदपि उंचाई धीरताई गरुआई आदि
एरे गजराज तेरी सबही बड़ाई है।
दान धारा दै दै सदा तोषत सबन नित
हिंसा सों विरत तऊ बल अधिकाई है॥
तासौं 'हरीचन्द' मरजाद पै रहन नीको
काक चुगलन की जासों बनि आई है।
बिरद बढ़ावें ये न दूर कर इन्हैं तेरे
कान की चपलताई भौंर दुखदाई है॥6॥

बात गुरुजन की न आछी लरकाई लागै
भावै खेल कूद में चपलता असीम की।
छोड़त कसालो होय जदपि नरन तऊ
बान नाहिं नीकी मद भांग कै अफीम की॥
अवगुन करी लडू पेड़ा सौं गुनद
'हरीचन्द' हित होय जग औषधि हकीम की।
जौन गुनदाई सोई बात है सुहाई तासों
नीकी मधुराई हू सौं तिक्तताई नीम की॥7॥

जोही बक बार सुनै मोहै सो जन्म भरि
ऐसो ना असर देख्यौ जादू के तमासा मैं।
अरिहु नवावैं सीस छोटे बड़े रीझैं सब
रहत मगन नित पूर होइ आसा मैं॥
देखी ना कबहुं मिसरी से मधुहू मैं ना
रसाल, ईख, दाख मैं न तनिक बतासा मैं।
अमृत मैं पाई ना अधर मैं सुरंगना के
जेती मधुराई भूप सज्जन की भासा मैं॥8॥

केलि भौन बैठी प्यारी सरस सिंगार करै
सौतिन के सब अभिमानै दरत सो।
कंह हार चूरी कर बाजूबंद चन्द आदि
पहिन्यौ अभूषन बियोगहि हरत सो॥
पगपान चांदी को चरन पहिरन लागी
सोभा देखी रम्भा रति गर्बहू गरत सो।
छोड़ अभिमान दास होन काज चन्द आज
नवल बधू के मानो पायन परत सो॥9॥

बृन्दाबन सोभा कछु बरनि न जाय मोपैं
नीर जमुना को जहं सोहै लहरत सो।
फूले फूल चारों ओर लपटै सुगन्ध तैसो
मन्द गन्धवाह जिय तापहि हरत सो॥
चांदनी मैं कमल कली के तरे बार बार
'हरीचन्द' प्रतिबिम्ब नीर माहिं बगरत सो।
मान के मनाइबे को दौरि दौरि प्यारो आज
नवल बधू के मानो पायन परत सो॥10॥

आजु कुंज मन्दिर बिराजे पिय प्यारी दोऊ
दीने गल बाहीं बाढ़े मैन के उमाह में।
हंसि हंसि बातें करें परम प्रमोद भरे
रीझे रूप जाल भींजे गुनन अथाह में॥
कान में कहन मिस बात चतुराई करि
मुख ढिग लाई प्रान प्यारे भरि चाह में।
चूमि कै कपोलन हंसावत हंसत छवि
छावत छबीलो छैल छल के उछाह में॥11॥

रंग भौन पीतम उमंग भरि बैठ्यो आज
साजे रति साज पूर्यो मदन उमाह में।
'हरीचन्द' रीझत रिझावत हंसावत हंसत
रस बाढ़यौ अति प्रेम के प्रवाह में॥
बीरी देन मिस छुए आंगुरी अधर पुनि
चूमै चुपचाप ताहि पान खान चाह में।
लाजहि छुड़ावत छकावत छकत छबि
छावत छबीलो छैल छल के उछाह में॥12॥

आजु लौं न आए जो तो कहा भयो प्यारे याकों
सोच चित नाहिं धारि मति सकुचाइये।
औधि सों उदास ह्वै के गमन तयार यह
ताते अब लाज छोड़ि कृपा करि धाइये॥
'हरीचन्द' ये तो दास आपुही के प्रान कछू
और न कियो तो अब एतो ही निभाइये।
चाहत चलन अकुलाइकै बिसासी इन्हैं
आह प्रान प्यारे जू बिदा तो करि जाइये॥13॥

जोग जग्य जप तप तीरथ तपस्या ब्रत
ध्यान दान साधन समूह कौन काम को।
वेद औ पुरान पढ़ि ज्ञान को निधान भयो
कूर मगरूर पाइ पंडिताई नाम को॥
'हरीचन्द' बात बिना बात को बनाइ हार्यौ
चेरो रह्यो जाम दाम काम धन धाम को।
जानै सब तऊ अनजानै है महान जानै
राम को न जानै ताहि जानिये हराम को॥14॥

सांझ समै साजे साज ग्वाल बाल साथ लिए
मोहन मनहिं हरि आवत हरू हरू।
सीस मोर मुकुट लकुट कर लीने ओढ़े
पीत उपरैना जामैं टंक्यौ चारु गोखरू॥
'हरीचन्द' बेनु को बजावत हैं गावत
सु आवत हैं लिए साथ साथ गाय बाछरू।
नाचत गुवाल मध्य लाजत मनोज लखि
आवैं सखि बाजत गुपाल पाय घूंघरू॥15॥

दासी दरबानन की झिरकी करोर सहीं
दूतिन नचाये नचीं नौ नौ पानि नेजे पर।
दिवस बिताये दौरि इत उत दुरि दुरि
रोइहू सकी न खुलि हाय दुःख सेजे पर॥
'हरीचन्द' प्रानन पै आय बनी सबै भांति
अंग अंग भीनी पीर परी विष रेजे पर।
हाय प्रान प्यारे नेक बिछुरे तिहारे दुःख
कोटिन अंगेजे याही कोमल करेजे पर॥16॥

मेष मायावाद सिंह वादी अतुल धर्म
बृख जयति गुण रासि बल्लभ सुअन।
कलि कुवृश्चिक दुष्ट जीव जीवन मूरि
करम छल मकर निज वाद धनु सर समन॥
गोप कन्या भाव प्रगटि सेवा बिसद
कृष्ण राधा मिथुन भक्ति पथ दृढ़ करन।
हरन जन हिय हरक मीन धुज भय मेटि
दास 'हरीचन्द' हिय कुम्भ हरि रस भरन ॥17॥

कुंभ कुच परस दृग मीन को दरस तजि
तुच्छ सुख मिथुन को हिय बिचारै।
छल मकर छांड़ि सब तानि बैराग धनु
सिंह ह्वै जगत के जाल जारै॥
कृष्ण बृखभानु कन्या सहित भजन करि
कलि कुवृश्चिक समुझि दूर टारै।
छांड़ि अनआस विस्वास हिय अतुल धरि
करम की रेख पर मेख मारै॥18॥

फूलैंगे पलास बन आगि सी लगाइ कूर
कोकिल कुहूकि कल सबद सुनावैगो।
त्यौंही 'हरीचन्द' सबै गावैगो धमार धीर
हरन अबीर बीर सबही उड़ावैगो ॥
सावधान होहु रे बियोगिनी सम्हारि तन
अतन तनक ही में तापन तें तावैगो।
धीरज नसावत बढ़ावत बिरह काम
कहर मचावत बसन्त अब आवैगो ॥19॥

खेलौ मिलि होरी ढोरौ केसर कमोरी फेंको
भरि भरि झोरी लाज जिअ मैं बिचारौ ना।
डारौ सबै रंग संग चंगहू बजाओ गाओ
सबन रिझाओ सरसाओ संक धारौ ना॥
कहत निहोरि कर जोरि 'हरीचन्द' प्यारे
मेरी बिनती है एक हाहा ताहि टारौ ना।
नैन हैं चकोर मुख चन्द तें परैगी ओट
यातें इन आँखिन गुलाल लाल डारौ ना ॥20॥

लोक वेद लाज करि कीजे ना रुखाई एती
द्रवियै पियारे नेकु दया उपजाइ कै।
बिरह बिपति दुःख सहि नहिं जाय
कहि जाय ना कछुक रहौं मन बिलखाइ कै॥
'हरीचन्द' अब तो सहारो नहिं जाय हाय
भुजन बढ़ाय वेग मेरी ओर आइ कै।
बिरद निभाय लीजै मरत जिवाइ लीजै
हा हा प्रान प्यारे धाइ लीजै गर लाइ कै ॥21॥

आजु एक ललना जवाहिर खरीदबे को
आई हुती सुघर सुहाई हाट वारे की।
कर के लिये तैं भए मुक्ता प्रवाल जैसे
गुंजा से लखाने फेरि दीठि दृग तारे की॥
कहै 'हरीचन्द' मोतीचूर से लखात फेरि
हास को विलास बढ़्यो सुखमा कतारे की।
बीजक को मोल घट्यो नफा की चलावै कहा
अकिल हेरानी लखि जौहरी बेचारे की ॥22॥

पद और गीत

प्रगटे द्विजकुल सुखकर चन्द।
भक्ति सुधा रस निस दिन बरषत सब बिधि परम अमन्द ॥
मायावाद परम अंधियारी दूरि कियो दुःख द्वन्द।
भक्त हृदय कुमुदिनि प्रफुलित भई भयो परम आनन्द ॥
काशी नभ महं किरिन प्रकाशी बुध सब नखत सुछन्द।
'हरीचन्द' मन सिन्धु बढ़्यो लखि रसमय मुख सुखकन्द ॥1॥

हरि सिर बांकी बांक बिराजै।
बांको लाल जमुन तट ठाढ़ो बांकी मुरली बाजै ॥
बाकी चपला चमकि रही नव बांको बादल गाजै।
'हरीचन्द' राधा जू की छबि लखि रति मति गति भाजै ॥2॥

सखी री ठाढ़े नन्द किसोर।
वृन्दाबन में मेहा बरसत निसि बीती भयो भोर ॥
नील बसन हरि तन राजत हैं पीत स्वामिनी मोर।
'हरीचन्द' बलि बलि ब्रज नारी सब ब्रज जन मनचोर ॥3॥

हरि को धूप दीप लै कीजै।
षटरस बींजन बिबिध भांति के नित नित भोग धरीजै ॥
दही मलाई घी अरु माखन तातो पै लै दीजै।
'हरीचन्द' राधा माधव छवि देखि बलैया लीजे ॥4॥

सुदामा तेरी फीकी छाक।
मेरी छाक रोहिनी पठई मीठी और सु पाक ॥
बदलाऊ को कोरी रोटी मोको घी की दोनी।
सो सुनि सुबल तोक उठि बैठे मेरी बहुत सलोनी ॥

जैसी तेरी मैया मोटी तैसी मोटी रोटी।
मेरी छाक भली रे भैया जामें रोटी छोटी॥
बोलत राम पतौका लै लै बैठो भोजन कीजै।
बच्यौ बचायो अपनो जूठन 'हरीचन्द' को दीजै॥5॥

भोजन कीनो भानु कुमारी।
ठाढ़े लिए नन्द के नन्दन भरि कै कंचन झारी॥
ललिता लिए सुभग बीरा कर लौंग कपूर सोपारी।
जुग जुग राज करो या ब्रज में 'हरीचन्द' बलिहारी॥6॥

बैठे पिय प्यारी इक संग।
परदा परे बनाती चहुं दिसि बाजत ताल मृदंग॥
धरी अंगीठी स्वच्छ धूम बिन गावत अपने रंग।
'हरीचन्द' बलि बलि सो छबि लखि राधा लिए उछंग॥7॥

अब तौ आय पर्‌यौ चरनन मैं।
जैसा हौं तैसो तुमरोई राखोइगे सरनन मैं॥
गनिका गीध अभीर अजामिल खस जवनादिक तारे।
औरहु जो पापी बहुतेरे भये पाप तें न्यारे॥
सुत बध हेत पूतना आई सब बिधि अघ तें पानी।
जो गति जननीहूं को दुर्लभ सो गति ताको दीनी॥
औरो पतित अनेक उधारे तिनमें मोहुं को जान।
तुमही एक आसरो मेरे यह निहचै करि मान॥
बुरो भलो तुमरोइ कहावत याकी राखौ लाज।
'हरीचन्द' ब्रजचन्द पियारे मत छांड़हु महराज॥8॥

माई री कमल नैन कमल बदन बैठे हैं जमुना तीर।
कमल से करन कमल लिए फेरत सुन्दर स्याम सरीर॥
कमल की कंठ माल ललित ललाम बनी कमल ही को कटि चीर।
कमल के महल कमल के उम्भा भौंरन की जापै भीर॥
सुन्दर कमल फूले लहलहे सोहत ता मधि झलकत नीर।
'हरीचन्द' पद कमल जपत नित भंजन भव भय भीर॥9॥

मंगल मंगल मंगल रूप।
मंगल गिरि गोबर्धन धार्‍यौ मंगल गिरिधर ब्रज के भूप ॥
मंगल मय बृखभानु नन्दिनी श्रीराधा अति रुचिर सुरूप।
मंगल बल्लभ चरन कृपा से 'हरीचन्द' उबर्‍यौ भव कूप ॥10॥

घर तें मिलि चलीं ब्रज नारि।
खसित कवरी नैन घूमत सजे सकल सिंगार ॥
लिए पूजन साज कर मैं कुटिल बिथुरे बार।
कृष्ण गुन गावत सुबिहसत 'हरीचन्द' निहार ॥11॥

जल मैं न्हात हैं ब्रज बाल।
मास अगहन जान उत्तम मिलन को गोपाल ॥
हाथ जोरि सुकहत देविहि देउ पति नन्दलाल।
चीर लै 'हरीचन्द' भागे सुभग स्याम तमाल ॥12॥

खोजत बसन ब्रज की बाल।
निकसि कै सब लेहु छिपि कै कह्यौ स्याम तमाल ॥
सुनत चंचल चित चहूं दिसि चकित निरखत नारि।
मधुर बैननि हिओ धरकत जानि कै बनवारि ॥
कदम पर तैं दरस दीनो गिरिधरन घनश्याम।
अंग अंग अनूप शोभा मथन कोटिक काम॥
सिर मुकुट की लटक चटकत बसन सोभित पीत।
चरन तक बनमाल सोभित मनहुं लपटी प्रीत ॥
फैलि रहि सोभा चहूं दिसि मन लुभावत पास।
नैन तें 'हरीचन्द' के छवि टरत नहिं इक सांस ॥13॥

देखौ सोभित तरु पर नटवर।
मोर मुकुट कटि पीत पिछौरी मुरली हाथ सुघर वर ॥
बोले हरि बाहर ह्वै आओ हे ब्रज बाल चतुर तर।
नांगी होइ जमुन मैं पैठी पूजहु आइ दिवाकर ॥
सुनि पिअ बचन निकसि सब आई दीनो चीर गुंजधर।
पहिरि चीर व्रज नारि नवेली केलि करी कुंजन पर ॥
'हरीचन्द' हरि की यह लीला नहिं पावत बिधि अरु हर।
कोमल मंजु सांवरी मूरति नित्य बिराजौ हिअ पर ॥14॥

राग सारंग

श्रीकृष्ण घर घर बाजत सुनिय बधाई।
श्रीराधा रावल मैं जाई॥
जय जय जय जय जय धुनि माचैं।
आनन्द मगन तहां सब नाचैं॥
नाचत ब्रह्मा शिव अरु शेषा।
नाचत बरुन कुबेर सुरेसा॥
नाचत नारद आदि मुनीसा।
नाचत देव कोटि तैंतीसा॥
नाचत बसु अरु मरुत गनेसा।
नाचत जम रवि ससि सुभकेसा॥
नाचत परशुराम धनु धारे।
नचत राज ऋषि सुर ऋषि न्यारे॥
नाचत चारन किन्नर रच्छा।
नाचत विद्याधर अरु जच्छा॥
नाचत खग मृग अहिगन मच्छा।
नाचत गाय भैंस के बच्छा।
नाचत सुक प्रह्लाद विभीषन।
नचत परीक्षित बलि आनन्द मन॥
नचति सरस्वति बीन बजाई।
माया नाचति अति हरषाई॥
नाचति चम्पकलता बिसाखा।
चन्द्रावलि ललिता रस साखा॥
नचत श्यामदा जसुदा माई।
ब्याही क्वांरी सबै लुगाई॥
नाचत नन्द सुनन्द सुहाए।
महानन्द अति आनन्द छाए॥
नचत तोक बल सुख श्रीदामा।
संग बृषभान गोप सुखधामा॥
नाचत नर नारिन के बृन्दा।
प्रेम मत्त नाचन 'हरीचन्दा' ॥15॥

राग सारंग

ग्वाल गावैं गोपी नाचैं। प्रेम मगन मन आनन्द राचैं॥
भानु राय के राधा जाई। धाये सब सुनि लोग लुगाई॥
माखन दधि घृत दूध लुटावैं। बार बार प्रमुदित उर लावैं॥
ताल पखावज आवज बाजै। दुन्दुभि डोल दमामा गाजै॥
कूदत ग्वाल बाल सब सोहैं। देखि देखि सुर नर मुनि मोहैं॥
भये दूध दधि घृत के पंका। इत उत दौरत फिरत निसंका॥
देत निछावर मनिगन बारी। प्रेमानन्द मगन नर नारी॥
थकित भये सब देव बिमाना। मुदित करत 'हरीचन्द' बखाना॥16॥

सुनौ सखि बाजत है मुरली।
जाके नेकु सुनत ही हिअ में उपजत बिरह कली॥
जड़ सम भए सकल नर खग मृग लागत श्रवन भली।
'हरीचन्द' की मति रति गति सब धारत अधर छली॥17॥

बैरिनि बांसुरी फेरि बजी।
सुनत श्रवन मन थकित भयो अरु मति गति जाति भजी॥
सात सुरन अरु तीन ग्राम सों पिय के हाथ सजी।
'हरीचन्द' औरहु सुधि मोही जबही अधर तजी॥18॥

बंसुरिआ मेरे बैर परी।
छिनहूं रहन देत नहिं घर में मेरी बुद्धि हरी॥
बेनु बंस की यह प्रभुताई बिधि हर सुमति छरी।
'हरीचन्द' मोहन बस कीनो बिरहिन ताप करी॥19॥

सखी हम बंसी क्यौं न भए।
अधर सुधा रस निसु दिनु पीवत प्रीतम रंग रए॥
कबहुंक कर मैं कबहुंक कटि मैं कबहूं अधर धरे।
सब ब्रज जन मन हरत रहत नित कुंजन मांझ खरे॥
देहि बिधाता यह बर मांगौं कीजै ब्रज की धूर।
'हरीचन्द' नैनन में निबसै मोहन रस भर पूर॥20॥

नाचत नवल गिरिधर लाल।
सकल सुखदाता संग गोपी बाल॥
बजत झांझ मृदंग आवज चंग बीना ताल।
जात बलि 'हरीचन्द' छबि लखि सुभग श्याम तमाल॥21॥

भोजन कीजै प्रान पियारी।
भई बड़ी बार हिंडोले झूलत आज भयो श्रम भारी॥
बिंजन मीठो दूध सुहातो कीजै पान दुलारी।
जूठन मांगत द्वार खड़ो है 'हरीचन्द' बलिहारी॥22॥

पनघट बाट घाट रोकत जसुदा जी को बारो।
सांवरे वरन श्याम स्याम ही सज्यौ
है साज इन अंखियन को तारो॥
मुरलि बजावत गीतन गावत करत अचगरी प्यारो।
'हरीचन्द' इंडुरी जमुन मैं बहावत मन ललचावत
नैन नचावत मेरो तन परसत सुन्दर नन्द दुलारो॥23॥

बजन लगी बंसी यार की।
धुनि सुनि ब्रज तिय चकित होत हैं सुधि आवत दिलदार की॥
मीठी तान लेत चित मोह्यो चितवन तीखी यार की।
'हरीचन्द' नैनन में गड़ि गई छबि गुंजन के हार की॥24॥

बजन लगी बंसी कान्ह की।
धुनि सुनि चकित भए खग मृग सब सुधि न रही कछु प्रान की।
मोहे देव गन्धर्व रिसि मुनि भूले गति जु बिमान की।
'हरीचन्द' को मन मोह्यो 'अस बिसरी सुधिहू अपान की'॥25॥

किन चौंकाए पीतम प्यारे।
किन सुख में दुःख दियो जु उठि इत भोरहिं भोर पधारे॥
मेरे जान कूर तमचुर यह तुम कहं सुरत दिवाई।
कै द्विज गन कै चहकि चिरैयन मेरी आस पुजाई॥
सीरी पौन अरुन क़िरिनावलि भए सहाय पियारे।
धन्य भाग जो अबहूं उठि कै आए भवन हमारे॥
आओ चरन पलोटों प्यारे सोइ रहौ स्रम भारी।
'हरीचन्द' सुनि बचन रचन तिय गर लाई बनवारी॥26॥

हम मैं कौन कसर पिय प्यारे।
अजामेल मैं का अवगुन जे नहिं तन मांहि हमारे॥
जानी और पतित के माथे सींग रही द्वै भारी।
ता बिन हमहिं देखि नहिं तारत बृन्दा बिपिन बिहारी॥
जो पापहि करिबै मों जग मैं जीव पतित कहवावै।
तौ हमसों बढ़ि कै कोउ नाहीं को मेरी सरि पावै॥
कछु तो बात होइहै जासों तारत हम कहं नाहीं।
नाहीं तो 'हरीचन्द' पतित पति स्व हम कित बचि जाहीं॥27॥

तरन मैं मोहिं लाभ कछु नाहीं।
तुमरेई हित कहत बात यह गुनि देखहु मन माहीं॥
तुमरेहू जिअ अब लौं बाकी यहै हौस चलि आई।
कै कोउ कठिन अघी पावैं तो तारि लहैं बड़िआई॥
बहुत दिनन की तुमरी इच्छा तेहि पूरन मैं आयो।
करहु सफल सो हम सों बढ़ि कोउ पापी नहिं जग जायो॥
लेहु जोर अजमाह आपुनो दया परिच्छा लीजै।
हे बलबीर अघी 'हरीचन्दहि' हारि पीठि जिनि दीजै॥28॥

तुव जस हमहिं बढ़ावन हारे।
तुव गुन दिव्य तारनादिक के कारन हमहिं पियारे॥
छिपी दया तुव मेरेहि अघ मैं यह निहचै जिय जानौ।
हम बिन तुव जग कछु न बड़ाई यह प्रतीत करि मानौ॥
केवल त्रिभुवन पति फलदायक न्याय करत रहि जैये।
दया निधान पतित पावन प्रभु हमरे हेत कहैये॥
हमहीं कियो कृपाल तुमहिं अघ तारन हमहिं बनायौ।
यह गुन मानि हीर 'हरीचन्दहि' क्यौं न अबहुं अपनायौ॥29॥

हमरी स्वारथ ही की प्रीति।
तुव गुनहू स्वारथ हित गावत मानहु नाथ प्रतीति॥
बक धरमी स्वारथ मूलक सब प्रेम भक्ति की रीति।
'हरीचन्द' ऐसे छलियन कों सकिहौ नाथ न जीति॥30॥

अब हम बदि बदि कै अघ करिहैं।
जब सब पतितन सों बढ़ि जैहैं तब ही भव जल तरिहैं॥
हम जानी यह बानि नाथ की पतितन ही सों प्रीति।

सहजहि कृपा कृपिन दिसि गामिनि यहै आपु की रीति॥
ताही सों अघ किये अनेकन करत जात दिन रात।
तऊ न तरत परत नहिं जानी क्यौं अब लौं हम तात॥
किए करत अघ फेर करैंगे जब लौं जिअ मैं जीअ।
जा सों दृष्टि परे तुमरी इत सुन्दर सांवर पीअ॥
दीन बन्धु प्रनतारति भंजन आरत हरन मुरारि।
दयानिधान कृपन जन वत्सल निज गुन नाम सम्हारि॥
पावन परम पतित हरि हम कहं हीन जानि उठि धाओ।
साधर रहित सहित अघ सत लखि 'हरीचन्दहि' अपनाओ ॥31॥

देखहु मेरी नाथ ढिठाई।
होइ महा अघ रासि रहन हम चहत भगत कहवाई।
कबहूं सुधि तुमरी आवै जो छठे छमाहें भूले।
ताही सों मनि भानि प्रेम अति रहत संत बनि फूले ॥
एक नाम सों कोटि पाप को करन पराछित आवैं।
निज अघ बड़वानलहि एक ही आंसू बूंद बुझावैं ॥
जो व्यापक सर्वज्ञ न्याय रत धरम अधीस मुरारी।
'हरीचन्द' हम छलन चहत तेहि साहस पर बलिहारी ॥32॥

स्याम घन देखहु गौर घटा।
भरी प्रेम रस सुधा बरसि रही छाई छूटि छटा ॥
आपुहि बादर रूप जल भरी आपुहि बिज्जु लटा।
यह अद्भुत लखि सिखी सखीगन नाचत बैठि अटा ॥
हिय हरखावत छबि बरखावत झुकी निकुंज तटा।
'हरीचन्द' चातक ह्वै निसि दिन जाको नाम रटा ॥33॥

आजु बसन्त पंचमी प्यारे आओ हम तुम खेलैं।
चोआ चन्दन छिरकि परसपर अरस परस रंग झेलैं ॥
और कहूं जिनि जाहु पियारे हम तुम मिलि रस रेलैं।
तुम मोहिं देहु आपुनी माला हम निज तुअ उर मेलैं ॥
प्राननाथ कहं कंठ लाइ कै आनन्द सिन्धु सकेलैं।
'हरीचन्द' हिय हौस पुजावै बिरहहि पायन ठेलैं ॥34॥

आई है आजु बसन्त पंचमी चलु पिय पूजन जैये।
आम मंजरी काम चिनौती लै पिय सीस बंधैये॥
अति अनुराग गुलाल लाइ कै नव केसर चरचैये।
उद्दीपन सुगन्ध सोंधे मृगमद कपूर छिरकैये॥
पुष्प गेंदुकन परसि पिया कों तन में काम जगैये।
संचित पंचम ऊंचे सुर सों काम बधाई गैये॥
आलिंगन परिरंभन चुम्बन भाव अनेक दिखैये।
'हरीचन्द' मिलि प्रान पिया सों सरस बसन्त मनैये॥35॥

नव दूलह ब्रजराय लाडिलो नव दुलहिन वृषभानु किसोरी।
श्री बृन्दाबन नवल कुंज में खेलन दोउ मिलि होरी॥
नव सत साजि सिंगार अभूषन नवल नवल संग गोरी।
नवल सेहरो सीस बिराजत नवल बसन तन राचैं॥
त्रिभुवन मोहन जुगल माधुरी कोटि मदन लखि लाजैं।
अति कमनीय मनोहर मूरति ब्रज जन यह रस जानैं॥
'हरीचन्द' ब्रजचन्द राधिका तजिकै किहि उर आनैं॥36॥

कुंज बिहारी हरि संग खेलत कुंज बिहारिनि राधा।
आनन्द भरी सखी संग लीन्हे मेटि बिरह की बाधा॥
अबिर गुलाल मेलि उमगावत रसमय सिन्धु अगाधा।
धूंधर मैं झुकि चूमि अंक भरि मेटति सब जिय साधा॥
कूजति कल मुरली मृदंग संग बाजत धुम किट ताधा।
बृन्दाबन सोभा सुख निरखन सुरपुर लागत आधा॥
मच्यौ खेल बढ़ि रंग परसपर इत गोपी उत कांधा।
'हरीचन्द' राधा माधव कृत जुगल खेल अवराधा॥37॥

सरस सांवरे के कपोल पर बुक्का अधिक विराजै।
मनहु जमुन जल पुंज छीर की छींट अतिहि छबि छाजै॥
नील कंज पै कलित ओस कन झलकत तियनि रिझावै।
प्रिया दीठि कौ चिन्ह किधौं यह ब्रज जुवती मन भावै॥
सूछम रूप सकल ब्रज तिय को बस्यौ कपोलनि आई।
'हरीचन्द' छबि निरखि हरषि हिय बार बार बलि जाई॥38॥

नव बसन्त को आगम सजनी हरि को जनम सुहायो।
गावत कोकिल कीर मोर सी जुवती बजत बधायो॥
बिबिध दान लहि जाचक जन से कलित कुसुम बहु फूले।
गुन गावत धावत बन्दीजन से भंवरे बहु भूले॥
उड़त गुलाल अबीर रंग सो दधि कांदो झरि लाई।
नाचत गारी देत निलज से गावत ताल बजाई॥
टेसू फूलन मिस बृन्दाबन प्रगट्यौ जिय अनुरागै।
केसर सिंचित सम सरसों बन नैन सुखद अति लागै॥
गोप पाग पहिरे सब सोभित गेंदा तरु इक रासी।
बौरे आम सरिस डोलत आनन्द बौरे ब्रजरासी॥
बंस बेलि लहरानी नन्दजू की अति सुख झालरि लाई।
तरुन तमाल स्याम घन उपजे 'हरीचन्द' सुखदाई॥39॥

पिया मनमोहन के संग राधा खेलत फाग।
दोउ दिसि उड़त गुलाल अरगजा दोउन उर अनुराग॥
रंगरेलनि झोरी झेलनि मैं होत दृगनि की लाग।
'हरीचन्द' लखि सो सुख सोभा अपुन सराहत भाग॥40॥

शोभा कैसी छाई।
कोइल कुहुकै भंवर गुंजारै सरस बहार।
फूलि रही सरसों अंखियन लगत सुहाई, देखो॥
बीती सिसिर बसन्तहु आई फिर गई काम दुहाई।
बौरन आम लग्यो मन बौर्‍यो बिरहिन बिरह सताई, देखो॥
जान न दैहौं तुहि ऐसी समय में लैहों लाख बलाई।
'हरीचन्द' मुख चूमि पियरवा गरवां रहिहौं लाई, देखो॥41॥

रिमझिम बरसै पनियां घर नहिं जनियां कैसे बीतै रात।
मोर सोर घनघोर करत हैं सुन्नि सुनि जीअ डरात॥
सूनी सेज देखि पीतम बिनु धीरज जिय न धरात।
पिय 'हरीचन्द' बसे परदेसवां मोर जोबवनां नाहक जात॥42॥

देखो सांवरे के संगवां गोरी झूलैलीं हिंडोर।
जमुना तीर कदम की डारियां पहिरे चीर पटोर॥
बिजुली चमकै पनियां बरसै बादर छौले हो घनघोर।
हरि राधा छबि देखि नयनवां सखी जुड़ैलें मोर॥43॥

सखी कैसी छवि छाई देखो आई बरसात।
मोहिं पिया बिना हाय न भाई बरसात॥
घन गरजत बिरह बढ़ाई बरसात।
हरि मिलत न भई दुखदाई बरसात॥44॥

मथुरा के देसवां से भेजल पियरवां रामा।
हरि हरि ऊधो लाए जोगवा की पाती रे हरी॥
सब मिलि आओ सखी सुनो नई बतियां रामा।
हरि हरि मोहन भए कुबरी के संघाती रे हरी॥
छोड़ि घर बार अब भसम रमाओ रामा।
हरि हरि अब नहिं ऐहैं सुख की राती रे हरी॥
अपने पियरवां अब भए हैं पराए रामा।
हरि हरि सुनत जुड़ाओ अब छाती रे हरी॥45॥

रिमझिम बरसत मेह भींजति मैं तेरे कारन।
खरी अकेली राह देखि रही सूनो लागत गेह॥
आई मिलौ गर लगौ पियारे तपत काम सों देह।
'हरीचन्द' तुम बिनु अति व्याकुल लाग्यौ कठिन सनेह॥46॥

मलार चौताला
(समय कुतुबुद्दीन का राज)

छाई अंधियारी भारी सूझत नहिं राह कहूं
गरजि गरजि बादर से जवन सब डरावैं।
चपला सी हिन्दुन की बुद्धि वीरतादि भई
छिपे बीर तारागन कहूं न दिखावैं॥
सुजस चन्द मन्द भयो कायरता घास बढ़ी
दरिद नदी उमड़ि चली मूरखता पंक चहल पहल पग फंसावैं।
'हरीचन्द' नन्दनन्द गिरिवर धरो आई फेर
हिन्दुन के नैन नीर निस दिन बरसावैं॥47॥

मलारी जलद तिताला
(समय सिकन्दर का पंजाब का युद्ध)

पोरस सर जल रन महं बरसत लखि कै मोरा जियरा हरसत।
बिजुरी सी चमकत तरवारैं, बादर सी तोपैं ललकारैं,
बीच अचल गिरिवर सो छत्री गज चढ़ि देवराज सम सरसत॥

झींगुर से झनकत हैं बखतर, जवन करत दादुर से टरटर
छर्रा उड़त बहुत जुगनू से एक एक कौं तम सम गरसत।
बढ़्यौ बीर रस सिन्धु सुहायो, डिग्यौ न राजा सबन डिगायो,
ऐसो वीर बिलोकि सिकन्दर जाइ मिल्यौ कर सों कर परसत ॥48॥

धनि धनि री सारिस गमनी।
गरि मध पसरी साम मनी सारी रेसम सनि सरिस सनी ॥
निस मनि सम निसि धरि धरि मगमधि परी परी पग मगनि गनी।
निसरी साम साध सानी गान 'हरीचन्द' सरिगम पधनी ॥49॥

चातक को दुःख दूर किया सुख दीनों सबै जग जीवन भारी।
पूरे नदी नद ताल तलैया किए सब भांति किसान सुखारी ॥
सूखेहु रूखन कीने हरे जग पूरो महा मुद ह्वै निज वारी।
हे घन आसिन लौं इतनो करि रीते भएहू बड़ाई तिहारी ॥50॥

जय बृषभानु नन्दिनी राधे मोहन प्रान पियारी।
जय श्री रसिक कुंवर नन्दनन्दन मोहन गिरिवरधारी ॥
जय श्री कुंज नायिका जय जय कीरति कुल उंजियारी।
जय बृन्दाबन चारु चन्द्रमा कोटि मदन मद हारी ॥
जय ब्रज तरुन तरुनि चूड़ामनि सखियन में सुकुमारी।
जयति गोप कुल सीस मुकुटमनि नित्यै सत्य बिहारी ॥
जयति बसन्त जयति बृन्दाबन जयति खेल सुख सुखकारी।
जय अद्भुत जस गावत सुक मुनि 'हरीचन्द' बलिहारी ॥51॥

प्रगटे हरिजू आनन्द करन्त। मनु आई भुव पर ऋतु बसन्त ॥
सब फूले गोप ग्वाल बाल। मनु बौरि रहे बन में रसाल ॥
सब ग्वाल धरे केसरी पाग। मनु डारन पै गेंदा सुभाग ॥
फैली चहुं दिसि हरदी सुरंग। सरसों के खेत फूलन के संग ॥
सब के मन में अति री हुलास। मनु फूलि रहे सुन्दर पलास ॥
देखत सब देव चढ़े बिमान। मनु उड़त बिबिध पक्षी सुजान ॥
नट नाचत गावत करत ख्याल। मनु नाचि रहे बन में मराल॥
गावत मागध बन्दी प्रबीन। मनु बोलि रही कोकिल नवीन ॥
पहिरे नर नारी बसन हार। मनु नये पत्र फल फूल चार ॥
सो सुख लूटत 'हरीचन्द' दास। मनु मत्त भंवर पायो सुबास ॥52॥

महारानी तिहारो घर सुबस बसो!
आजु सुफल ब्रजबास भयो सब घर घर अति आनन्द रसो ॥
कोउ गावत कोउ करत कोलाहल माखन को कोउ लेत गसो।
श्री राधा के प्रकट भये तें या बरसानो सुख बरसो ॥
देत असीस सदा चिर जीवो मोहन को संग लै बिलसो।
'हरीचन्द' आनन्द अति बाढ़्यो सब जिय को दुःख दरद नसो ॥53॥

मन की कासों पीर सुनाऊं।
बकनो बृथा और पतिखोनो सबै चवाई गाऊं ॥
कठिन दरद कोऊ नहिं धरिहै धरिहै उलटो नाऊं।
यह तो जो जानै सोइ क्यों करि प्रकट जनाऊं ॥
रोम रोम प्रति नयन श्रवन मन केहि धुनि रूप लखाऊं।
बिना सुजान सिरोमनि री केहि हियरो काढ़ि दिखाऊं ॥
मरमिन सखिन वियोग दुखित क्यों कहि निज दसा रोआऊं।
'हरीचन्द' पिय मिलै तो पग गहि बाट रोकि समझाऊं ॥54॥

तू केहि चितवत चकित मृगी सी।
केहि ढूंढ़त तेरो कह खोयो क्यों अकुलात लखाति ठगी सी ॥
तन सुधि करि उघरत ही आंचर कौन व्याध तू रहति खगी सी।
उत्तर देत न खरी जकी ज्यों मद पीये कै रैनि जगी सी ॥
चौंकि चौंकि चितवति चारिहु दिसि सपने पिय देखति उमंगी सी।
भूलि बैखरी मृग सावक ज्यों निज दल तजि कहुं दूरि भगी सी ॥
करति न लाज हाट वारन की कुल मर्यादा जाति डगी सी।
'हरीचन्द' ऐसेहि उरझी तो क्यों नहिं डोलत संग लगी सी ॥55॥

श्री गोपीजन बल्लभ सिर पै बिराजमान
अब तोहि कहा डर मूढ़ मन बावरे।
छोड़िकै कुसंग सबै आसरो अनेक अबै
छिन भर हरि पद सीस नित नाव रे ॥
कहत पुकार बार बार सुनि यह राम
क्रोध छोड़ि एक हरि गुन गाव रे।
'हरीचन्द' भटकै अनेक ठौर तिन प्रति
टेक तज वल्लभ सरन अब आव रे ॥56॥

हठीले दे दे मेरी मुंदरी।
हा हा करत हौं पइआं परत हौं गुरुजन मांझ खरी।
'हरीचन्द' तुम चतुर रसीले बहियां पकरी ॥57॥

बिनु सैयां मोको भावै नहिं अंगना।
चन्दा उदय जरावत हमको बिष सो लागत कंगना ॥58॥

पिय की मीठी मीठी बतियां।
श्रवन सुहावत सुधा रस सानी कहत लाइ जब छतियां॥
बोलत ही हिय खचित होत मनु मैन लिखत मन पतियां।
'हरीचन्द' पूरन हिय करनहिं रहत सदा बनि थतियां ॥59॥

तरल तरंगिनि भव भय भंगिनि जय जय देवि गंगे।
जगद हारिनि करुना कारिनि रमा रंग पद रंगे॥
नवल बिमल जल हरत सकल मल पान करत सुखदाई।
पापहि नासत पुन्य प्रकासन जलमय रूप लखाई॥
कच्छप मीन भ्रमरमय सोभित कृपा कमल दल फूले।
देव वधू कुच कुंकुम रंजित लखि छबि सुर नर भूले॥
शिव सिर बासिनि अज कमंडलिनि पतित मंडलिनि तारो।
'हरीचन्द' इक दास जानि कै करुन कटाच्छ निहारो ॥60॥

हरिजू की आवनि मो जिय भावै।
लटकीली रस भरी रंगीली मेरे दृगन सुहावै॥
निज जन दिसि निरखनि दृग भरि कै हंसनि मुरनि मन मानै।
बेनु बजावनि कटि कसि धावनि गावनि करि रस दानै॥
बंक बिलोचन फेरनि हेरनि सब ही चित्त चुरावै।
'हरीचन्द' भूलत नहिं कबहूं नित सुधि अधिक दिवावै ॥61॥

जग बौराना मेरे लेखे।
कोइ असाध कोई साधू बनि धाया करि करि भेखे॥
लड़ि लड़ि मरा बाद बादन में बिनु अपने चख देखे।
धरम करम कर मोटी कीनी और करम की रेखे॥
होय सयाना मूल गंवाया सभी ब्याज के लेखे।
'हरीचन्द' पागल बनि पाया पीतम प्रीति परेखे ॥62॥

हरि जू कों नेह परम फल माई।
मेरे नेम धरम जप संजम बिधि याही में आई॥
यहै लोक परलोक चार फल यहै जगत ठकुराई।
मेरे काम धाम परमारथ स्वारथ यहै सदाई॥
यहै वेद विधि लाज रीति धन हमरे यहै बड़ाई।
'हरीचन्द' बल्लभ की सरबस मैं जिय निधि कर पाई॥63॥

मुसाफिर चेत करो निसि बीत गई चौजाम।
अब चलने की करो तय्यारी सिर पर आई घाम॥
कमर कसो और बस्त्र सम्हारी कर में राखो दाम।
'हरीचन्द' पहिले से चेतो तब पैहो आराम॥64॥

दीपन की बर माला शोभित।
जगमग जोत जगति चारों दिसि सोभा बढ़ी बिसाला॥
घृत करपूर पूर करि राखी मेटि तिमिर की जाला।
'हरीचन्द' बिहरत आनन्द भरि राधा मदन गोपाला॥65॥

हटरी मजि कै राधा रानी मोहन पिय को लै बैठावत।
फूल माल पहिराइ बिबिध बिधि भांति के भोग लगावत॥
बीरी देत आरती करि कै करत निछावर बसन लुटावत।
इक टक निरखि प्रान पिय मुख छबि जीवन जनम सुफल करि पावत॥
जगमग दीप प्रकास बदन दुति रतन अभूषन मिलि मन भावत।
हाट लगाइ प्रेम की मोहन मन के बदले सौंज दिवावत॥
पासा खेलन हंसत हंसावत जानि बूझि पिय अपुन हरावत।
'हरीचन्द' पिय प्यारी मिलि कै एहि बिधि नित त्यौहार मनावत॥66॥

होली डफ की

तेरी अंगिया में चोर बसैं गोरी।
इन चोरन मेरो सरबस लूट्यौ मन लीनो जोरा जोरी॥
छोड़ि देई किन बंद चोलिया पकरैं चोर हम अपनोरी।
'हरीचन्द' इन दोउन मेरी नाहक कीनी चित चोरी॥67॥

देखो बहियां मुरक गई मोरी ऐसी करी बर जोरी।
औचक आय दौरी पछेतें लोक की लाज सब छोरी॥
छीन झपट चटपट मोरी गागर मलि दीनी मुख रोरी।
नहिं मानत कछु बात हमारी कंचुकि को बन्द छोरी॥
एई रस सदा रसिक रहिओ 'हरीचन्द' यह जोरी॥68॥

गजल

गजल

फिर आई फस्ले[1] गुल[2] फिर ज़ख्मदह[3] रह रह के पकते हैं।
मेरे दाग़े ज़िगर[4] पर सूरते लाला[5] लहकते हैं॥
नसीहत है अबस[6] नासेह[7] बयां नाहक ही बकते हैं।
जो बहके दुख्तेरज़[8] से हैं वह कब इनसे बहकते हैं॥
कोई जाकर कहो यह आखिरी पैग़ाम[9] उस बुत से।
अरे आ जा अभी दम तन में बाकी है सिसकते हैं॥
न बोसा लेने देते हैं न लगते हैं गले मेरे।
अभी कम उम्र हैं हर बात पर मुझ से झिझकते हैं॥
व ग़ैरौं को अदा से कत्ल जब बेबाक[10] करते हैं।
तो उसकी तेग़ को हम आह किस हैरत[11] से तकते हैं॥
उड़ा लाये हो यह तर्ज़े सखुन[12] किस से बताओ तो।
दमे तक़रीर[13] गोया बारा में बुलबुल चहकते हैं॥
'रसा' की है तलाशे यार में यह दश्त पैमाई[14]।
कि मिस्ले शीशा मेरे पांव के छाले झलकते हैं॥1॥

ख़याले नावके[15] मिज़गां[16] में बस हम सर पटकते हैं।
हमारे दिल में मुद्दत से ये ख़ारे[17] ग़म खटकते हैं॥
रुखे रौशन पै उसके गेसहु[18] शबगूं[19] लटकते हैं।
क़यामत[20] है मुसाफिर रास्तः दिन को भटकते हैं॥
फुगां[21] करती है बुलबुल याद में गर गुल के ऐ गुलचीं[22]।
सदा इक आह की आती है जब गुंचे[23] चटकते हैं॥
रिहा करता नहीं सैयाद हम को मौसिमे गुल में।
कफ़स[24] में दम जो घबराता है सर दे दे पटकते हैं॥
उड़ा दूंगा 'रसा' मैं धज्जियां दामाने[25] सहरा[26] की।
अबस खारे बियाबां मेरे दामन से अटकते हैं॥2॥

---

1. ऋतु 2. फूल 3. घाव 4. हृदय 5. एक पुष्प 6. व्यर्थ 7. उपदेशक 8. मदिरा 9. सन्देश 10. निडरता से 11. आश्चर्य 12. कहने की शैली 13. बोलना 14. जंगल में भटकना 15. छोटा वाण 16. पलक 17. कांटा 18. बाल 19. काली 20. प्रलय 21. आह 22. पुष्प चुननेवाला 23. कलियां 24. पिंजड़ा 25. अंचल 26. जंगल।

ग़ज़ब है सुरमः देकर आज वह बाहर निकलते हैं।
अभी से कुछ दिले मुजतर[1] पर अपने तीर चलते हैं॥
ज़रा देखो तो ऐ अहले सखुन[2] ज़ोरे सनाअत[3] को।
नई बन्दिश है मजमूं नूर के सांचे में ढलते हैं॥
बुरा हो इश्क का यह हाल है अब तेरी फुर्क़त[4] में।
कि चश्मे खूं चकां[5] से लख्ते[6] दिल पैहम[7] निकलते हैं॥
हिला देंगे अभी ऐ संगे दिल तेरे कलेजे को।
हमारी आहे आतिश बार[8] से पत्थर पिघलते हैं॥
तेरा उभरा हुआ सीना जो हम को याद आता है।
तो ऐ रश्के परी पहरों कफे अफ़सोस मलते हैं॥
किसी पहलू नहीं चैन आता है उश्शाक़ को तेरे।
तड़पते हैं फुगां करते हैं औ करवट बदलते हैं॥
'रसा' हाजत नहीं कुछ रौशनी की कुंजे मर्क़द[9] में।
बजाये शमा[10] यां दाग़े जिगर हर वक्त जलते हैं॥3॥

अजब जोबन है गुल पर आमदे फ़स्ले बहारी है।
शिताब आ साक़िया गुलरू[11] कि तेरी यादगारी है॥
रिहा करता है सैयादे सितमगर मौसिमे गुल में।
असीराने[12] कफ़स लो तुमसे अब रुख़सत हमारी है॥
किसी पहलू नहीं आराम आता तेरे आशिक़ को।
दिले मुज़तर तड़पता है निहायत बेकरारी है॥
सफ़ाई देखते ही दिल फड़क जाता है बिस्मिल का।
अरे जल्लाद तेरे तेग़ की क्या आबदारी है॥
दिला[13] अब तो फ़िराक़े यार में यह हाल है अपना।
कि सर ज़ानू पर है औ खून दह आंखों से जारी है॥
इलाही खैर कीजो कुछ अभी से दिल धड़कता है।
सुना है मंजिले औवल की पहली रात भारी है॥
'रसा' महवे[14] फ़साहत[15] दोस्त क्या दुश्मन भी हैं सारे।
जमाने में तेरे तर्ज़े सखुन की यादगारी है॥4॥

---

1. घबड़ाया हुआ 2. कविगण 3. व्यंजना 4. बिरह 5. टपकने वाले 6. टुकड़ा 7. सदा 8. अग्निवर्षक 9. कब्र 10. दीपक 11. पुष्पमुखी 12. कैदियों 13. हे हृदय 14. मुग्ध 15. अच्छी व्यंजनाशक्ति।

आ गई सर पर क़ज़ा लो सारा सामां रह गया ॥
ऐ फ़लक क्या क्या हमारे दिल में अरमां[1] रह गया।
बागबां है चार दिन की बाग़े आलम में बहार।
फूल सब मुरझा गये खाली बियाबां रह गया ॥
इतना एहसां और कर लिल्लाह[2] ऐ दस्ते जनूं[3]।
बाक़ी गर्दन में फ़कत तारे गिरेबां[4] रह गया ॥
याद आई जब तुम्हारे रूए रौशन की चमक।
मैं सरासर सूरते आईना हैरां रह गया ॥
ले चले दो फूल भी इस बाग़े आलम से न हम।
वक्त रेहलत[5] हैफ[6] है खाली हि दामां रह गया ॥
मर गये हम पर न आये तुम खबर को ऐ सनम[7]।
हौसला सब दिल का दिल ही में मेरी जां रह गया ॥
नातवानी ने दिखाया ज़ोर अपना ऐ 'रसा'।
सूरते नक़्शे क़दम मैं बस नुमायां रह गया ॥5॥

फिर मुझे लिखना जो वस्फ़े[8] रूए जानां हो गया।
वाजिब इस जां पर क़लम को सर झुकाना हो गया ॥
सरकशी इतनी नहीं लाज़िम है ओ जुल्फे सियाह।
बस के तारीक[9] अपनी आंखों में जमाना हो गया ॥
ध्यान आया जिस घड़ी उसके दहाने[10] तंग का।
हो गया दम बन्द मुश्किल लब हिलाना हो गया ॥
ऐ अजल[11] जल्दी रिहाई दे, न बस ताख़ीर कर।
खानए तन[12] भी मुझे अब क़ैदखाना हो गया ॥
आज तक आईना वश हैरान है इस फ़िक्र में।
कब यहां आया सिकन्दर कब रवाना हो गया ॥
दौलते दुनिया न काम आएगी कुछ भी बाद मर्ग[13]।
है ज़मी[14] में खाक क़ारूं का ख़ज़ाना हो गया ॥
बात करने में जो लब उसके हुए ज़ेरो ज़बर[15]।
एक सायत में तहो बाला[16] ज़माना हो गया ॥

---

1. इच्छा 2. ईश्वर के लिए 3. पागलपन 4. कंठी 5. महायात्रा 6. शोक 7. प्रिय 8. गुण 9. अन्धकार 10. मुख 11. मृत्यु 12. शरीर रूपी गृह 13. मृत्यु। 14. एक धनाढ्य 15. नीचे ऊपर, टेढ़े 16. अस्त व्यस्त।

देख ली रफ़्तार उस गुल की चमन में क्या सबा।
सर्व[1] को मुश्किल कदम आगे बढ़ाना हो गया॥
जान दी आखिर क़फ़स में अंदलीबे[2] जार[3] ने।
मुज्दः[4] है सैयाद वीरां आशियाना[5] हो गया॥
ज़िन्दः कर देता है एक दम में य ईसाए नफ़स[6]।
खेल उसको गोया मुरदे को जिलाना हो गया॥
तौसने[7] उमरे रवां[8] दम भर नहीं रुकता 'रसा'।
हर नफ़स गोया उसे एक ताज़ियाना हो गया॥6॥

दिल मेरा तीरे सितमगर का निशाना हो गया।
आफ़ते जां मेरे हक़ में दिल लगाना हो गया॥
हो गया लाग़र[9] जो उस लैली अदा के इश्क में।
मिसले मजनूं हाल मेरा भी फ़िसाना[10] हो गया॥
खाकसारी[11] ने दिखाया बाद मुर्दन[12] भी उरूज[13]।
आसमां तुरबत[14] पर मेरे शामियाना हो गया॥
ख्वाबे गफ़लत से ज़रा देखो तो कब चौंके हैं हम।
क़ाफिला मुल्के अदम[15] को जब रवाना हो गया॥
फसले गुल में भी रिहाई की न कुछ सूरत हुई।
कैद में सैयाद मुझको एक ज़माना हो गया॥
दिल जलाया सूरते परवाना जब से इश्क़ में।
फ़र्ज तब से शमअ पर आंसू बहाना हो गया॥
आज तक ऐ दिल जवाबे खत न भेजा यार ने।
नामाबर को भी गये कितना जमाना हो गया॥
पासे रुसवाई[16] से देखो पास आ सकते नहीं।
रात आई नींद का तुमको बहाना हो गया॥
हो परेशानी सरेमू[17] भी न जुल्फ़े यार को।
इसलिए मेरा दिले सद चाक[18] शाना[19] हो गया॥
बाद मुर्दन कौन आता है खबर को ऐ 'रसा'।
खत्म बस कुंजे लहद[20] तक दोस्ताना हो गया॥7॥

---

1. एक पौधा, सरो 2. बुलबुल 3. दुखी 4. खुशी 5. घोसला 6. प्राण 7. घोड़ा 8. चलता हुआ 9. कृश 10. कहानी 11. नम्रता 12. मरने के 13. उत्कर्ष 14. कब्र 15. परलोक 16. कलंक के विचार 17. बाल बराबर भी 18. सौ टुकड़े 19. कंघी 20. कब्र।

जहां देखो वहां मौजूद मेरा कृष्ण प्यारा है।
उसी का सब है जलवा[1] जो जहां में आशकारा[2] है॥
भला मख़लूक़[3] ख़ालिक़ की सिफ़त समझे कहां कुदरत।
इसी से नेति नेति ऐ यार वेदों ने पुकारा है॥
न कुछ चारा चला लाचार चारों हारकर बैठे।
बिचारे वेद ने प्यारे बहुत तुमको बिचारा है॥
जो कुछ कहते हैं हम यह भी तेरा जलवा है एक वरनः।
किसे ताक़त जो मुंह खोले यहां हर शख़्स हारा है॥
तेरा दम भरते हैं हिन्दू अगर नाकूस[4] बजता है।
तुझे ही शेख़ ने प्यारे अज़ां देकर पुकारा है॥
जो बुत पत्थर हैं तो काबे में क्या जुज़ खाको पत्थर है।
बहुत भूला है वह इस फ़र्क़ में सर जिसने मारा है॥
न होते जलवः गर तुम तो यह गिरजा कब का गिर जाता।
निसारा[5] को भी तो आखिर तुम्हारा ही सहारा है॥
तुम्हारा नूर है हर शै में कह[6] से कोह[7] तक प्यारे।
इसी से कह के हर हर तुमको हिन्दू ने पुकारा है॥
गुनह बख़्शो रसाई दो 'रसा' को अपने कदमों तक।
बुरा है या भला है जैसा है प्यारे तुम्हारा है॥8॥

उठा के नाज़ से दामन भला किधर को चले।
इधर तो देखिये बहरे खुदा[8] किधर को चले॥
मेरी निगाहों में दोनों जहां हुए तारीक।
य आप खोल के जुल्फ़े दोता[9] किधर को चले॥
अभी तो आए हो जल्दी कहां है जाने की।
उठो न पहलू से ठहरो ज़रा किधर को चले॥
खफ़ा हो किसपै भवें क्यों चढ़ी हैं खैर तो है।
ये आप तेग़ पै धर कर जिला किधर को चले॥
मुसाफ़िराने अदम कुछ तो अज़ीज़ों से कहो।
अभी तो बैठे थे है है भला किधर को चले॥
चढ़ी हैं त्योरियां कुछ है मिज़ह[10] भी जुम्बिश[11] में।
खुदा ही जाने ये तेग़े अदा किधर को चले॥

---

1. शोभा 2. प्रकट 3. सृष्टि के जीव 4. शंख 5. ईसाई 6. तिनका 7. पर्वत 8. ईश्वर के लिए 9. दोनों ओर 10. पलक 11. हिलना।

गया जो मैं कहीं भूले से उनके कूचे में।
तो हंस के कहने लगे हैं 'रसा' किधर को चले ॥9॥

असीराने कफ़स सहने चमन को याद करते हैं।
भला बुलबुल प यों भी जुल्म ऐ सैयाद करते हैं ॥
कमर का तेरे जिस दम नक़्श हम ईजाद करते हैं।
तो जां फर्मान[1] आकर मानियो बिहज़ाद[2] करते हैं ॥
पसे मुर्दन तो रहने दे ज़मी पर ऐ सबा मुझको।
कि मिट्टी खाकसारों[3] की नहीं बरबाद करते हैं ॥
दमे रफ़्तार आती है सदा पाज़ेब से तेरी।
लहद के ख़िस्तगां उट्ठो मसीहा याद करते हैं ॥
कफ़स में अब तो ऐ सैयाद अपना दिल तड़पता है।
बहार आई है मुरग़ाने चमन फ़रियाद करते हैं ॥[4]
बता दे ऐ नसीमे सुबह शायद मर गया मजनूं।
ये किसके फूल उठते हैं जो गुल फ़रयाद करते हैं ॥
मसल सच है वशर[5] की क़द्रे नेअमत[6] बाद होती है।
सुना है आज तक हमको बहुत वह याद करते हैं ॥
लगाया बागबां ने ज़ख्म कारी दिल प बुलबुल के ।
गरेबां चाक गुंचे हैं तो गुल फ़रयाद करते हैं ॥
'रसा' आगे न लिख अब हाल अपनी बेक़रारी का।
बरंगे गुंचः लब[7] मज़मू तेरे फ़रयाद करते हैं ॥10॥[8]

दिल आतिशे हिजरां से जलाना नहीं अच्छा।
अय शोलःरुखो[9] आग लगाना नहीं अच्छा ॥
किस गुल के तसव्वर[10] में है ए लालः जिगर खूं।
यह दाग़ कलेजे प उठाना नहीं अच्छा ॥
आया है अयादत[11] को मसीहा सरे बालीं[12]।
ऐ मर्ग,[13] ठहर जा अभी आना नहीं अच्छा ॥

---

1. एक पुष्प 2. तर्क तथा बाधा 3. दीनों
4. पाठान्तर—बहार आई है फिर शैरे गुलिस्तां याद करते हैं।
   क़फ़स में सिर को टकराते हैं औ फरियाद करते हैं॥
5. मनुष्य 6. भलाई 7. कली के समान बन्द ओठ 8. एक प्रति में निम्नलिखित शेर अधिक है—
   मज़ामीने बुलन्द अपनी पहुंच जायंगी गर्दू तक।
   तर्ज़े नौ जमीं में शैर हम आबाद करते हैं॥
9. प्रकाशमान मुखवाले 10. सोच 11. रुग्णावस्था में हाल पूछने जाना 12. सिरहाना 13. मृत्यु।

सीने दे शबे वस्ले गरीबां है अभी से।
ऐ मुर्गे सहर[1] शोर मचाना नहीं अच्छा॥
तुम जाते हो क्या जान मेरी जाती है साहब।
अय जाने जहां आपका जाना नहीं अच्छा॥
आ जा शबे फुर्क़त में क़सम तुझको खुदा की।
ऐ मौत बस अब देर लगाना नहीं अच्छा॥
पहुंचा दे सबा कूचए जानां में पसे मर्ग।
जंगल में मेरी खाक उड़ाना नहीं अच्छा॥
आ जाय न दिल आपका भी और किसी पर।
देखो मेरी जां आंख लड़ाना नहीं अच्छा॥
कर दूंगा अभी हश्र[2] बपा देखियो जल्लाद।
धब्बा य मेरे खूं का छुड़ाना नहीं अच्छा॥
ऐ फ़ाख्तः उस सर्वसिही[3] क़द का हूं शैदा।
कू कू की सदा मुझको सुनाना नहीं अच्छा॥
होगा हरेक आह से महशर[4] बपा 'रसा'।
आशिक़ का तेरे होश में आना नहीं अच्छा॥11॥

रहै न एक भी बेदादगर[5] सितम[6] बाकी।
रुके न हाथ अभी तक है दम में दम बाकी॥
उठा दुई का जो परदा हमारी आंखों से।
तो काबे में भी रहा बस वही सनम बाकी॥
बुला लो बालीं प हसरत न दिल में मेरे रहे।
अभी तलक तो है तन में हमारे दम बाकी॥
लहद प आएंगे और फूल भी उठाएंगे।
ये रंज है कि न उस वक्त होंगे हम बाकी॥
यह चार दिन के तमाशे हैं आह दुनिया के।
रहा जहां में सिकन्दर न औ' न जम[7] बाकी॥
तुम आओ तार से मरक़द प हम क़दम चूमें।
फ़क़त यही है तमन्ना तेरी क़सम बाकी॥
'रसा' ये रंज उठाया फ़िराक़ में तेरे।
रहे जहां में न आख़िर को आह हम बाकी॥12॥

---

1. सवेरे का मुर्गा 2. प्रलय 3. सरो पौधे के समान सीधा 4. प्रलय 5. अत्याचारी 6. कष्ट, अत्याचार 7. ईरान का एक राजा जमशेद।

बैठे जो शाम से तेरे दर पर सहर हुई।
अफ़सोस अय क़मर[1] कि न मुतलक़ ख़बर हुई॥
अरमाने वस्ल यों ही रहा सो गए नसीब।
जब आंख खुल गई तो यकायक सहर हुई॥
दिल आशिकों के छिद गए तिरछी निगाह से।
मिज़गां[2] की नोक दुशमने जानी जिगर हुई॥
पछताता हूं कि आंख अबस तुम से लड़ गई।
बरछी हमारे हक में तुम्हारी नज़र हुई॥
छानी कहां न खाक, न पाया कहीं तुम्हें।
मिट्टी मेरी खराब अबस दर बदर हुई॥
ध्यान आ गया जो शाम को उस जुल्फ का 'रसा'।
उलझन में सारी रात हमारी बसर हुई॥13॥

बाल बिखेरे आज परी तुरबत पर मेरे आएगी।
मौत भी मेरी एक तमाशा आलम को दिखलाएगी॥
मह्वे अदा हो जाऊंगा गर वस्ल में वह शरमाएगी।
बारे खुदाया दिल की हसरत कैसे फिर बर आएगी॥
काहीदा[3] ऐसा हूं मैं भी ढूंढ़ा कर न पाएगी।
मेरी ख़ातिर मौत भी मेरी बरसों सर टकराएगी॥
इश्के बुतां में जब दिल उलझा दीन कहां इसलाम कहां।
वाअज़[4] काली जुल्फ़ की उल्फत सब को राम बनाएगी॥
चंगा होगा जब न मरीजे काकुले शबगूं हज़रत से।
आपकी उलफत ईसा की सब अजमत आज मिटाएगी॥
ब्रह्म अयादत भी जो आएंगे न हमारे बालीं पर।
बरसों मेरे दिल की हसरत सिर पर खाक उड़ाएगी॥
देखूंगा मिहराबे हरम याद आएगी अबरूर सनम।
मेरे जाने से मसजिद भी बुतख़ाना बन जाएगी॥
ग़ाफ़िल इतना हुस्न प गर्रा[5] ध्यान किधर है तौबा कर।
आख़िर इक दिन सूरत यह सब मिट्टी में मिल जाएगी॥
आरिफ़[6] जो हैं उनके हैं बस रंज-व राहत एक 'रसा'।
जैसे वह गुज़री है यह भी किसी तरह निभ जाएगी॥14॥

---

1. चन्द्र 2. पलकें 3. कृश 4. उपदेशक 5. घमंड 6. ज्ञानी।

फसादे दुनिया मिटा चुके हैं हुसूले हस्ती उठा चुके हैं।
खुदाई अपने में पा चुके हैं मुझे गले वह लगा चुके हैं॥
नहीं नज़ाकत से हम में ताकत उठाएं जो नाज़े हूरे जन्नत[1]।
कि नाज़ें शमशीर पुर नज़ाकत हम अपने सर पर उठा चुके हैं॥
नजात हो या सज़ा हो मेरी मिले जहन्नुम[2] कि पाऊं जन्नत।
हम अब तो उनके कदम प अपना गुनह भरा सिर झुका चुके हैं॥
नहीं जबां में है इतनी ताक़त जो शुक्र लाएं बजा हम उनका।
कि दामे हस्ती[3] से मुझको अपने इक हाथ में वह छुड़ा चुके हैं॥
वजूद[4] से हम अदम में आकर मकीं[5] हुए ला मकां[6] के जाकर।
हम अपने को उनकी तेग़ खाकर मिटा मिटाकर बना चुके हैं॥
यही है अदना सी इक अदा से जिन्होंने बरहम[7] है की खुदाई।
यही है अकसर क़ज़ा के जिनसे फरिश्ते भी जक[8] उठा चुके हैं॥
य कह दो बस मौत से हो रुखसत क्यों नाहक आई है उसकी शामत।
कि दर तलक वह मसीहे खसलत मेरी अयादत को आ चुके हैं॥
जो बात माने तो ऐन शफ़कत न माने तो ऐन हुस्ने खूबी।
'रसा' भला हमको दख्ल क्या अब हम अपनी हालत सुना चुके हैं॥15॥

दश्त पैमाई का गर कम्द मुकर्रर होगा।
हर सरे खार पए आबिला[9] नश्तर होगा॥
मैकदे से तेरा दीवाना जो बाहर होगा।
एक में शीश और इक हाथ में सागर होगा॥
हलकए चश्मे सनम लिख के ये कहना है क़लम।
बस कि मरकज़ से कदम अपना न बाहर होगा॥
दिल न देना कभी इन संग दिलों को यारो।
चूर होवेगा जो शीशा तहे पत्थर होगा॥
देख लेगा व अगर रुख की तजल्ली[10] तेरे।
आईना ख़ानए मायूसी[11] में शशदर[12] होगा॥
चाक कर डालूंगा दामने कफ़न वहशत से।
आस्तीं से न मेरा हाथ जो बाहर होगा॥
ऐ 'रसा' जैसा है बर गशता[13] जमाना हमसे।
ऐसा बरगश्ता किसी का न मुकद्दर[14] होगा॥16॥

---

1. स्वर्ग 2. नर्क 3. गौरव 4. अस्तित्व, संसार 5. गृहवाला 6. बिना गृह का 7. व्यस्त 8. पराजय 9. फफोला 10. प्रकाश 11. नैराश्य 12. चकित 13. फिरा हुआ 14. भाग्य।

नींद आती ही नहीं धड़के की बस आवाज़ से।
तंग आया हूं मैं इस पुरसोज[1] दिल के साज़ से॥
दिल पिसा जाता है उनकी चाल के अन्दाज़ से।
हाथ में दामन लिए आते हैं वह किस नाज़ से॥
सैंकड़ों मुरदे जिलाए ओ मसीहा नाज़ से।
मौत शर्मिंदा हुई क्या क्या तेरे ऐजाज[2] से॥
बागबां कुंजे क़फस में मुद्दतों से हूं असीर।
अब खुले पर भी तो मैं वाक़िफ नहीं परवाज़[3] से॥
कब्र में राहत से सोए थे न था महशर का खौफ़।
बाज़ आए ए मसीहा हम तेरे ऐजाज से॥
वाए गफ़लत भी नहीं होती कि दम भर चैन हो।
चौंक पड़ता हूं शिकस्तः होश की आवाज़ से॥
नाज़े माशूक़ाना से खाली नहीं है कोई बात।
मेरे लाशे को उठाए हैं व किस अन्दाज़ से॥
कब्र में सोए हैं महशर का नहीं खटका 'रसा'।
चौंकने वाले हैं कब हम सूर[4] की आवाज़ से॥17॥

चाह जिसकी थी वही यूसुफे सानी निकला॥18॥

बख्त[5] ने फिर मुझे इस साल दिखाई होली।
सोजे फुरक़त ज़ेबस मुझको न भाई होली॥
शोलए इश्क भड़कता है तो कहता हूं 'रसा'।
दिल जलाने के लिए आह यह आई होली॥19॥

बुते काफ़िर जो तू मुझसे खफ़ा है।
नहीं कुछ ख़ौफ़ मेरा भी खुदा है॥
यह दर परदः सितारों की सदा है।
गली कूचः में गर कहिए बजा है॥
रक़ीबों[6] में वह होंगे सुर्खरू आज।
हमारे कत्ल का बीड़ा लिया है॥
यही है तार उस मुतरिब[7] का हर रोज़।
नया इक राग लाकर छेड़ता है॥

---

1. जलन से भरा 2. अद्भुत कार्य 3. उड़ान 4. प्रलय के समय बजने वाला नरसिंहा बाजा
5. भाग्य 6. प्रतिद्वन्द्वी 7. गायक।

शुनीदः कै बुवद मानिन्द दीदः।[1]
तुझे देखा है हूरों को सुना है॥
पहुंचता हूं जो मैं हर रोज़ जाकर।
तो कहते हैं गज़ब तू भी 'रसा' है॥20॥

रहमत का तेरे उम्मीदवार आया हूं।
मुंह ढांपे कफन में शर्मसार[2] आया हूं॥
आने न दिया बारे[3] गुनह ने पैदल।
ताबूत[4] में कांधों पै सवार आया हूं॥21॥

चम्पई गरचे दुपट्टा है तो गुलदार है बेल।
सैरे गुलशन को चले आते हैं गुलशन होकर॥22॥

अल्ला रे लुत्फे ज़बह कि कहता हूं बार बार।
कातिल गले से खींच न खंजर की धार को॥
तड़पा न कर दे ज़बह मुझे बानिए जफ़ा[5]।
क़ुरबां गले प फेर दे खंजर की धार को॥
दे दो जवाब साफ कि किस्सः तमाम हो।
दौड़ाते किसलिए हो इस उम्मीदवार को॥
होगी कशिश वहां से पस अज मर्ग जो 'रसा'।
पाएगी गर हवा मेरे मुश्ते गुबार[6] को॥23॥

[ये चार शैर कलक की गजल 'बाद अज़ फना तो रहने दे इस खाकसार को' पर कहे गये हैं।]

[बुलबुल को बांधिए तो रगे गुल से बांधिए–तरह]

जुल्फ़ों को लेके हाथ में कहने लगा वह शोख।
गर दिल को बांधना हो तो काकुल से बांधिए॥24॥

जब कभी उसकी याद पड़ती है।
सोस[7] आकर जिगर में पड़ती है॥
यादे मिज़गां जो मुझको है पैहम[8]।
बरछी सी एक जिगर में गड़ती है॥

---

1. सुना हुआ क्या देखे हुए के समान हो सकता है 2. लज्जित 3. बोझ, 4. शव रखने का सन्दूक 5. अत्याचारी 6. एक मुट्ठी धूल 7. अफसोस 8. सर्वदा।

वक्ते तहरीर यह जमीने सखुन।
बात में आसमां पै चढ़ती है॥

है जो मद्दे नज़र विसाल उसे।
दम बदम मुझ पै आंख पड़ती है॥
वस्ल में भी नहीं है चैन मुझे।
ख्वाहिशे दिल जियादः बढ़ती है॥
है अजब उसके सुलहो जंग में लुत्फ़।
दिल मिला जब तो आंख लड़ती है॥
देके आंखों में सुरमा वह बोले।
शान पर आज तेग़ चढ़ती है॥
सैरे गुलशन जो करता है वह माह।
बस गुलिस्तां पै ओस पड़ती है॥
बस्ल होगा नसीब आज 'रसा'।
चेहरए गुल पै ओस पड़ती है॥
सौ करो एक भी नहीं बनती।
आह तकदीर जब बिगड़ती है॥25॥

बर्कदम[1] क्यों हाथ में शमशीर है।
आज किस के कत्ल की तदबीर है॥
खाक सर पर पांओं में ज़ंजीर है।
तेरे चलते यह मेरी तौक़ीर[2] है॥
पूछते हो क्या मेरी जरदी का हाल।
साहबो यह इश्क़ कि तासीर है॥
कूचए लैली में कहते हैं मुझे।
मिन अअन[3] मजनूं की बस तस्वीर है॥
दस्तो पा[4] सर्द आशिकों के होते हैं।
घर तेरा क्या खत्तए[5] कश्मीर है॥
पीसता है माहरूओं[6] को सदा।
कैसी कजफहमी[7] पै चरखे मीर है॥
पूछा मैंने एक दिन उस माह से।
मेह्र तुझको कुछ भी ऐ वेपीर है॥

---

1. विद्युत् रूपा, 2. सम्मान, 3. ठीक वैसा ही 4. हाथ पैर 5. देश, 6. चन्द्रमुखी, 7. उल्टी समझ

रूठता है दम बदम बेवजह क्यों।
आशिकों की क्या यही तौक़ीर है॥
है कसम तुझ को हमारे सर की जां।
क्या खता थी जिसकी यह ताज़ीर[1] है॥
बोला हंस कर चुपके बस जाओ चले।
क्या तुम्हारी मौत दामनगीर है॥
फूल झड़ते हैं जबां से बात में।
मिस्ले बुलबुल यार की तक़दीर है॥
फर्शे रह[2] करता हूं आंख उसके लिए।
खाके पा हक में मेरे अक़सीर है॥
ख्वाब में उस गुल को देखा ऐ 'रसा'।
बस्ल होगा उसकी ये ताबीर[3] है॥
ऐ 'रसा' मिटती नहीं जुज़ ताब मर्ग।
खते क़िस्मत की अजब तहरीर है ॥26॥

है कमां अबरू तो मिजगां तीर है।
आफते जां गमजए[4] बे पीर है ॥27॥

---

1. दंड 2. राह मार्ग 3. स्वप्न का फल 4. हावभाव।

समस्या पूर्ति

समस्या पूर्ति

[समस्या–क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी]

कहा भयो मद है पीयौ कै गहिरी विजया छानी सी।
लाल लाल दृग केस बिथुरि रहे सूरत भई निवानी सी॥
झुक झुक झूमत अल बल बोलत चाल मस्त बौरानी सी।
काके रंग रगी ऐसी क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥1॥

छूट्यौ केस खुलौ है अंचल पीक छाप पहिचानी सी।
टूटी माल हार अरु पहुंची कुसुम माल कुम्हिलानी सी॥
नैन लाल अधरा रस चूसे सूरतिहू अलसानी सी।
जानी जानी नेकु लाजु क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥2॥

बन बन पात पात करि डोलत बोलत कोकिल बानी सी।
मूंदि मूंदि दृग खोलि खोलि कै कहूं रहत ठहरानी सी॥
उझकति झुकति जकी सी सब छिन मोहन हाथ बिकानी सी।
धीरज धरि बलि गई अरी क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥3॥

मौन रहत कबहूं कबहूं तू बोलत अलबल बानी सी।
ठगी उगी रस पगा श्याम रट लगी कबहुं अकुलानी सी॥
तन की सुधि गुरु जन की भै बिनु 'हरीचन्द' रस सानी सी।
काके मद माती डोलत क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥4॥

उफनत तक चुअत चहुं दिसि तें सींचत पथ कहं पानी सी।
बार बार नन्द द्वार जाइ के ठाढ़ी रहत बिकानी सी॥
तन की सुधि नहिं उघरत आंचर डोलत पथहि भुलानी सी।
मुख सों कहत गुपालहि लै क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी॥5॥

नैहर सासुर बाहर भीतर सब थल की ह्वै रानी सी।
लाज मेटि अनकही भई अपवादनहू न डरानी सी ॥
कुलहि कलंक लगाय भली बिधि होइ गई मन मानी सी।
अबहुं तौ कछु सम्हरि अरी क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी ॥6॥

बिलखि बिलखि मति रोवै प्यारी ह्वै कै दुःख बौरानी सी।
सीस धुनत क्यों अभरन तोरत फारत अंचल तानी सी ॥
गहिरी लेत उसास भरी दुःख भई मीन बिनु पानी सी।
कहुं बैठत कहुं उठि धावत क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी ॥7॥

आजु कुंज मैं कौन मिल्यौ जिन लूटी सब रस खानी सी।
चूसे अधर अंगूर दोउ गालन पै प्रगट निसानी सी ॥
बिथुरे बार सिंगार हार 'हरिचन्द' माल कुम्हिलानी सी।
धर धर छतिया क्यौं धरकत क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी ॥8॥

बंसी झुकि झुकि कहा बजावत झूठहिं अंचल तानी सी।
आपुहि आपु हंसत अरु रीझत यह गति अलख लखानी सी ॥
मेरे गल भुज दै दै लटकत मुख चूमत मन मानी सी।
नाम रटत अपुनो राधे क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी ॥9॥

नन्द भवन नहिं भानु भवन यह इत क्यौं रहत लजानी सी।
घूंघट तानि बिलोकत केहि तू हिय हरषित रस सानी सी ॥
मैं ही एक अरी तू केहि इत आदर देत बिकानी सी।
सेज सजत क्यौं आंगन मैं क्यौं प्यारी फिरत दिवानी सी ॥10॥

[समस्या–'रोम मोम रूस फूस है' की पूर्ति]

जीते हैं गुराई सों अनेक अरमनी
जरमनी जरमनी मन रहत मसूस है।
चित्र लिखे चीनी भए पारसी सिपारसी से
संग लगे डोलैं अंगरेज से जलूस है॥
भौंह के हिलाये सों बिलात तेरे चेरे ऐसे
हेरे नित नित फरासीस और प्रूस है।
जदपि कहावैं बल भारी पै तिहारी सौंह
प्यारी तेरे आगे रोम मोम रूस फूस है ॥1॥
हबसी गुलाम भये देखि कारे केस तेरे
चीनी लखि गालन कों फोरत फनूस हैं।
मिसरी सुनत मीठे बोल बिना दाम बिके
तन की सुबास रहे मलय भसूस हैं ॥
फरासीसी मद्य सीसी ढारि मतवारे भए
नैन पेखि काफरी हू होइ रहे हूस हैं।
बरमा हिये के काम धरमा चलायो प्यारी
तेरे रूप आगे रोम मोम रूस फूस हैं ॥2॥

भाजे से फिरत शत्रु इत उत दौरि दौरि
दबत जमानी जाको जोहत जलूस है।
ब्रह्म अस्त्र ऐसी तोपैं तोपैं एकै बार फौज
विमल बन्दूक गोली दारू कारतूस है॥
ऐसो कौन जग में बिलोकि सकै जौन इन्हैं
देखि बल बैरी दल रहत मसूस है।
प्रबल प्रताप भारतेश्वरी तिहारैं क्रोध
ज्वाल काल आगे रोम मोम रूस फूस है ॥3॥

जनम लियो है जाने मरनो अवस ताहि
राजा है के रंक है चतुर है कि हूस है।
'हरीचन्द' एक हरी नाम जग सांचो जानौ
बाकी सब झूठो चार दिन को जलूस है ॥
काफरी कपूर चरबी से अरबी हैं अंगरेज
आदि काठ तृन तूल प्रूस भूस है।
साकला सी सकल सकल काल ज्वाल आगे
हिन्दू घृत बिन्दू रोम मोम रूस फूस है ॥4॥

[समस्या–'राम बिना बेकाम सभी' की पूर्ति]

राजपाट हय गज रथ प्यादे बहु बिधि अन धन धाम सभी।
हीरा मोती पन्ना मानिक कनक मुकुट उर दाम सभी॥
खाना पीना नाच तमाशा लाख ऐश आराम सभी।
जैसे बिंजन निमक बिना त्यों राम बिना बे काम सभी॥1॥

इक्कीस तोप सलामी की औअल दर्जे का काम सभी।
क्रास बाथ इस्टार हुए महराज बहादुर नाम सभी॥
जग जस पाया मुलक कमाया किया ऐश आराम सभी।
सार न जाना रहा भुलाना राम बिना बे काम सभी॥2॥

यह जग मोह जाल की फांसी झूठे सुत धन धाम सभी।
नाटक इसमें मर पच के करते हैं जीस्त हराम सभी॥
जब तक दम में दम था झगड़े टंटे रहे तमाम सभी।
आंख मुंदी तब यह सूझा है राम बिना बे काम सभी॥3॥

ब्रह्म ज्ञान बिचार ध्यान धारना व प्रानायाम सभी।
षट दरसन की बक बक जप तप साधन आठो जाम सभी॥
योग सिद्धि बैराग भक्ति पूजा पत्री परनाम सभी।
प्रेम बिना सब व्यर्थ कृष्ण बलराम बिना बे काम सभी॥4॥

[समस्या–'ग्रीष्मै प्यारे हिमन्त बनाइये' की पूर्ति]

कीजिए राई सुमेर सरीखी सुमेरहि खीझि कै धूर मिलाइये।
राव सो रंक भिखारी सों भूपति सिंह सों स्वान के पाय पुजाइये॥
दीजिए सींग ससै 'हरिचन्द जू' सागर नीर मिठाइ बहाइये।
कीजै हिमन्तहि ग्रीषम भीषम ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये॥1॥

पूरन ब्रह्म समर्थ सबै जिय मैं जोइ आवै सोई दरसाइये।
फेरिये सूरज चन्द गती छिन मैं जग लाख बनाइ नसाइये॥
होनी न होनी सबै करिये 'हरीचन्द जू' सीस की लीक मिटाइये।
कीजै हिमन्तहि ग्रीषम भीषम ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये॥2॥

प्रेम दै आपुनो मेटि दुखै जुग नैनन आंसू प्रवाह बहाइये।
लोभ पदारथ चारहू को अरु लोक को मोह दया कै छुड़ाइये॥
आपुनो ही 'हरीचन्द जू' रूप दसो दिसि नैनन को दरसाइये।
भारी भवातप ताप तपे हिय ग्रीष्मै प्यारे हिमन्त बनाइये॥3॥

दीनहूं पै कबौं कीजे कृपा उजरी कुटी मेरिहू आइ बसाइये।
राखिए मान गरीबनीहू को दयानिधि नाम की लाज निभाइये॥
दै अधरामृत पान पिया 'हरीचन्द जू' काम को ताप मिटाइये।
मेरे दुखै सुखे कीजिये पीतम ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइय॥4॥

भोज मरे अरु विक्रमहू किनको अब रोई कै काव्य सुनाइये।
भाषा भई उरदू जग की अब तो इन ग्रंथन नीर डुबाइये॥
राजा भये सब स्वारथ पीन अमीरहू हीन किन्हें दरसाइये।
नाहक देनी समस्या अबै यह "ग्रीषमै प्यारे हिमन्त बनाइये" ॥5॥

[समस्या–'जीवौ सदा विक्टोरिया रानी' की पूर्ति]

राज मैं जाके सबै सुखसाज सुकीरति जासु न जात बखानी।
जो सुन्यो श्रीरघुनन्दन के समै नैनन सों सोई रीति लखानी॥
तार औ रेल की चाल करी 'हरिचन्द' जो लोगन को सुखदानी।
यातें कहैं सबरे मिलिकैं चिरजीवौ सदा विक्टोरिया रानी॥1॥
दीन भये बलहीन भये धन छीन भये सब बुद्धि हिरानी।
ऐसी न चाहिए आपुके राज प्रजागन ज्यों मछरी बिनु पानी॥
या रुज की तुम ही अहो बैद कहै तेहिं तें 'हरिचन्द' बखानी।
टिक्कस देहु छुड़ाइ कहैं सब जीवौ सदा विक्टोरिया रानी॥2॥

[समस्या–'बीस रवि दस ससि संग ही उदय भये' की पूर्ति]

ठाढ़े नन्दनन्दन कलिंदजा निकट लिये
दोऊ ओर ब्रजबाल कंठ में भुजा दये।
अंग अंग माधुरी निकाई सुकुमारताई
पूरन प्रकास परिहास सुख सों छये॥
'हरीचन्द' धारि उर सेत रतनारे नख
ध्यान करि प्रेम भरि मूंदि दृग द्वै लये।
करत प्रकास मेरे हिय उदयाचल पैं
बीस रवि दस ससि संग ही उदै भये ॥1॥

देख्यो आजु आली ब्रजराज के कुंअर जू कों
राधा लिये संग ठाढ़े अति सुखमा छये।
प्रीति रीति पूरे धरे दोऊ हाथ कुच पर
एक टक देखत चकोर नैन ह्वै गये॥
'हरीचन्द' आंगुरीन मानिक अंगूठी द्वै द्वै
तैसे नख सेत मिलि सोभा बेलि से बये।
मानौं आजु प्रात उदयाचल सिखर पर
बीस रवि दस ससि संग ही उदै भये॥2॥

आजु जलकेलि मैं बिलोकी ब्रजबाल दस
खेलैं जमुना मैं सोभा कमल मनो बये।
जलन उछारैं छोड़ैं हाथ सों फुहारैं गहि
भुजा कंठ डारै महामोद मन मैं लये॥
कर मेहदी सों रंगे तैसे मुखमंडल
दिखात 'हरीचन्द' सब अंग जल मैं दये।
मानौं नभ छोड़ि अनहोनी कर होनी आजु
बीस रवि दस ससि संग ही उदै भये॥3॥

ताप अधिकात कबौं जिय सियरात आली
जब तें पियारे मनमोहन जुदै भये।
कबहुं प्रकास औ अंधेरो सो कबहुं हिय
जल खिलत खिलत कबहुं कबहुं मुदै भये॥
प्यारे 'हरीचन्द' के बियोग सों प्रथम दसा
दूजी ध्यान मांझ मानो संगम खुदै भये।
ताप दूनो ताहू पैं न जानि परै मोहि कहा
बीस रवि दस ससि संग ही उदै भये॥4॥

भारतीय भाषा की अन्य कविताएं

गुजराती भाषा की कविता

आवो आवो भारत राज भारत जोवाने।
दई दरसन दुख एनूं जनम जनमनो खोवाने॥
ज्यम चन्द्रोदक जोई चकोर जिय राचे रे।
ज्यम नव घन आतां लखी मोर बन नाचे रे॥
तेहूं भारतवासी जनो तवागम चाहे जी।
लखि मुख ससि राजकुमार मुदित मन माहे जी॥
आवो आवो प्यारा राजकुमार नई दऊं जावा ने।
बाला भारत मां सुख बसो सनेह बधावा ने॥
नई भियूं प्रानप्रिय आजे अरज करूं बोली ने।
देऊं आज लखाड़ी तमने हिरदो खोली ने॥
म्हारा भारतवासी अनाथ नाथ बने नाथे जी।
तेथी कोंवर बिराजे अइंज अम्हारे साथे जी॥
ज्यारे जवन जलधि जले प्रथीराज रबि नास्यौ रे।
आजे त्यार थकी नहीं भारत तेज प्रकास्यौ रे॥
ते तुव पद नख ससि किरिणे बाणो वायो जी।
फरो फर्‍यो भाग्य भारत नां आनन्द छायो जी॥
वाला दीठ्यौ नव मुखचंद कामणगारा नैणा वे।
वारी श्रवण पड्या श्रवणे तब अमृत वैणा वे॥
आजे उमग्यौ आनन्द रस सुख चारे पासे छायो छे।
तेथी तब जस परम पवित्र कवि ये गायो छे॥

[शिवनन्दन सहाय की पुस्तक 'हरिश्चन्द्र' से साभार]

पंजाबी भाषा की कविता

तैंडा होरी खेल मैंडे जीउन भांवदा।
तू वारी कोई दी सरम न करंदा बुरी वे गालियां गांवदा ॥
पाय अबीर नैण बिच माडे बंसी निलज बजांवदा।
हरीचन्द मैनू लगी लड़ तैंड़ी तू नहिं आसहुं पुरांवदा॥

बेदरदो बे लड़वे लगी तैंड़ें नाल।
बेपरवाही बारीजी तू मेरा साहबा असी इथों बिरह बिहाला।
चाहन वाले दो फिकर न तुझ नू गल्लों दा ज्वाब न खाल।
हरीचन्द तदबीर न सुझदी आशक बैतलमाल।

[शिवनन्दन सहाय की पुस्तक 'हरिश्चन्द्र' से साभार]

मारवाड़ी भाषा की कविता–धमार देश

साडूला मूहारो भीजै न डारौ रंग ॥ध्रुव॥
मतिनाखी गुलाल आंखिन में सीखा छौकिन रौढ़ ॥1॥
नाम लेइ मूहारो मति गावो गारी संग बजाइ कै चंग।
हरीचन्द मद मात्यो मोहन मति लागो मह्यरे संग ॥2॥

वेगा आवो प्यारा बनवारी मूहारी अघोर।
दीन बचन सुनतां उठि धावौ नेकन करहु अवार ॥1॥
कृपासिंधु छाड़ौ निठुराई अपनो विरद संभारी।
थाने जग दीन दयाल कहै छै क्यों मूहारी सुरति विसारी ॥2॥
प्राणदान दीजै मोहि प्यारा छौंछूं दासी थारी।
क्यों नहि दीन वैण सुनो लालन कौन चूक छ मूहारी।
तलफैं प्रान रहैं नहिं तन मै बिरह विथा बढ़ी भारी।
हरीचन्द गहि बांह उवारौ तुम तो चतुर विहारी॥3॥

स्यामाजी देखो आवे छे थारो रसियो।
कछु गातो कछु सैन बतातो कछु लखि कै हंसियो ॥
मोर मकुट वाके सीस सोहणों पीताम्बर कटि कसियो।
हरीचन्द पिय प्रेम रंगीलौ थांके मन बसियो ॥

[शिवनन्दन सहाय की पुस्तक 'हरिश्चन्द्र' से साभार]

बंगभाषा की कविता

प्राननाथ कि बले छिले।
ए दारुण ज्वाला हृदे केन गो दिले॥
हृदय माझते राखिब्र तोमाय।
सतत बलिते नाथ हे आमाय॥
से सब कथन रहिल कोथाय।
भेबे देख प्रान कि करि ले॥

हेरिव सतत सखी कालई बरन।
मने पड़े जेन सदा से नील रतन॥
मृगमद दिब्र सिरे कज्जल नयन तोरे।
नित्य नील वर्ण चीरे आच्छादिब तन॥
हरिश्चन्द्र मुखे सदा कृष्ण नामे आछे साधा।
से पेमे अंतर बांधा कृष्ण पदे आछे मन॥

आमाय भालो बेशे आर तोमार काज नाई।
तुमि अन्य प्रानज्वले आमाय भालो बास बोले॥
सदा भासि आंखि जले दृढ़े नाना दुःख पाई॥
बिदाय दाबो गुनमनी सजब एबे संन्यासिनी।
इब नाथ बिदेशिनी मुख पथे दिया छाई॥
हरिश्चन्द्र प्रानधन चन्द्रिकार निवेदन।
बासना एमन मन विदेशेते प्रान जाइ॥

निभृत निशीथे सई ओ बांशी बाजिल॥
पूरित करिया वन भेदिया गगन घन।
जकां पाईया समीरन मधुर रवे गाजिल।

स्तम्भित प्रवाह नीर ताड़ित मयूर कीर।
झंकारियां तरुगण एक तान साजिल॥
हरिश्चन्द्र श्यामबांशी स्वर कामदेव फांसी।
कूलबधू सुनियाइ आर्यपथ त्याजिल॥

[शिवनन्दन सहाय की पुस्तक 'हरिश्चन्द्र' से साभार]

❑❑❑

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

जन्म : सितम्बर 1850 ई., बनारस के एक समृद्ध वैश्य परिवार में।

शिक्षा : घर और क्वींस कालेज बनारस में स्कूली शिक्षा का सिलसिला अचानक टूट गया लेकिन पढ़ने-लिखने का सिलसिला जारी रहा। शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' जैसे मशहूर व्यक्ति से उन्होंने अंगरेजी पढ़ी।

अल्पायु में पिता की मृत्यु और विवाह से पारिवारिक जिम्मेदारियों में इजाफा पर उनके निर्वहन में पूरी तरह असफल।

अद्भुत साहित्यिक प्रतिभा के धनी, नाटक, काव्य, निबन्ध, कहानी, यात्रावृत्तान्त, अनुवाद आदि अनेक विधाओं में विविध विषयों पर प्रचुर साहित्य का लेखन।

कविवचन सुधा, बालाबोधिनी, हरिश्चन्द्र मैगजीन, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका आदि पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ और विकास। धर्म और ईश-भक्ति के प्रचारार्थ अनेक तरह के प्रयास।

निधन : 6 जनवरी, सन 1885 ई.

ओमप्रकाश सिंह

जन्म : सन 1958 ई., उ.प्र. में जौनपुर जिले के एक गांव टड़वां में।

शिक्षा : आरम्भिक शिक्षा गांव और आसपास के विद्यालयों में। उच्च शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में। अक्टू. 1988 से नवम्बर 1990 तक एनसीईआरटी में कार्य। दिसम्बर 1990 ई. से ज.ने.वि०, नयी दिल्ली के भारतीय भाषा केन्द्र में अध्यापन और शोध।

रचनाएं : + आदिकाल एवं मध्यकाल के प्रमुख हिन्दी कवि + प्रेमचन्द के कथा साहित्य में हिन्दू-मुसलिम सम्बन्ध + प्रेमचन्दोत्तर कथा साहित्य और साम्प्रदायिक समस्याएं + आधुनिक काव्यधारा : विचार और दृष्टि + चिन्तामणि भाग-4 (सम्पादन)

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ग्रन्थावली (आठ भागों में सम्पादन)